नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला—१३

कवि जोधराज कृत

हम्मीररासो

संपादक

श्यामसुंदरदास बी० ए०

काशी-नागरीप्रचारिणी सभा की ओर से

प्रकाशक

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

द्वितीय संस्करण] १९२९

भूमिका

यह ऐतिहासिक काव्य कवि जोधराज का बनाया हुआ है। नीमराणा के राजा चंद्रभान की आज्ञा से जोधराज ने इस काव्य को संवत् १७८५ में रचा। इसमें रणथंभौर के वीरशिरोमणि महाराज हम्मीरदेव का चरित्र और विशेष कर अल्लाउद्दीन के साथ उनके विग्रह का वर्णन है। भारतवर्ष के इतिहास में हम्मीर का नाम प्रसिद्ध है और उसके चरित्र को पढ़ और सुनकर लोग अब तक मनोमुग्ध और उत्साहित होते हैं। कवियों और लेखकों ने भी उसके चरित्र के गान करने में कोई बात उठा नहीं रखी है। अब तक कविता में इस विषय के तीन ग्रंथ प्राप्त हुए हैं। एक तो चंद्रशेखर का हम्मीर-हठ है जो छपकर प्रकाशित हो चुका है। दूसरा ग्वाल कवि का ग्रंथ है जो अब तक छपा नहीं, परंतु जिसकी कविता-शैली भी ऐसी उत्तम नहीं है। तीसरा ग्रंथ यह जोधराज का है। और भी अनेक ग्रंथ इस विषय के होंगे इसमें कोई संदेह नहीं। गद्य में भी अनेक ग्रंथ लिखे गए हैं परंतु दुःख के साथ कहना पड़ता है कि उनमें ऐतिहासिक खोज का बहुत कुछ अभाव देख पड़ता है। राजपूताने में दो हम्मीर हो गए हैं। एक उदयपुर के और दूसरे रणथंभौर के। लेखकों ने प्रायः दोनों के चरित्रों को मिलाकर एक कर डाला है और इसी

भ्रम में पड़कर इतिहास के विरुद्ध बातें लिख डाली हैं। जिन हम्मीर की इतनी प्रसिद्धि है और जिनके गुण गाने से अब तक लोग उत्साहित होते हैं तथा जिन्होंने अलाउद्दीन से रार ठानी थी वे रणथंभौर के चौहान हम्मीर थे, न कि उदयपुर के सिसौदिया हम्मीर। अतएव इस काव्य के विषय में कुछ लिखने के पहले अथवा इसके संबंध की ऐतिहासिक बातों का उल्लेख करने के पहले मैं जोधराज़ कृत इस काव्य में चौहान हम्मीर का जो कुछ चरित्र वर्णन किया गया है उसे दे देना उचित समझता हूँ। इस सारांश के लिये, जो आगे दिया जाता है, मैं कुँअर कन्हैया जी का अनुगृहीत हूँ।

भारतवर्ष के अंतिम सम्राट् भृगु[1]कुलोत्पन्न महाराज पृथ्वीराज के वंश में चंद्रभान नाम का एक वीर पुरुष था। यद्यपि नीमराणा अब एक छोटी सी रियासत अलवर राज्य के अन्तर्गत है, पर यहाँ के अधिपति चौहानों के मुकुटमणि माने जाते हैं। ये राजा अपने को महाराज पृथ्वीराज का वंशधर बताते हैं। महाराज चंद्रभान को उनके वीरत्व, दातृत्व, औदार्य्य, पराक्रम, बुद्धिमत्ता और सर्वप्रियता के कारण लोग राठ[2] का महाराज कहा करते थे, और सब लोग उसी

---

(१) चहुआनों के भृगुवंशी होने का वर्णन आगे इसी पुस्तक में है।

(२) पुस्तक में मूल पाठ "राठ पतिशाह" है जिसका अर्थ "राठ का बादशाह" होता है। 'राठ' उस भूभाग का नाम है जो अलवर और जयपुर राज्य के बीच में है और जहां नीमराणा राज्य स्थित है।

भाँति उसका आदर भी करते थे। उक्त चंद्रभान के दरबार में आदि-गौड़-कुलोत्पन्न अत्रिगोत्रीय ब्राह्मण, बालकृष्ण का पुत्र जोधराज था। इस वंश के लोग बिडवरिया राव कहे जाते थे।

एक समय चंद्रभान ने जोधराज से हम्मीररासो के सुनने की इच्छा प्रगट की और कहा कि इस काव्य में महाराज हम्मीर की वंशावली, उनका अलाउद्दीन से वैर, उनकी वीरता और उनके युद्धकौशल इत्यादि का यथाक्रम संक्षेप में वर्णन होना चाहिए। तब जोधराज ने इस काव्य "हम्मीर-रासो" की रचना की।

सृष्टिरचना—प्रथम कल्प के आदि में संसार रूपी उपवन के जीव निर्जीव प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष सब पदार्थ वीर्य्यस्वरूप से उस परम प्रभु परमात्मा अनादि जगदीश्वर के स्वरूप में स्थित थे और वह प्रभु योगनिद्रा में निमग्न था। एक समय वह अपनी शक्ति का आप ज्ञान करके निद्रा से उठा और उसके इच्छा करते ही माया उत्पन्न हुई। जिस समय शेष-शायी भगवान् के नाभि-कमल से ब्रह्मा उत्पन्न हुए वह वाराह कल्प का आदि था।

मानवसृष्टि—जलज से उत्पन्न हुआ ब्रह्मा बहुत समय पर्य्यंत इसी विचार में मुग्ध रहा कि मैं क्या करूँ। इसी प्रकार जब बहुत समय बीत गया तब उसे आपसे आप अनुभव हुआ कि तप करके सृष्टि उत्पन्न करनी चाहिए और उसने

वैसा ही किया। पहले तो उसने अप, तेज, वायु, पृथ्वी, आकाशादि पंच महातत्वों की रचना की, तदनंतर बीज वृक्षादि जड़ वस्तुओं की रचना करके उसने सनक, सनंदन, सनत्कुमारादि ४ पुत्र रचकर मानव जाति की वृद्धि करनी चाही; किंतु जब सनकादि कुमारों ने अखंड ब्रह्मचर्य्य धारण कर सांसारिक विषय भोगादि से अरुचि प्रगट की तब ब्रह्मा ने उसी प्रकार से अन्यान्य मुनिवरों को उत्पन्न किया। ब्रह्मा के मन से मरीचि, कानों से पुलस्त्य, नाभि से पुलह, हाथों से कृतब्रह्म, त्वचा से नारद, छाया से कर्दम, पीठ से अर्द्धम, कंठ से धर्म्म और ओष्ठ से लोम ऋषि उत्पन्न हुए। इन्हीं ऋषियों से मनुष्यों की भिन्न भिन्न जातियों की वृद्धि हुई।

चन्द्रवंश और सूर्य्यवंश—ब्रह्मा के पुत्र मरीचि के १३ स्त्रियाँ थीं उनमें से एक का नाम कला था। कला के कश्यप और धर्म दो पुत्र हुए। अत्रि ऋषि के तीन पुत्र हुए जिनमें से बड़े का नाम सोम था और कनिष्ठ का नाम दुर्वासा। उक्त सोम का बुध और बुध का पुरूरवा नाम से पुत्र हुआ। इस पुरूरवा के ६ पुत्र हुए जिनसे चंद्रवंशियों के ६ कुल प्रख्यात हैं।

इसी प्रकार भृगु मुनि से चहुआन क्षत्रियों का वंश चला जिसका वर्णन इस प्रकार से है कि भृगु मुनि की पहली स्त्री से धाता और विधाता नाम के उनके दो पुत्र हुए। भृगु की दूसरी स्त्री से दैत्यगुरु का और च्यवन ऋषि का जन्म

हुआ। च्यवन के ऋचीक, इनके जमदग्नि और जमदग्नि के परशुराम नामक क्षात्र-वृत्तिधारी पुत्र हुए जिन्होंने क्षात्र धर्म्म से च्युत विषयलोलुप सहस्रों क्षात्रय राजाओं को मारकर उनका वंश पर्य्यंत नाश कर डाला और उनके रुधिर से पितृ-देवताओं का तर्पण किया। इस प्रकार परशुराम के पराक्रम से प्रसन्न हुए पितृ देवताओं ने परशुराम को शांत होकर तप करने की आज्ञा दी।

आबूराज पर्व्वत पर यज्ञ और चहुआनों की उत्पत्ति—इधर सृष्टि के शासनकर्ता क्षत्रियों के समूल उन्मूल हो जाने से जब परस्पर अन्याय आचरण के कारण प्रजा पीड़ित हो उठी और दैत्य और राक्षसों के उपद्रव से ऋषि लोगों के यज्ञादि कर्मों में भी विघ्न पड़ने लगा तब ऋषिगण संसार की रक्षा और उसके उचित शासन के निमित्त फिर क्षत्रियों के उत्पन्न करने की अभिलाषा से यज्ञ करना विचार-कर अर्बुदगिरि अर्थात् आबू के पहाड़ पर गए। वहाँ पर सब ऋषियों ने शिव की आराधना की। तब शिव ने भी वहाँ आकर मुनिवरों की प्रार्थना स्वीकार की और वे उक्त पर्व्वत पर अचल रूप से विराजमान हुए; अस्तु तब मुनि-वरों ने भी सुंदर वेदिका रचकर यज्ञ-कर्म्म आरंभ किया। इस यज्ञ में द्वैपायन, वशिष्ठ, लोम, दालिभ, जैमिनि, हर्षन, धौम्य, भृगु, घटयोनि, कौशिक, वत्स, मुद्गल, उद्दालक, मातंग, पुलह, अत्रि, गौतम, गर्ग, सांडिल्य, भरद्वाज, जावालि, मार-

र्कंडेय, जरतकाल, जाजुल्य, पराशर, च्यवन और पिप्पलाद आदि मुनियों का समारोह हुआ था। इसके अतिरिक्त शिव और ब्रह्मा भी स्वयं वहाँ उपस्थित थे। इस प्रकार समुचित प्रकार से जिस समय यज्ञ हो रहा था और वेदिका से उत्पन्न हुई अग्निशिखाएँ आकाश को स्पर्श कर रही थीं, उसी समय उस वेदिका में से चालुक्य, प्रमार और परिहार क्षत्रिय क्रम से निकले। इन्होंने मुनिवरों की आज्ञा पा दैत्यों से युद्ध भी किया; किंतु उन्हें परास्त करने में वे समर्थ न हो सके। तब ऋषियों ने उक्त यज्ञस्थल को त्यागकर उसी पहाड़ पर नैऋत दिशा में दूसरा अग्निकुंड निर्माण किया। इस बेर के यज्ञ में ब्रह्मा ने ब्रह्मा, भृगु मुनि ने होता, वशिष्ठ ने आचार्य्य, वत्स ने ऋत्विक् और परशुराम ने यजमान का कार्य्य संपादन किया। निदान इस यज्ञ से जो अग्नि के समान तेजवाला पुरुष उत्पन्न हुआ उसका नाम चहुआन जी हुआ; क्योंकि इनके चार बाहु थे और प्रत्येक बाहु खड्ग, धनुष, शूल और चक्र इन चारों आयुधों को धारण किए हुए था। इस पुरुष ने ऋषिवरों के अशीर्वाद और निज कुलदेवी आशापूरा के प्रसाद से संपूर्ण दैत्यों का वध कर ऋषि और देवताओं को प्रसन्न किया।

कथामुख—इस प्रकार यज्ञकुंड से उत्पन्न चहुआन जी के वंश में बहुत दिनों पीछे विक्रमी १२ वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध के आरंभ में राव जैतराव चहुआन जन्मे। एक समय जैतराव जंगल में शिकार खेलने गए। वहाँ उन्होंने एक बलवान् बाराह

को देखकर उसके पीछे घोड़ा डाल दिया, बहुत दूर निकल जाने पर एक गंभीर वन में बाराह तो अदृष्ट हो गया और राव जी संगी साथियों से छूटकर चकितचित्त अकेले उस वन में भटकते फिरने लगे। ऐसे समय में वहाँ उन्हें एक ऋषि का आश्रम देख पड़ा तो वहाँ जाकर वे देखते क्या हैं कि परम रमणीय पर्णकुटी में कुशासन पर बैठे हुए पद्म ऋषि जी ध्यान में मग्न हैं। राव जी ने उनके निकट जाकर साष्टांग प्रणाम किया और उनके दर्शन से अपने को कृतार्थ जानकर वे उनकी स्तुति करने लगे। निदान तब ऋषि ने भी प्रसन्न होकर राव जी को आशीर्वाद दिया, और कुछ दिवस पर्य्यंत उसी स्थान पर रहकर उन्हें शिवार्चन करने का भी उपदेश दिया। राव जी ने वैसा ही करके शिव को प्रसन्न किया। तब ऋषि ने पुनः आज्ञा की कि राव जी तुम यहाँ एक गढ़ भी निर्माण करो। अस्तु राव जी ने उसी समय अपने मित्र, मंत्री और सुहृदों को बुलाकर संवत् ११1० वैशाख सुदी अक्षय तृतीया, शनिवार को पाँच घटी सूर्य्योदय में रणथंभगढ़ की नीव डाली और उसी के उपस्थ में एक रमणीक नगर भी बसाया।

ऋषि का तप भंग होना—उस पर्वतावेष्टित प्रच्छन्न एवं दृढ़ दुर्ग की रम्य भूमि को पद्म ऋषि ने राव जी से अपने रहने के लिये माँग लिया और उसी में रहकर वे तप करने लगे। जब उनके उग्र एवं पवित्र तप की सूचना इंद्र को मिली तब उस भीरुहृदय इंद्र ने अपने श्रीभ्रष्ट होने के भय से आशं-

कित होकर पद्म ऋषि का तप भ्रष्ट करना चाहा और इसलिये उसने इस कर्म के लिये कुकर्मी मकरकेतु को उपयुक्त जानकर उसे आज्ञा दी कि हे मित्र तू अपने सच्चे सहचर वसंत के सहित जाकर रणथंभ गढ़ में तप करते हुए तेजस्वी पद्म ऋषि की श्री नष्ट कर दे। इस प्रकार इंद्र से उत्तेजित किया हुआ कामदेव अपनी सहकारी षड् ऋतुओं सहित रणथंभ गढ़ में ध्यानमग्न पद्म ऋषि के जाग्रत करने की इच्छा से ऋतुओं के उपचार का प्रयोग करने लगा, किंतु ग्रीष्म का प्रचंड मार्तंड और मलय समीर, पावस के पपीहा, शरद की स्वच्छ चाँदनी, शिशिर के दुशाला और हेमंत के पाला को पराजित करनेवाले मसाले भी जब ऋषि की समाधि भंग न कर सके, तब उस कुसुमायुध ने साक्षात् शिव को रसिक बनानेवाले वसंत का प्रयोग किया अर्थात् उस जनशून्य वन में नाना प्रकार के पुष्प प्रस्फुटित हुए और उन पर मधुप गुंजार करते हुए आनंद से मकरंद पान करने लगे, जहाँ तहाँ नाना वर्ण के पक्षी-सावक कलरव करते हुए कल्लोल करने लगे। उसी समय इंद्र द्वारा प्रेरित अप्सराओं ने आकर नृत्य और गान करते हुए उस शिखर-शैली को इंद्र का अखाड़ा बना दिया, तब उपयुक्त समय जान-कर कामदेव ने भी अपने शरों से मुनिवर के शरीर को बेध दिया। इस प्रकार समाधि भंग होने पर जब मुनि ने आँख उठाकर देखा तो देखते क्या हैं कि उस रणथंभ के अभेद्य दुर्ग में शांत रस को पराजित कर शृंगार रस ने पूर्णतया अपना

अधिकार जमा लिया है और एक चंद्रमुखी मृगलोचनी, गयंद-गामिनी, नवयौवना सम्मुख खड़ी हुई मुनि की ओर कटाक्ष सहित देख रही है। यह देखकर पद्म ऋषि के शरीर से शांति और तप इस प्रकार बिदा हो गए जैसे तुषारतोषित वृक्ष सुकोमल पल्लवों का त्याग देते हैं, एवं जिस प्रकार फल के लगते ही वृक्षगण सूखे पुष्प का अनादर कर देते हैं। इस प्रकार कामातुर होकर पद्म ऋषि समाधि छोड़ सुंदरी का आलिंगन करने को उत्सुक हो उठे। उधर उस रमणी ने भी ऋषि के मनोगत भाव को जानकर उनका हाथ पकड़ लिया और तब वे दोनों आनंद से रस-क्रीड़ा करने लगे।

पद्म ऋषि का शोक और शरीरत्याग—इस प्रकार जब अधिक समय व्यतीत हो गया तब सुंदरी तो अंतर्हित होकर स्वर्ग को चली गई और पद्म ऋषि की भी मोहनिद्रा खुली। तब वे मन ही मन विचार और पश्चात्ताप करके विलाप करते हुए आप ही आप कहने लगे—हाय! मैं कैसा दुर्बुद्धि हूँ कि मैंने क्षणिक सुख के लिये अपना सर्वनाश किया और फिर भी जिसके लिये सर्वस्व का त्याग किया वह भी पास नहीं। हा! यह मैंने अब जाना कि पाप का परिणाम केवल संताप होता है और संतप्तहृदय मनुष्य जो कुछ कर डाले सब थोड़ा है। हाय, मैं तप से भी गया, भोग से भी गया, अब मैं इस शरीर को रखकर क्या करूँ? इस प्रकार शोकातुर होकर मुनि ने एक वेदिका रचकर उसमें अपने शरीर के पाँच खंड

करके होम कर दिए। जिस समय पद्म ऋषि ने शरीर त्याग किया उस दिन माघ शुक्ल १२ सोमवार आर्द्रा नक्षत्र था। पद्म ऋषि के मस्तक से अलाउद्दीन बादशाह, वक्षस्थल से राव हम्मीर, भुजाओं से महिमाशाह और मीर गभरू, चरणों से उर्वसी अर्थात् अलाउद्दीन की उस बेगम का अवतार हुआ जो कि इस आख्यान की नायिका है।

हम्मीर का जन्म—पद्म ऋषि के उपर्युक्त रीति से शरीर त्यागने के पश्चात् अर्थात् संवत् ११४१, शाका १००६ दक्षिणायन शरद ऋतु कार्तिक शुक्ला १२ रविवार को उत्तर भाद्रपद नक्षत्र में उक्त रणथंभ गढ़ के चहुआन राव जैतराव जी के हम्मीर नाम का एक पुत्र जन्मा। पुत्र का प्रफुल्लित मुख देखकर जैतराव के आनंद का ठिकाना न रहा। उन्होंने ज्योतिषियों को बुलाकर लग्न कुंडली बनवाई। सहस्रों ब्राह्मणों, भिक्षुकों और बंदी जनों को यथायोग्य सम्मान सहित अन्नदान, गोदान, हेमदान, गज-दान देकर सबको संतुष्ट किया गया। जिस समय रणथंभ गढ़ में हम्मीर का जन्म हुआ उसी समय गजनी में शहाबुद्दीन के पुत्र अलाउद्दीन का तथा मीणा के घर महिमा मंगोल दोनों भाइयों का और गभरू के घर उक्त स्त्री का अवतार हुआ।

हम्मीर और अलाउद्दीनशाह का वैर—एक समय वसंत ऋतु के आरंभ में अलाउद्दीन ने सहस्रों सैनिक और अमीर उमराओं तथा बेगमों को साथ लेकर शिकार के लिये यात्रा की। उसने एक परम रमणीक वन प्रांत

में शिविर लगवा दिए और वह उसी वन में इतस्तत: आखेट करके जंगली जंतुओं के प्राण संहार करने लगा। इसी प्रकार जब वसंत का अंत होकर ग्रीष्म के आतप से भूमि उत्तापित हो रही थी, अलाउद्दीन सब सर्दारों सहित शिकार खेलने चला गया। इधर बेगमें भी अपनी सखी सहेली और अगनित खोजाओं को लेकर एक कमलवन संपन्न निर्मल सरोवर पर जाकर जलक्रीड़ा करने लगीं। दैवयोग से उसी समय सहसा वायु का वेग बढ़ते बढ़ते इतना प्रचंड हो गया कि बड़े बड़े मेघस्पर्शी वृत्त टूट टूटकर गिरने लगे, धूलि के आकाश में आच्छादित हो जाने के कारण घोर अंधकार छा गया। इस आकस्मिक घटना से भयभीत होकर सब लोग तीन तेरह होकर अपने अपने प्राणों की रत्ता करने के लिये जहाँ तहाँ भागने लगे, जलक्रीड़ा करती हुई बेगमों में से "रूपविच्चित्रा" नामक एक बेगम जो कि स्वरूप और गुण में सब बेगमों से श्रेष्ठ थी, भटककर एक ऐसे निर्जन प्रांत में जा पहुँची जहाँ हिंसक जंतुओं के भीषण नाद के सिवाय अन्य शब्द ही न सुन पड़ता था। जिस समय रूपविच्चित्रा भय एवं शीत के कारण थर थर काँपती हुई प्राणरत्ता के लिये ईश्वर का स्मरण कर रही थी उसी समय महिमा मीर वहाँ आ पहुँचा। जब उसे पूछने पर ज्ञात हुआ कि उक्त स्त्री बादशाह की बेगम है, तब उसने उसे घोड़े पर बैठालकर शिविर में ले जाने का आग्रह किया। इस पर रूपविच्चित्रा ने मीर महिमाशाह को धन्य-

वाद देकर कहा कि इस समय मेरा शरीर शीत से अधिक व्याकुल हो रहा है, इसलिये तू आलिंगन से मुझे संतुष्ट कर। इस पर महिमाशाह ने उत्तर दिया कि एक तो मैं किसी भी पराई स्त्री को अपनी भगिनीवत् मानता हूँ तिस पर आप मेरे स्वामी की स्त्री हैं इसलिये आप मेरी माता समान हैं अतएव मैं इस अकर्तव्य एवं पाप कर्म करने को कदापि सहमत नहीं हूँ। तब रूपविचित्रा ने पुनः उत्तर दिया कि क्या आप यह नहीं जानते कि अपने मुख से माँगती हुई स्त्री को रति-दान न देना भी तो एक ऐसा पाप है कि जिसका कोई प्रायश्चित्त है ही नहीं, और हे वीर युवक, तेरे रूप और गुणों की प्रशंसा पर मोहित हुआ मेरा मन तेरे लिये बहुत दिनों से व्याकुल है। भाग्यवश आज यह संयोग प्राप्त हुआ है। बेगम की ऐसी बातें सुनकर महिमाशाह का भी मन डोल उठा और तब उसने घोड़े को एक समीपवर्त्ती वृक्ष से बाँध दिया, हथियार खोल-कर पास रख लिए और वहीं उस स्त्री की मनोकामना पूर्ण करने लगा। उसी समय एक गर्जता हुआ विकराल सिंह सामने आता देख पड़ा। उसे देखकर रूपविचित्रा थर थर काँपने लगी, किंतु महिमाशाह ने उसे धैर्य्य देकर कहा कि भय मत करो कोई डर नहीं, और कमान को उठाकर एक ही बाण से उसने सिंह को मार डाला।

उपर्युक्त प्राकृतिक उपद्रव के शांत होते ही सहस्रों मनुष्य बेगम की खोज में इधर उधर फिरने लगे। उनमें से कोई

कोई तो बेगम के पास तक आ पहुँचे और उसे शाही शिविर में लिवा ले गए। रूपविचित्रा को पाकर अलाउद्दीन अत्यंत प्रसन्न हुआ। जब ग्रीष्म का अंत हो गया और पावस की घनघोर घटाएँ घिर घिरकर आने लगीं तब अलाउद्दीन ने लश्कर सहित दिल्ली को कूच कर दिया।

दिल्ली के राजमहल में एक दिन आधीरात को जिस समय अलाउद्दीन रूपविचित्रा के पास बैठा था, उसी समय एक चूहा आ निकला। उसे देखते ही बादशाह का काम ज्वर जीर्ण हो गया, किंतु उसने किसी प्रकार सम्हलकर उस चूहे को लक्ष्य करके एक ऐसा बाण मारा कि वह वहीं मर गया। चूहे को मारकर अलाउद्दीन की प्रसन्नता का अंत न रहा, इसलिये उसने रूपविचित्रा से कहा कि मैं जानता हूँ कि स्त्रियाँ स्वभाव से ही कायर होती हैं, इसलिये मैंने यह पुरुषार्थ प्रगट किया है। यह सुनकर रूपविचित्रा ने मुस्कराकर कहा—पुरुषार्थी मनुष्य वे होते हैं जो इसी अवस्था मे सिंह को सहज ही मारकर शेखी की बात नहीं करते। बेगम की ऐसी बातें सुनकर अलाउद्दीन आश्चर्य्य और क्रोध के समुद्र में गोते खाने लगा, किंतु उसने अपने को सम्हालकर कहा कि जो तू ऐसा पुरुष मुझे बतला दे तो मैं उससे बहुत ही प्रसन्नतापूर्वक मिलूँ अथवा उसने मेरा कैसा ही अपराध क्यों न किया हो मैं सर्वथा उसे क्षमा करूँ। तब बेगम ने अपने और मीर महिमाशाह प्रति भूत वृत्तांत को कह सुनाया

और कहा कि उस वीर पुरुष के ये चिह्न हैं कि न तो वह उकड़ूँ बैठकर भोजन करता है, न शरणागत को त्यागता है, और न बिना किसी विशेष कारण के झूठ बोलता है। यह सुनते ही बादशाह का क्रोध इस प्रकार बढ़ उठा जैसे सचिक्कन पदार्थ की आहुति से अग्नि का तेज बढ़ उठता है। अला-उद्दीन ने उसी समय महिमाशाह को बुलाए जाने की आज्ञा दी। इधर रूपविचित्रा भी अपनी मूर्खता पर पछताने लगी। अंत में उसने साहसपूर्वक बादशाह से कहा कि यदि आप उस वीर पुरुष को कुछ दंड देना चाहते हों तो प्रथम मुझे ही मरवा डालिए, क्योंकि इसमें वास्तव में मेरा ही दोष है, न कि उसका। जहाँपनाह क्या यह अन्याय न होगा कि एक निरपराधी पुरुष दंड पावे और अपराधी को आप गले से लगावें? बेगम की ऐसी बातें सुनकर बादशाह ने महिमाशाह के आने पर उससे कहा कि "रे मूढ़ कुमार्गगामी अधम, अब मैं तेरा मुख नहीं देखना चाहता, बस अब यदि तुझे अपने प्राण प्यारे हैं तो इसी समय मेरे राज्य से चला जा।"

मीर महिमा और हम्मीर राव—क्रुद्ध अलाउद्दीन से तिरस्कृत होकर महिमाशाह ने घर आकर अपने सहोदर मीर गभरू से सारा वृत्तांत कह सुनाया और उसी क्षण परि-वार सहित वह दिल्ली से चल दिया। महिमाशाह जिस किसी राजा राव के पास जाता वह उसे शाह अलाउद्दीन का द्वेषी समझकर तुरंत ही अपने यहाँ से बिदा कर देता। इसी

प्रकार फिरते फिरते जब वह राव हम्मीर की ड्योढ़ी पर पहुँचा और उसने अपने आने की इत्तला कराई तो राव जी ने उसे बड़े ही सम्मानपूर्वक डेरा दिलवाया और दूसरे दिन अपने दरबार में बुलाया। दरबार में पहुँचकर महिमाशाह ने ५ घोड़े, १ हाथी, दो मुल्तानी कमान, एक तलवार, दो बाण, दो बहुमूल्य मोती और बहुत से ऊनी वस्त्र राव जी की नजर किए, जिनको राव जी ने सादर स्वीकार कर लिया। उसी समय मीर महिमाशाह ने अपनी बीती भी राव जी से निवेदन करके सविनय कहा—"मैं अलाउद्दीन के विरोधियों में से हूँ। यदि आपमें मेरी रक्षा करने की शक्ति हो तो शरण दीजिए अथवा मुझे भाग्य के भरोसे पर छोड़ दीजिए।" मीर के ऐसे वचन सुनकर हम्मीर ने कहा कि हे मीर मैं तुझे अभयदान देकर पण करता हूँ कि इस मेरे तनपिंजर में प्राणपखेरू के रहते एक क्या सहस्रों बादशाह तेरा बाल बाँका नहीं कर सकते—यह रणथंभ का अभेद्य दुर्ग, ये अपने राजपूत वीर अथवा मैं स्वयं अपने को युद्धाग्नि में आहुति देने को प्रस्तुत हूँ परंतु तुझे न जाने दूँगा। इस प्रकार कहकर राव हम्मीर ने उसी समय मीर को पाँच लाख की जागीर का पट्टा कर दिया और तब से मीर आनंदपूर्वक रणथंभौर के अभेद्य दुर्ग में रहने लगा।

इधर बादशाह के गुप्तचरों ने उसके सम्मुख यह समाचार जा सुनाया जिसके सुनते ही अलाउद्दीन पूँछ कुचले हुए

काले सर्प की तरह क्रोधित हो उठा; किंतु वजीर बहराम ख़ाँ ने आगत उपद्रव क टालने अथवा मीर महिमा के पक्षपात की इच्छा से दूत को डाँटकर कहा कि जिस मीर को सात समुद्र पार भी ठिकाना देनेवाला कोई नहीं है उसे हम्मीर क्या रखेगा। इस पर दूत नें पुनः कहा कि यदि मेरी बातों में कुछ भी असत्य हो तो मैं उचित दंड पाने के लिये प्रस्तुत हूँ। दूत की ऐसी दृढता देखकर अलाउद्दीन ने उसी समय आज्ञा दी कि हम्मीर को एक पत्र इस आशय का लिखा जाय कि वह मेरे अपराधी को स्थान न देवे क्योंकि अब तक वह मेरा मित्र है, न कि शत्रु। यदि वह अपने हठ से न हटे तो उसे उचित है कि वह सम्हल जाय. मैं क्षण मात्र में उसके समस्त दर्प और हठ को धूल में मिला दूँगा। अलाउद्दीन की आज्ञा पाते ही एक दूत को बहुत कुछ समझा बुझाकर रणथंभ की तरफ भेजा गया।

दूत ने रणथंभ जाकर बादशाह का पत्र राव हम्मीर जी को दिया और कहा कि आप बादशाह अलाउद्दीन के बल, पुरुषार्थ और पराक्रम एवं अपने भविष्य के विषय में भी खूब सोच विचार कर उत्तर दीजिए। इस पत्र का उत्तर राव जी ने इस प्रकार से लिखा कि मैं यह भली भाँति जानता हूँ कि आप दिल्ली के बादशाह हैं; परंतु मैं जो पण कर चुका हूँ, उसे अपने जीवन पर्यंत छोड़ने का नहीं। इसलिए उचित यही है कि आप अब मुझसे महिमाशाह के विषय में बात भी

न करें, और जो कुछ आपसे बन पड़े उसके करने में विलंब भी न कीजिए। इस पत्र को पाकर बादशाह का क्रोध और भी बढ़ उठा परंतु राजमंत्रियों के समझाने बुझाने पर उसने एक बार फिर राव हम्मीर के पास दूत भेजकर उसके मन की थाह ली। परंतु उस वीर पुरुष ने बड़े धैर्य्य और साहस के साथ फिर भी वही उत्तर दिया। राव हम्मीर जी के हठ और साहस के सामने बादशाह की बुद्धि भी चक्कर में पड़ गई, उसे भी अपने आगे पीछे का सोच पड़ गया। उसने विचार किया कि जब राव हम्मीर में इतना साहस है तब उसका कुछ कारण भी होगा, यदि न भी हो तो प्राण की परवाह न करनेवाले के साम्हने बिरले ही माई के लाल खड़े हो सकते हैं। सिंह हाथी से बहुत ही छोटा है किंतु वह अपने साहस और पुरुषार्थ ही से उसे मार डालता है। इसी प्रकार सोच विचार करते हुए बादशाह ने अपने सब दरबारियों को बुलाकर हम्मीर के हठ और अपने कर्तव्य की सूचना दी। तब उसके सब सर्दारों ने तो हुजूर ही की 'हाँ' में 'हाँ' मिला दी, सिर्फ एक वृद्ध पुरुष ने कहा कि उस चहुआन के फेर में न पड़िए, रणथंभ पर चढ़ाई करना सहज नहीं है। परंतु वृद्ध की इस बात पर ध्यान भी न दिया गया। अलाउद्दीन ने उसी समय आज्ञा दी कि यथासंभव शीघ्र ही फौज तय्यार की जाय। बादशाह की आज्ञा पाते ही जहाँ तहाँ पत्र भेजकर सोरठ, गिरनार और पहाड़ी देशों

के अनेक राजपूत सरदार बुलाए गए। तब तक इधर शाही वैतनिक फौज भी तय्यार हो गई और फौज के लिये आवश्यक रसद बरदास भी इकट्ठी हो गई।

निदान इस प्रकार अरबी, काबुली, रूमी इत्यादि मुसलमान वीरों की सत्ताईस लाख जंगी फौज और अट्टारह लाख परिकर कुल ४५ लाख मनुष्य, ५८०० हाथी और पाँच लाख घोड़ों की भीड़ भाड़ लेकर अलाउद्दीन ने रणथंभ गढ़ पर चढ़ाई करने को चैत्र मास की द्वितीया संवत् ११३८ को कूच किया। जिस समय यह शाही दल बल राव हम्मीर जी की सरहद में पहुँचा उस समय वहाँ की प्रजा में कोलाहल मच गया। अलाउद्दीन के आज्ञानुसार सब सैनिक सिपाही प्रजा को नाना प्रकार के कष्ट देने लगे। इसलिये सब लोग भाग भागकर रणथंभ के गढ़ में शरण के लिये पुकारने लगे। इसी प्रकार निरपराधी प्रजा का खून करते हुए जब यह दल बल "नल हारणों गढ़" के किले पर पहुँचा तब वहाँ के किलेदार ने तीन दिन पर्य्यंत शाही फौज का मुकाबिला किया। किंतु अंत में किले पर बादशाही दखल हो गया। इसलिये यहाँ का किलेदार भी रणथंभ को दौड़ गया और उसने बादशाह के अगनित दल बल का समाचार विधिवत् राव हम्मीर जी के सम्मुख निवेदन किया। इस समाचार के पाते ही हम्मीर की बंक भृकुटी और भी टेढ़ी हो गई, कमल समान नेत्र अग्नि-शिखा से लाल हो उठे, बाहु और ओठ फड़कने लगे।

रावजी का ऐसा ढंग देखकर अभयसिंह प्रमार, भूरसिंह राठौर, हरिसिंह बघेला, रणदूला चहुआन और अजमतसिंह इन पाँच सर्दारों ने २०००० फौज लेकर शाही फौज को रास्ते में रोक लिया और वे ऐसे पराक्रम से लड़े कि बादशाही सेना के पैर उखड़ गए और बड़े बड़े अमीर उमरा जहाँ तहाँ भागने लगे। उस समय अलाउद्दीन के वजीर महिरज खाँ ने कहा—"मैंने पहले ही अर्ज किया था कि एक तो राजपूत अपनी बात रखने के लिये जान देने की कभी परवाह नहीं करते, फिर भी उस पहाड़ी किले पर फतह पाना बहुत ही मुश्किल काम है"। किंतु बादशाह ने फिर भी उसकी बात योंही टाल दी और आगे कूच करने की आज्ञा दी। इस युद्ध में अलाउद्दीन के ३०००० सिपाही, डेढ़ सौ घोड़े और कई एक अमीर उमरा काम आए किंतु राव हम्मीर के १२५ सिपाही और १० सर्दार खेत रहे और अभयसिंह प्रमार के सीस में बहुत गहरे गहरे २१ घाव लगे।

अलाउद्दीन ने रणथंभ गढ़ के पास पहुँचकर चारों तरफ से किले को घेरकर फौज का पड़ाव डाल दिया और फिर से एक दूत के हाथ पत्र भेजकर राव हम्मीर जी से कहला भेजा कि अब भी मेरे अपराधी मीर महिमाशाह को मेरे पास हाजिर करके मुझसे मिलो तो मैं तुम्हारे अपराध को क्षमा कर दूँगा। इस बार जो राव जी ने उत्तर दिया वह इस प्रकार था—"मैं जानता हूँ तू बादशाह है, परंतु मैं भी उस चहुआन कुल में

से हूँ जिसने सदैव मुसलमानों के दाँत खट्टे किए हैं। ख्वाजा मीराँ पीर का एक लाख अस्सी हजार दल बल अजमेर में चहुआनों ने ही खपाया था। पुनः वीसलदेव जी ने सौनगरा का शाका किया, उसी वंश में पृथ्वीराज ने शहाबुद्दीन को सात बार पकड़कर छोड़ दिया। बस मैं उसी चहुआन कुल में हूँ और तू भी उसी पीर मर्द औलिया खांदान का मुसलमान है। देख अब किसकी टेक रहती है। हे यवनराज, तू निश्चय रख, मेरी टेक यह है कि सूर्य्य चाहे पूर्व से पश्चिम में उगने लगे, समुद्र मर्य्यादा छोड़ दे, शेष पृथ्वी को त्याग दे, अग्नि शीतल हो जाय, परंतु राव हम्मीर का अटल प्रण नहीं टल सकता। देख अलाउद्दीन संसार में जो जन्म लेता है वह एक दिन मरता अवश्य है। अथवा जिसकी उत्पत्ति है उसका नाश होता ही है। फिर इस क्षणभंगुर शरीर के लिये शरणागत को त्यागकर अपने कुल में मैं कलंक नहीं लगाना चाहता। तुझे कितना दर्प है जो अपने सामने दूसरे को वीर नहीं गिनता। इस पृथ्वी पर रावण, मेघनाद सरीखे अभिमानी और अतुल बलशाली वीर पानी के बबूले की तरह विला गए। यवनराज! मनुष्य नहीं रहता, परंतु उसके कर्तव्य की कहानियाँ अवश्य रहती हैं। अतएव अब तुझे सूझे सो कर। मैं भी सब तरह से तैयार हूँ।''

अलाउद्दीन के दूत को इस प्रकार उत्तर देकर राव हम्मीर जी शिवालय में जाकर शिवार्चन करने लगे। धूप, दीप,

नैवेद्य संयुक्त विधिवत् पूजा करके जिस समय राव जी ध्यानमग्न थे उसी समय शिवालय में आकाशवाणी हुई कि हे हम्मीर तुमसे और अलाउद्दीन से १२ वर्ष पर्य्यंत संग्राम होगा। तत्पश्चात् आषाढ़ सुदी ११ को तुम्हारा शाका पूर्ण होगा जिससे संसार में चिरकाल तक तुम्हारा यश बना रहेगा। शिव जी से इस प्रकार वरदान पाकर राव जी ने प्रसन्न होकर अपने समस्त शूर वीर सरदारों को युद्ध के लिये सन्नद्ध होने की आज्ञा दी। उसी समय हम्मीर के चाचा राव रणधीर ने, जो कि "छाड़गढ़" के किले के स्वामी थे, हम्मीर से कहा कि श्रीमान् क्षमा करें इस समय मेरे हाथ देखें।

इधर हम्मीर जी का पत्र पाते ही अलाउद्दीन लाल पीला 'सा हो उठा और उसने उसी समय रणथंभ के किले पर चारों ओर से गोले और बाणों की वर्षा करने की आज्ञा दी। बादशाह की आज्ञा पाते ही मुसलमान सेनानायक महम्मद अली रणथंभ के अजेय दुर्ग को पाने के लिये प्रयत्न करने लगा। इधर से राव रणधीर ने भी किले की बुर्जों पर से अग्निवर्षा करने की आज्ञा दी और आप कुछ सैनिकों सहित मुसलमानी सेना में वह इस प्रकार से धँस पड़ा जैसे भेड़ों के समूह में भेड़िया धँसता है। निदान पहली वरणी राव रणधीर और मुहम्मद अली की हुई जिसे राव जी ने एक ही हाथ में दो कर दिया। यह देखकर उसका पीठि नायक अजमत खाँ राव जी के सम्मुख आया। किंतु राव रणधीर ने

उसे भी मार गिराया। अजमत खाँ के गिरते ही मुसल्मानी सेना के पैर उखड़ गए। इस युद्ध में मुसलमान सेना के अस्सी हजार अस्त्रधारी खेत रहे और राव रणधीर के केवल एक हजार जवान मारे गए। मुहम्मद मीर के मारे जाने पर जब मुसलमानी फौज भागने लगी तब अलाउद्दीन ने वादित खाँ को सेनानायक बनाया। वादित खाँ ने बड़े धैर्य्य और दृढ़ता से उत्तेजनाजनक वाक्य कहकर बिखरी हुई फौज को बटोरकर राजपूत वीर राव रणधीर का सामना किया किंतु अंत में उसे भी भूत सेनानायकों के भाग्य में भाग लेना पडा।

वादित खाँ के मरते ही सारी सेना में कुहराम पड़ गया। अलाउद्दीन स्वयं निस्तेज होकर पीर पैगंबरों को पुकारने लगा। तब वजीर महम्मद खाँ ने कहा कि इस प्रकार सम्मुख युद्ध करके जय पाना तो कठिन है। इसलिये कुछ सेना यहाँ छोड़कर छाड़गढ़ के किले पर चढ़ाई की जाय। उस किले में राव रणधीर के परिवार के लोग रहते हैं। निदान अपने परिवार पर भीड़ पड़ी देखकर यदि राव रणधोर शरण में आ जाय तो फिर अपनी जय होने में कोई संदेह नहीं है। निदान वजीर की बात मानकर बादशाह ने वैसा ही किया; किंतु पाँच वर्ष व्यतीत हो गया और छाड़गढ़ का किला हाथ न आया। वरन् इसी में एक नवीन बात यह निकल पड़ी कि दिन भर तो हम्मीर जी युद्ध करते और रात को रणधोर का धावा पड़ता जिससे शाही सेना अत्यंत व्याकुल हो उठी। बड़े बड़े अमीर

उमरा मिट्टी मोल मारे जाने लगे। अधिक क्या आरंभ से अंत तक जितनी लड़ाइयाँ हुईं उन सबमें राजपूत वीरों की ही जय हुई। निदान जब अलाउद्दीन की तरफ के अब्दुलकरीम, करम खाँ, यूसफ जंग इत्यादि बड़े बड़े बुद्धिमान् योद्धा सर्दार मारे गए और राव रणधीर जी तथा हम्मीर जी का बाल भी न बाँका हुआ, तब अलाउद्दीन घबरा उठा और फिर से अमीर उमरावों की सभा करके अपने उद्धार का उचित उपाय विचारने लगा।

इसी समय राव रणधीर जी ने हम्मीर जी से कहा कि यदि चित्तौर से दोनों कुमार बुला लिए जायँ तो अच्छा हो। इस पर राव जी ने भी "अच्छा" कह दिया। तब राव रणधीर ने रणथंभ का सब समाचार लिखकर चित्तौर भेज दिया। उक्त समाचार के पाते ही दोनों राजकुमार तीस हजार राठौर, आठ हजार चहुआन, और पाँच हजार प्रमार राजपूतों की सेना लेकर रणथंभ को चले आए। दोनों राजकुमारों को देखकर राव हम्मीर जी ने प्रसन्नतापूर्वक उन्हें गले लगा लिया और मीर महिमा को शरण देने के कारण अलाउद्दीन से रार बढ़ जाने का हाल भी विधिवत् वर्णन कर सुनाया, जिसे सुनते ही दोनों राजकुमारों का मुख प्रसन्नता से प्रफुल्लित हो उठा। उन्होंने वीर रस में उन्मत्त होकर मदान्ध मृगराज की भाँति झूमते हुए राव जी से कहा कि अब तक आपने परिश्रम किया अब तनिक हमारा भी पराक्रम देख लीजिए। यों कहकर दोनों राजकुमार रनिवास में गए। राव हम्मीर की

रानी आसुमती के चरण छूकर वे बोले कि हे माता आप कृपा कर हमारे मस्तक पर मौर बाँधकर हमें युद्ध करने का आशीर्वाद दीजिए। दोनों राजकुमारों के ऐसे वचन सुनकर आसुमती ने भी सुतस्नेह से सने हुए वाक्यों से संबोधन करते हुए उन्हें कलेजे से लगा लिया और अपने हाथों उनके शीश पर मौर बाँधा और केशरी बाना पहिनाकर उन्हें युद्ध में जाने को बिदा किया।

जिस समय आसुमती कुमारों का शृङ्गार कर रही थी उस समय "छाड़गढ़" के किले में इस प्रकार घनघोर रव हो रहा था कि जिससे दिशाओं के दिग्पाल चौकन्ने हो रहे थे। यह खरभर देखकर अलाउद्दीन ने अपने मंत्री से पूछा कि आज "छाड़गढ़" में यह उत्सव किसलिये हो रहा है। तब एक अमीर ने उत्तर दिया कि राव हम्मीर जी के छोटे भाई के पुत्रों ने स्वयं युद्ध के लिये सिर पर मौर बाँधा है। उसी के उत्सव में यह गान वाद्य हो रहा है। यह सुनकर बादशाह ने जमाल खाँ को बुलाकर कहा कि तुमने ही पृथ्वीराज को कैद किया था आज भी अगर तुम दोनों राजकुमारों को पकड़ लोगे तो मेरी अत्यन्त प्रसन्नता के पात्र होगे। इस प्रकार समझा बुझाकर उस दिन के युद्ध के लिये अलाउद्दीन ने मीर जमाल को सेना-नायक बनाया।

इधर से दोनों राजकुमार केसरिया बाना पहिने, सीस पर मुकुट, हाथों में रण कंकण बाँधे अपने अपने तेज तुरंगों पर सवार सोलह हजार राजपूतों की सेना के बीच में ऐसे भले

मालूम देते थे मानों रणबाँकुरे देवताओं के दल में इंद्र और कुबेर सुशोभित हो रहे हों। दोनों वीर सेना सहित उज्ज्वल नेजे और खड्ग चमकाते हुए मुसल्मान सेना में इस प्रकार धँस पड़े जैसे काले काले बादलों में बिजली विलीन हो जाती है। इधर अल्लाउद्दीन से उत्तेजित किए हुए यवन-दल ने उन राजकुमारों को घेर लिया और जमाल खाँ बड़े वेग से उन दोनों राजकुमारों पर टूटा। वे वीर राजकुमार भी बड़ी धीरता से उसका सामना करने लगे। यह देखकर राव हम्मीर जी ने वीर शंखोदर को कुमारों की सहायता के लिये भेजा। इस पर इधर से अरबी फौज का धावा हुआ। राजपूत और मुसलमान सेना में इस प्रकार विकट मार होने लगी कि किसी को अपना बिगाना न सूझता था। इसी समय जमाल खाँ ने अपना हाथी राजकुमारों के सामने बढ़ाया। तब कुमार ने तलवार का ऐसा हाथ मारा कि एक ही हाथ में लोहे का टोप कटते हुए मीर जमाल की खोपड़ी के दो टूक हो गए। जमाल खाँ को गिरता देखकर वालन्न खाँ ने धावा किया। इधर से वीर शंखोदर ने बढ़कर उसका मुख रोका। निदान सायंकाल तक बराबर लोहा झरता रहा। दोनों कुमार अपनी समस्त सेना के सहित स्वर्गगामी हुए। इस युद्ध में मुसल्मानी फौज के ७५००० योधा खेत रहे।

इस प्रकार दोनों राजकुमारों के मारे जाने पर राव रणधीर ने क्रोधित होकर किले पर से आग बरसाना आरंभ कर

दिया। तब बादशाह ने कहला भेजा कि आप क्यों जान बूझ-कर जान देने पर उतारू हुए हैं, आपके लड़कर मर जाने से इस झगड़े का अंत न होगा। यदि आप राव हम्मीर जी को समझाकर मीर महिमा को मेरे पास भेजवा दें तो आप वा राव हम्मीर जी दोनों सुख से राज्य करें और हम दिल्ली चले जायँ। किंतु बादशाह के पत्र का राव रणधीर ने केवल यही उत्तर दिया कि क्षत्रियों का यह धर्म नहीं है कि विषय सुख भोग की लालसा अथवा मृत्यु के डर से वे अपने धारण किए हुए धर्म्म को त्याग दें। राव रणधीर की ओर से इस प्रकार कोरा उत्तर पाकर अलाउद्दीन ने अपनी फौज को भी छाड़ के किले पर आक्रमण करने की आज्ञा दी। अलाउद्दीन की आज्ञा पाते ही मुसल्मानी फौज ने टिड्डी दल की तरह उमड़कर किले को चारों ओर से घेर लिया और वे किले पर से चलते हुए गोले, गोली, बाण, बर्छों की विषम बौछार की कुछ भी परवाह न करके किले पर चढ़ दौड़े। मुसल्मानी सेना जब किले में धँस पड़ी तब राजपूत लोग सर्वथा प्राण का मोह छोड़कर तलवार से काम लेने लगे। दोनों में अग्न्यास्त्रों का संचालन बिल्कुल बंद हो गया। केवल तबल, तलवार, बरछी, कटार, सेल से काम लिया जाने लगा। इसी रेला-पेल में बादशाह के निज पेशकार (बगला) ने राव हम्मीर की तलवार के सामने आने की हिम्मत की किंतु वीर रणधीर के एक ही वार में उसके जीवन का वारा न्यारा हो गया, इस-

लिये उसके सहकारी रूमी सर्दार ने अपने ५० बलवान् योद्धाओं सहित रणधीर जी को घेर लिया। राव रणधीर ने इन पचासों सिपाहियों को मारकर रूमी सर्दार को भी दो टूक कर दिया। इसी प्रकार मार काट होते हुए राव रणधीर सहित जितने राजपूत वीर उस किले में थे सबके सब मारे गए और छाड़गढ़ का किला बादशाह के हाथ आया। इस युद्ध में शाही फौज के दो बड़े बड़े सर्दार और एक लाख रूमी सैनिक खेत रहे और राव रणधीर के साथी ३०००० राजपूत काम आए। यह छाड़गढ़ का अंतिम युद्ध चैत्र सुदी ९ शनिवार को हुआ। बीस हजार केवल राजपूत मारे गए और एक हजार राजपुतानी स्त्रियाँ स्वयं जलकर भस्म हो गईं।

छाड़गढ़ का किला फतह करके अलाउद्दीन ने अपने लश्कर की बाग रणथंभ गढ़ की ओर मोड़ी और कुवार सुदी ९ शनिवार को किले के चारों तरफ घेरा डालकर दूत के हाथ राव हम्मीर जी के पास कहला भेजा कि अब भी यदि महिमाशाह को मेरे पास भेज दो तो मैं बिना किसी रोक टोक के दिल्ली चला जाऊँ। दूत की ऐसी बातें सुनकर राव हम्मीर जी ने कहा—रे मूर्ख दूत, मैं तुझसे क्या कहूँ तेरे स्वामी अलाउद्दीन का मुझसे बार बार ऐसा कहला भेजना उचित नहीं है। विग्रह का निरधारण किया जाता है तो केवल इसलिये कि जिसमें बंधु बांधवों का रक्तपात न हो किंतु अब मुझे इस बात का सोच बाकी न रहा। राव रणधीर सा चाचा और

कुलदीपक दोनों कुमार भी जब इस युद्धाग्नि में अपने प्राण होम कर चुके तब मुझे अब सोच ही किस बात का है। जा तू अपने स्वामी से कह दे कि अब कभी मेरे पास सँदेसा न भेजे। दूत ने वहाँ से आकर राव जी के वचन ज्यों के त्यों बादशाह से कह सुनाए। यह सुनकर अलाउद्दीन ने उसी समय गोलंदाजों को बुलाकर हुक्म दिया कि यहाँ से ऐसा गोला मारो कि किले के बुर्जों पर रखी हुई तोपें ठस होकर शांत हो जायँ। गोलंदाजों ने बादशाह की आज्ञा पालन करने के लिये यथासाध्य चेष्टा की किंतु वह निष्फल हुई। साथ ही किले पर से उतरे हुए गोलों की मार से लश्कर की बहुत सी तोपें ठस होकर चरख पर से गिर पड़ीं। यह देखकर बादशाह की बुद्धि "किंकर्तव्यविमूढ़" हो गई। वह नाना प्रकार के तर्क वितर्क करता हुआ अपने कर्तव्य पर पछताने लगा। यह देखकर उसके वजीर ने उसे समझाया और रात्रि को किले की खाई पर पुल बाँधकर किले पर चढ़ जाने का मत पक्का किया, किंतु पानी की बाढ़ अधिक होने के कारण मुसल्मान सेना को उससे भी हारना पड़ा, तब तो बादशाह अखंड रूप से डटकर रह गया और किले पर आक्रमण करने के लिये उपयुक्त समय आने की प्रतीक्षा करने लगा।

एक दिन राव हम्मीर जी ने किले के सबसे ऊँचे हिस्से पर सभामंडप सजाया। उस सभामंडप में सगे संबंधियों सहित बैठा हुआ राव हम्मीर ऐसा ज्ञात होता था जैसे देव-

ताओं के बीच में इंद्र शोभित होता है। स्वर्ण सिंहासन पर बैठे हुए राव हम्मीर जी के सम्मुख चंद्रकला नामक वेश्या नृत्य कर रही थी। चंद्रकला के प्रत्येक गीत से अला-उद्दीन की अपमानसूचक ध्वनि निकलती थी। साथ ही इसके बादशाह की ओर पदाघात करके उसने ऐसा विलक्षण कटाक्ष किया कि जिसे देखकर रावजी की सब सभा में आनंद सूचक एक बड़ी भारी ध्वनि हुई। यह देखकर अलाउद्दीन से न रहा गया। तब उसने कहा कि यदि कोई इस वेश्या को बाण से मारकर राव हम्मीर के रंग में भंग कर दे तो मैं उसे बहुत कुछ पारितोषिक दूँ। यह सुनकर मीर महिमा के भाई मीर गभरू ने कहा कि मैं श्रीमान् की आज्ञा का प्रति-पालन कर सकता हूँ, किंतु स्त्री पर शस्त्र चलाना वीरों का काम नहीं है। इसलिये उस वेश्या को जीव से न मारकर केवल उसका अहित किए देता हूँ। यों कहकर मीर गभरू ने एक ऐसा बाण मारा कि जिससे उस वेश्या के पाँव में ऐसी चोट लगी कि वह तुरत लोट पोट हो गई। वेश्या को गिरते देखकर राव जी आश्चर्य और क्रोध में आकर चारों ओर देखने लगे। तब मीर ने हाथ बाँधकर अर्ज किया कि यह बाण मेरे भाई मीर गभरू का चलाया हुआ है। श्रीमान् इस पर किसी प्रकार का खेद न करें और तनिक मेरा पराक्रम देखें। यह कहकर मीर महिमाशाह ने एक ऐसा बाण मारा कि अला-उद्दीन के सिर पर से उसका मुकुट उड़ गया।

यह देखकर वजीर महरमखाँ ने अलाउद्दीन से कहा कि अब यहाँ ठहरना उचित नहीं है। इस महिमा के संचालन किए हुए बाण से यदि आप बच गए तो यह उसने पहले निमक का निर्वाह किया है। यदि वह हम्मीर का हुक्म पाकर अब की जो लक्ष्य करके बाण मारे तो आपके प्राण बचने कठिन हैं, अतएव मेरा तो यही विचार है कि अब यहाँ से दिल्ली को कूच कर जाना ही भला है। वजीर महरमखाँ की बात मानकर बादशाह ने उसी समय कूच की तय्यारी की जाने की आज्ञा दी। इधर जिस समय सारे लश्कर में चला-चल का समान हो रहा था उसी समय राव हम्मीर जी के सामान के कोषाध्यक्ष सुरजनसिंह ने आकर बादशाह के पैरों पर शिर धर दिया और कहा कि यदि श्रीमान् मुझे छाड़गढ़ का राज्य दे देना स्वीकार करें तो मैं सहज ही में रणथंभ के अजेय दुर्ग पर आपकी फतह करवा दूँ इस पर अलाउद्दीन ने उसे बहुत कुछ ऊँची नीची दिखाकर कहा—सुरजनसिंह यदि मैं रणथंभ पर विजय पा जाऊँ तो छाड़ का राज्य तो दूँगा ही इसके अतिरिक्त तुम्हें इस प्रकार संतुष्ट करूँगा कि जिसमें तुम्हारा मन हर तरह से राजी हो जाय।

बादशाह की बातों में आकर कृतघ्न सुरजन में रणथंभ को फतह करवाने का बीड़ा उठा लिया। उसने उसी समय राव हम्मीर जी के पास जाकर कहा कि "श्रीमान् रसद बर-दास्त और गोली बारूद के खजाने चुक गए हैं, इसलिये किले

में रहकर अपने हठ एवं मान मर्य्यादा की रक्षा होनी कठिन है, इसलिये वचन मानकर महिमाशाह को अलाउद्दीन के पास भेजकर उससे सुलह कर लीजिए। सुरजन की बात पर राव हम्मीर जी ने विश्वास न किया और आप स्वयं "जौंरा भौंरा" * (खजाने) के पास जाकर जाँच की तो सुरजन का कहना वास्तव में सत्य पाया। तब तो रावजी को अत्यंत शोक और आश्चर्य्य ने दबा लिया। यह देखकर महिमाशाह ने कहा कि यदि श्रीमान आज्ञा दें तो अब मैं स्वयं अलाउद्दीन से जा मिलूँ जिससे वह दिल्ली चला जाय। यह सुनते ही राव जी के नेत्रों से आग की चिनगारियाँ निकलने लगीं। उन्होंने कहा—महिमाशाह क्या फिर फिर यह समय आवेगा ? यदि मैं तुझे शाह के पास भेजकर रणथंभ का राज भोग करूँ तो संसार मुझे क्या कहेगा ? क्या इस कायर कर्तव्य से मेरा क्षत्रिय कुल सदैव के लिये कलंकित न होगा ? अब तो जो कुछ होना था हो चुका।

इधर सुरजन ने बादशाह के पास आकर कहा कि मैं एक ऐसा अद्भुत कुचक्र चला चुका हूँ कि इस समय आप जो कुछ कहेंगे राव जी तुरंत स्वीकार कर लेंगे। यह सुनकर अला-

* किंतु "जौंरा, भौंरा" (खजाने) वास्तव में खाली नहीं हुए थे। उनमें का सब माल सामान नीची तह में ज्यों का त्यों भरा पड़ा था। राव हम्मीर जी को धोखा देने के लिये सुरजन ने ऊपर से सूखा चमड़ा डलवा दिया था जो कि पत्थर डालने पर खड़क उठा।

उद्दीन ने हम्मीर जी के यहाँ कहला भेजा कि वह अपनी देवल रानी की बेटी चंद्रकला को मुझे देकर मुझसे क्षमाप्रार्थी हो तो मैं उस पर दया कर सकता हूँ। यह सुनते ही राव हम्मीर जी के क्रोध और शोक का ठिकाना न रहा। उन्होंने इसके उत्तर में अलाउद्दीन के पास कहला भेजा कि यदि उसे अपनी जान प्यारी है तो चार पीरों सहित अपनी प्यारी चिमना बेगम को मेरे पास भेजकर आप दिल्ली चले जावें अन्यथा मेरे हठ को हटाने की आशा न करें। हम्मीर जी के यहाँ से इस प्रकार कड़ाचूर उत्तर पाकर बादशाह ने कुपित होकर सुरजन से कहा क्यों रे झूठे ! तू यही कहता था कि राव हम्मीर अब आजिज आ जायगा। इस अपमान से उस दुष्ट ने कुपित होकर कहा कि अच्छा अब देखिए क्या होता है।

इधर राव जी बादशाह के दूत को उपर्युक्त उत्तर देकर तन क्षीण मन मलिन शोकातुर एवं व्यग्रचित्त अवस्था में रनवास में गए और रानी जी से उक्त बीतक की वार्ता कर कहने लगे—"हे प्रिये ! अब क्या करूँ ? क्या महिमाशाह को अलाउद्दीन के पास भेजकर ही अपनी प्रजा की रक्षा करूँ ?" रावजी के ऐसे वचन सुनकर रानी ने क्रोध, शोक, लज्जा एवं आश्चर्य्य से भरे कंठ कहा—"हे राजन्, वीरकुल-शिरोमणि ! आज आपको बादशाह से लड़ते लड़ते १२ वर्ष हो गए। आज आपको यह कुलधर्म के विरुद्ध सलाह देनेवाला कौन है ? हे प्राणप्यारे यह संसार सब झूठा है

अतएव इस संसार चक्र से संचालित दुःख और सुख भी अनित्य है, परंतु एक मात्र कीर्ति ही ऐसी वस्तु है कि जो इस संसार के अप्रतिहत चक्र से कुचली नहीं जा सकती। हे राजन्! अपने हाथ से शीश काटकर देनेवाले राजा जगदेव, विद्याविशारद राजा भोज, परदुखभंजन राजा विक्रमादित्य, दानवीर कर्ण इत्यादि कोई भी इस संसार में अब नहीं हैं परंतु उनके यश की पताका अब तक अक्षय स्वरूप से उड़ रही है और सदा उड़ेगी। महा-राज धन यौवन सदैव नहीं रहता, मनुष्य ही क्या, आकाश में स्थित सूर्य्य और चंद्रमा भी एकरस स्थिर नहीं रहते। जीवन, मरण, सुख, दुःख यह सब होनहार के अधीन है। और जब होनहार होनी ही है तब अपने कर्तव्य से क्यों चूकिए। श्रीमन् आप इस समय अपने पूर्व्वज पुरुष सोमेश्वर, पृथ्वीराज, जैतराव इत्यादि की वीरता और उनकी अक्षय कीर्ति का स्मरण कीजिए और तन धन सब कुछ जाय तो जाय परंतु शरणागत महिमा-शाह और अपने धर्म हठ को न जाने दीजिए।"

रानी की इस प्रकार उच्च उत्तम शिक्षा सुनकर राव जी के मुखारविंद पर प्रसन्नता की झलक पड़ गई। उन्होंने कहा "धन्य प्रिये! बस मैं इतना ही चाहता था, अब मैं निश्चिं-ततापूर्वक रण में प्राण दे सकता हूँ।" इस बात के सुनते ही रानी मूर्छित होकर जमीन पर गिर पड़ी, फिर कुछ सम्हल-कर मधुर स्वर से बोली—"स्वामी, आप युद्ध कीजिए मैं आपसे पहले ही शाका करूँगी।"

रानी जी से इस प्रकार बातें करके राव जी ने दरबार में आकर राज्य कोष को खोलवाकर याचकों को अयाची करने की आज्ञा दी और सब राजपूत सूर सामंतों के सामने "चतुरंग" से कहा कि अब मैं अपना कर्तव्य पालन करने पर उद्यत हूँ, रणथंभ की प्रजा और राजकुमार 'रतन' की रक्षा आप कीजिए। उत्तम होगा कि आप रतन को लेकर चित्तौर चले जायँ। इस पर यद्यपि चतुरंग ने अनाकानी करके अपने को भी राव जी के साथ युद्ध में शामिल रखना चाहा किंतु राव जी के आग्रह करने पर उसे वही मानना पड़ा अर्थात् ५००० सैनिकों सहित 'रतन' को लेकर वह चित्तौर की तरफ गया।

जब चतुरंग अल्हणपुर तक पहुँच गए तब राव हम्मीर जी ने अपने सब सर्दारों से कहा कि "अब धर्म्म के लिये प्राण न्यौछावर करने का समय निकट आ गया है अतएव जिनको मृत्यु प्यारी हो वे मेरे साथ रहें और जिन्हें जीवन प्यारा हो वे खुशी से घर चले जायँ। राव हम्मीर जी के इस प्रकार कह चुकने पर मीर महिमाशाह ने सब सूर वीर सर्दारों की तरफ से प्रतिनिधि स्वरूप हो अर्ज किया—हे राव जी! ऐसा कौन पुरुष कुलांगार होगा जो आपको इस समय रणथंभ में छोड़कर अपने जीवन का सुख चाहेगा। देवता, मनुष्य, शूरवीर पुरुष किसी का भी जीवन स्थिर नहीं है। एक दिन मरेंगे सब, तब फिर ऐसे सुअवसर की मृत्यु

को कौन छोड़े ? मरने से सब डरते हैं, संसार में केवल सती स्त्री और शूर वीर पुरुष ही ऐसे हैं जो मृत्यु को सदैव आलिङ्गन करने के लिये प्रस्तुत रहते हैं एवं उन्हें मृत्यु में ही आनंद आता है।

दूसरे दिन अरुणोदय के होते ही राव जी ने शौचादि से निश्चिंत हो गंगाजल से स्नान कर शरीर में सुगंधित गंधादि लेपन कर केसर सने पीले वस्त्र धारण किए, माथे पर रत्न जटित मुकुट बाँधा और शूर वीरों के छत्तीसों बाने (हरबे) लगा-कर प्रसन्नतापूर्वक वे ब्राह्मणों को सम्मान सहित दान देने लगे। इधर बात की बात में राठौड़, कूरम, गौड़, तोंवर, पड़िहार, पारैच, पुंडीर, चहुआन, यादव, गहिलोत, सेंगर, ँवार इत्यादि जाति के कुलीन शूर वीर राजपूत लोग अपने अपने आने बाने से सजे हुए रणरंग में रत मदमाते गयंद की भाँति आकर राव जी के पास इकट्ठे होने लगे। उन आगत शूर वीर राजपूतों के माथे पर टेढ़ी पगड़ी, ललाट में केशर सौंधे गंध की त्रिपुंड, गले में तुलसी और रुद्राक्ष की माला, सिर पर लोहे के टोप, शरीर पर झिलम-बक्तर, हाथों में दस्ताने, और यथा अंग छत्तीसों बाने सजे हुए थे। वे वीर योद्धा लोग साक्षात् शिव के गण से सुशोभित होते थे। इधर तो इन सब शूर वीरों सहित राव जी गणेश, शिव, भगवती इत्यादि देवताओं का पूजन और परिक्रमा कर रहे थे उधर राजमहल के द्वार पर मेघ के समान बड़े दुरद दंतारे मतवारे हाथियों और वायु के वेग

को उल्लंघन करनेवाले घोड़ों का घमासान जम रहा था। सूर्य्य निकलते निकलते राव हम्मीर जी अपने वीर योद्धाओं सहित इष्टदेव का स्मरण करते हुए राजमहल से बाहर हुए, राव जी के आते ही सब सेना व्यूहबद्ध हो गई, सबसे आगे फड़वाली साक्षात् काल की सी विकराल कालिका का अवतार तोपें, उनके पीछे हथनार उठनार जंबूर, तिनके पीछे हाथी, तिनके पीछे ऊँट, घुड़सवार और फिर तुबकदार पैदल इत्यादि थे। उस समय बाल सूर्य्य की सुनहरी किरणों के पड़ने से सब साज बाज से सुसज्जित चंचल घोड़े और गंधमय गंडस्थलवाले मत-वाले हाथी बड़े ही भले मालूम होते थे। जिस समय राव जी की सवारी संपूर्ण रूप से सुसज्जित हो गई तो नौबत, नगाड़े, शंख, सहनाई, रणतूर, शृंगी, डफ इत्यादि रण-वाद्य बजने लगे, कड़खेत उच्च स्वर से कड़खे गा गाकर सहज कठोरहृदय शूर वीरों के चित्त को उत्कर्ष देने लगे। इधर ये शूर वीर लोग उमंग में भरे हुए आगे बढ़ते जाते थे उधर आकाश में अप्सराओं के वृंद के वृंद इस समर में शत्रु के सम्मुख प्राण को परित्याग करनेवाले वीरों को अपने हृदय का हार बनाने के लिये आकाश मार्ग से आ रही थीं। जिस प्रकार ये वीर लोग इधर झिलम, टोप, बख्तर, दस्ताने, कलगी, तुर्रा, सरपेच, तीर, तुबक, तेगा, तलवार, तपल, तोमर, तौरा, नेत, बरछी, बिछुआ, बाँक, छुरी, पिस्तौल, पेशकब्ज, कटार, परिघ, फरसा, दाव इत्यादि अस्त्र शस्त्र से सजे हुए थे

उसी प्रकार उस तरफ सर्वाङ्गसुंदरी नवयौवना अप्सराएँ भी सीसफूल, दावनी, आड़, ताटंक, हार, बाजूबंद, जोसन, पहुँची, पाजेब इत्यादि गहने और नाना प्रकार की रंग बिरंगी कंचुकी, चोली, चौबंद इत्यादि वस्त्रों को धारण किए हुए आकाश-मार्ग में स्थित थीं।

इस प्रकार जंग-रंगराते मदमाते राजपूत इधर से बढ़े और उधर से इसी तरह बाणों की बौछार करती हुई मुसल्मान सेना भी पहाड़ों की कंदराओं में से टिड्डी सी निकल पड़ी। दोनों सेनाओं में प्रथम तो धुँवाधार तोप, तुबक, झौका, पिस्तौल इत्यादि अग्न्यस्त्रों से वर्षा हुई, परंतु जब वीरत्व के उत्साह से प्रोत्साहित हुई दोनों सेनाएँ समुद्र की तरह उमड़कर एक दूसरे से खिलत-मिलत हो गईं उस समय एकदम तेगा, तलवार, तबल, छुरी, बिछुआ, कटार, गुर्ज, फर्सा इत्यादि की मार होने लगी। क्षण मात्र में वह आमोदमय रणभूमि साक्षात् करुणा और वीभत्स रस का समुद्र हो गई। जहाँ तहाँ घायल और मृतक शूर वीर सिपाहियों के शवों के ढेर के ढेर नजर आते थे। मृतक हाथी, घोड़ों के शव जहाँ तहाँ चट्टानों से दीखते थे और बहुतेरे नर-देह-रक्त की नदी में जहाँ तहाँ बहे जाते थे। उन पर बैठकर मांस भक्षण करते हुए कौवे, चील्ह, गिद्ध, कुही, बाज, कुर्रा और शृगाल इत्यादि जंतु अत्यंत भयानक रव मचाते थे। इस प्रकार कठिन मार मचने पर मुसल्मान सेना के पैर उखड़ पड़े। यह देखकर बादशाह ने अपनी सेना को ललकारते हुए

वजीर से कहा कि अब क्या किया जाय। तब वजीर ने कहा कि इस समय अपनी सेना की चार अनी करके प्रत्येक का भार दीवान, बाँके बगसी, मैं और आप स्वयं लेकर चार तरफ से आक्रमण करें, तब ठीक होगा। बादशाह ने उसकी सम्मति मानकर वैसाही किया। इस बार उपयुक्त व्यूहबद्ध होने के कारण मुसलमान सेना ने बड़ी वीरता दिखाई। बादशाह ने पुकारकर कहा कि मेरा जो उमराव हम्मीर को पकड़कर लावेगा उसको बारह हजार की जागीर और दरबार में सबसे बड़ा मंसब मिलेगा। यह सुनकर अब्दुल नामक एक उमराव अपनी सेना सहित बड़े वेग से आगे बढ़ा। इधर राजपूत सेना ने उसके रोकने का यथासाध्य प्रयत्न किया, इस होड़ हौस में बड़ी कड़ी मार हुई, दोनों ओर के कई कमंद खड़े हुए। जब राव जी की तरफ के २०० सवार तीस हाथी और ६०० वीर जोधा काम आ चुके तब शेख महिमाशाह ने राव हम्मीर को सिर नवाकर कहा कि श्रीमान् अब बहुत हुआ। अब जरा मेरा भी पराक्रम देखिए। यह कहता हुआ वह बीच समरभूमि में आ खड़ा हुआ और बादशाह को संबोधन करके बोला, मैं महिमाशाह जो आपका अपराधी हूँ यह खड़ा हूँ अब पकड़ते क्यों नहीं! अथवा जो कुछ करना हो करते क्यों नहीं? अब अपनी इच्छा को पूर्ण कीजिए।

महिमाशाह के ऐसे सगर्व वचन सुनकर अलाउद्दीन ने खुरासान खाँ की ओर देखकर कहा कि जो कोई इस शेख को

जीवित पकड़ लावेगा उसे तीस हजार की जागीर, बारह हजारी मंसब, नौबत निशान और एक तलवार दूँगा। इस पर सहकी फौज के साथ इधर से खुरासान खाँ और राव हम्मीर की जय जयकार बोलते हुए उधर से महिमाशाह ने एक दूसरे पर आक्रमण किया। बादशाह ने अपनी सेना को उत्तेजित्त करने के लिये कहा कि इसको शीघ्र पकड़ो। शेख और खुरासान की सेना अनी तो एक दूसरे पर बाणों की वर्षा करने लगी और इधर ये दोनों वीर स्वयं आमने सामने जुटकर एक मात्र खड्ग के सहारे पर खेलने लगे। अंत में महिमाशाह ने खुरासान खाँ को मार गिराया और उसके निशान इत्यादि ले जाकर राव जी को नजर किए। महिमाशाह ने राव हम्मीर जी के सम्मुख खड़े होकर कहा हे शरणागत पणरक्षक वीर चहुआन आपको धन्य है। आप राज्य, परिवार, स्त्री और सब राजसी वैभवों को तिलांजलि देकर जो एक मात्र मेरी रक्षा करने के लिये अपने हठ से न हटे यह अचल कीर्ति आपकी इस संसार में सनातन स्थिर रहेगी। उसने आँसू भर कहा—"हाय ! अब वह समय कब आवेगा कि मैं पुनः अपनी माता के गर्भ से जन्म धारण कर आपसे फिर मिलूँ।" यह सुनकर राव जी ने कहा हे वीर मीर, अधीर मत हो। जीवन मरण यह संसार का काम ही है इस विषय का पश्चात्ताप ही क्या? फिर हम तुम तो एक ही अंश के अवतार हैं तो हम आप अवश्य एक ही में लीन होंगे अतएव इन निःसार बातों का

विचार करना तो वृथा ही है परंतु यह अवश्य है कि मनुष्य-देह धारणकर इस प्रकार कीर्ति संपादन करने का समय कठिनता से प्राप्त होता है।

राव हम्मीर जी के उपर्युक्त वक्तव्य का अंत होते ही वीरोचित उत्कर्ष से भरा हुआ मीर महिमाशाह रणक्षेत्र के मध्य में आ उपस्थित हुआ। उसकी वरनी पर इधर से उसका छोटा भाई मीर गभरू उसके सामने जा जुटा। जिस समय ये दोनों वीर बांधव एक दूसरे पर प्रहार करने को थे कि अलाउद्दीन ने हँसकर कहा "मीर महिमाशाह मैं सच्चे दिल से तेरी तारीफ करता हूँ। जिस वक्त से तूने दिल्ली छोड़ी उस वक्त से आज तक मुझको सिर न झुकाया, बस अब तुम खुशी से मेरे पास चले आओ मैं तुम्हारा कुसूर माफ करता हूँ और यह बेगम भी तुमको दे देना कबूल करता हूँ। साथ ही इसके गोरखपुर का परगना जागीर में दूँगा।" इस पर महिमाशाह ने मुस्कराते हुए सहज स्वभाव से उत्तर दिया कि अब आपका यह कहना वृथा है, आप जरा उन बातों का ख्याल भी तो कीजिए जो आपने उस समय कही थीं। यदि अब फिर से भी उसी माता की कुक्षि से जन्म लूँ तब भी राव जी को नहीं छोड़नेवाला हूँ।

मीर महिमाशाह को बादशाह से बातें करते देखकर राव जी ने कुमक भेजी। इधर मीर गभरू ने भी कहा कि हे भाई, अब वृथा की दंत कथाओं के क्रंदन करने से क्या लाभ

है, आओ इस सुअवसर पर हम और आप दोनों अपने अपने धर्म को पालन करते हुए स्वर्ग की सीढ़ी पर पैर देवें। यह कहते हुए दोनों भाई अपने अपने स्वामियों की जय जयकार मनाते हुए एक दूसरे से जुट पड़े। मीर गभरू ने अपने बड़े भाई महिमाशाह के पैर छूकर कहा "अब मुझे आज्ञा हो।" इसके उत्तर में महिमाशाह ने कहा कि "स्वामिधर्म्म पालन में दोष ही क्या है?" पहले तो दोनों भाई परस्पर खड्ग से लड़ते रहे किंतु जब बहुत देर हो गई तब दोनों अपने अपने घोड़ों पर से उतरकर परस्पर द्वंद्व युद्ध में प्रवृत्त हुए, और दोनों सेनाओं के देखते ही दोनों वीर भाई स्वर्ग को सिधारे।

जब महिमाशाह मारा जा चुका तब अलाउद्दीन ने राव हम्मीर जी से कहा कि अब आप युद्ध न कीजिए मैं आपकी अक्षय वीरता से अत्यंत प्रसन्न होकर आपको अपनी तरफ से पाँच परगने और देना स्वीकार करता हूँ और यह भी प्रतिज्ञा करता हूँ कि अब मेरे रहते आप स्वच्छंदतापूर्वक रणथंभ का राज्य कीजिए। इसके उत्तर में हम्मीर जी ने कहा कि अब आपका यह विचार केवल विडंबना है। अब जो कुछ भविष्य में होगा वही होगा, मैं इस क्षणभंगुर जीवन की अभिलाषा वा राज्यसुख के लोभ से अक्षय कीर्ति को त्यागनेवाला नहीं हूँ। रावण, दुर्योधन आदि वीरों ने कीर्ति के लिये ही तन को तिनका सा त्याग दिया, हम तुम दोनों एक ही पद्म ऋषि के अंश से उत्पन्न हैं, अतएव अब यही उचित है कि इस सुअवसर

पर समर भूमि में अनित्य शरीर को विसर्जन करके हम आप स्वर्ग में सदैव के लिये सहवास करें।

राव जी के ऐसे वचन सुनकर अलाउद्दीन ने अपनी सेना को आक्रमण करने की आज्ञा दी। उधर से राजपूत सेना भी प्राण का मोह छोड़कर मदोन्मत्त मातंग की तरह मुसलमानों से जंग करने को वीरत्व के उमंग में भरी हुई उमड़ पड़ी। जिस समय दसों दिग्गजों के हृदय को कंपायमान करनेवाले रणवाद्यों को बजाती हुई दोनों सेनाएँ परस्पर मिल रही थीं उसी समय भोज नामक भीलों के सर्दार ने राव जी से अपने हरावल में होने की आज्ञा म.गी। रावजी ने कहा कि तुम चित्तौर की रक्षा करो। इस पर उसने उत्तर दिया कि मुझे श्रीमान् की आज्ञा मानने में किसी प्रकार की आपत्ति नहीं है, परंतु मैंने जो आजन्म श्रीमान् की चरण-सेवा की है वह इसी अवसर के लिये, अतएव अब मुझे आज्ञा हो क्योंकि मैं अपने कर्तव्य के ऋण से उऋण होऊँ। यों कहकर भोजराज अपनी भील सेना सहित आगे बढ़ा। उधर से मीर सिकंदर हरावल में हुआ। मुसलमान सेना से तोप की गुरावें छुटती थीं और भील तीरों की वर्षा करते थे। इसी समय भोजराज और सिकंदर का मुकाबला हुआ। इधर से भोजराज ने सिंकंदर पर कटार का वार किया और उसने तलवार चलाई, निदान दोनों वीर एक ही समय धराशायी हुए। इस युद्ध में भोज-राज के साथवाले दो हजार भील और सिकंदर की तरफ के तीस हजार कंधारी योद्धा काम आए और शाही सेना भाग उठी।

उसी समय राव हम्मीर जी ने भोजराज की लाश के पास हाथी जा डटाया और उस वीर के मृतक शव को देखकर राव जी ने आँसुओं से नेत्र डबडबाई हुई अवस्था में कहा—धन्य हो वीर वर ! तुमने स्वामिसेवा में प्राण देकर अतुलित कीर्ति को संपादन किया। राव जी को रणक्षेत्र के बीच अचल भाव से स्थित देखकर अलाउद्दीन ने अपने भागते हुए वीरों से कहा—"रे मूर्ख मनुष्यो, तुमने जिस मेरे कारण आजन्म आनंद से जीविका निर्वाह की, अहर्निश आनंद आमोद में व्यतीत किए, आज तुम्हें लड़ाई का मैदान छोड़कर भागते हुए शरम नहीं आती।" इतना सुनते ही मुसलमान सेना भूखे बाघ या फुफकारते हुए सर्प की तरह लौट पड़ी। यहाँ राजपूत तो सदैव प्राण हथेली पर रखे हुए थे, बस दोनों में इस तरह कड़ाचूर मार पड़ी कि रणभूमि में रक्त की नदी बह निकली, उस वेग से बहती हुई शोणित सरिता में जहाँ तहाँ पड़े हुए हाथियों के शव वास्तविक चट्टानों से भासित होते थे, वीरों के हाथ पाँव जंघा इत्यादि कटे हुए अवयव जलचर जीव से तैरते ज्ञात होते थे, वीरों के सचिक्कन केश सिवार और ढाल कच्छप सी प्रतीत होती थी, नव युवा वीरों के कटे हुए मस्तक कमल से और उनके आरक्त बड़े बड़े नेत्र खंजन से खिलते हुए नजर आते थे। इस पसर में ७५ हाथी, सवा लाख घोड़े, ७०० निशानवाले और अगनित योधा काम आए। सिकंदर शाह, शेर खाँ, महरम खाँ, मोहब्बत खाँ, मुदफ्फर या मुजफ्फर खाँ,

नूर खाँ, निजाम खाँ इत्यादि मुसलमान वीर मारे गए और राव जी की तरफ के भी नामी नामी चार सौ योद्धा खेत रहे।

इसी मारामार में राव हम्मीर जी ने अपने हाथी को अलाउद्दीन के सम्मुख डटाए जाने की आज्ञा दी और कहला भेजा कि अब तक वृथा ही रक्त प्रवाह हुआ है अब आइए हमारा आपका द्वंद्व युद्ध हो और सब द्वंद्व समाप्त हो। राव जी का यह सँदेसा सुनकर अलाउद्दीन ने मंत्री से पूछा कि अब क्या करें। तब मंत्री ने उत्तर दिया कि उस चहुआन के बल प्रताप एवं पराक्रम से आप अपरिचित नहीं हैं अतएव मेरे विचार में तो यही आता है कि अब आप संधि कर लें तो सर्वथा भला है। निदान अलाउद्दीन ने वजीर की बात मानकर हम्मीर जी के पास संधि का प्रस्ताव भेजा। परंतु उस वीर हम्मीर ने उत्तर दिया कि युद्धस्थल में उपस्थित होकर मित्रता का प्रस्ताव करना भला कौन सी नीति और बुद्धिमत्ता का काम है। शत्रु के सम्मुख बिनती करना नितांत कातरता अथवा दंभमय चतुरता का पता देता है।

बादशाह के दूत को इस प्रकार नीतियुक्त उत्तर देकर राव जी ने अपने राजपूत वीरों को आज्ञा दी कि "हे वीरवर योद्धाओ, अब मेरी यही इच्छा है कि आप तोप, बाण, हथनार, चादर, जंबूर, बंदूक, तमंचा, बरछा, सेल, साँग इत्यादि हथियारों को त्यागकर केवल तलवार, छुरी, कटारी और विषाण से काम लो अथवा मल्लयुद्ध द्वारा ही अपने पराक्रम

का परिचय देते हुए स्वर्ग की सीढ़ी पर पैर दो। साथ ही मेरी यह भी आज्ञा है कि बादशाह को न मारना।"

राव जी के इतना कहते ही राजपूत रावत, महावत से हकारे हुए हाथी की तरह अपने अपने उज्ज्वल शस्त्रों को चमकाते हुए चल पड़े। क्षुधित मृगराज की भाँति रणबाँकुरे राजपूतों का वेग मुसलमानी सेना क्षण भर न सह सकी और बड़े बड़े सैनिक अमीर उमरा भेड़ की भाँति भाग उठे। राजपूत सेना ने अलाउद्दीन के हाथी को घेर लिया और उसे राव हम्मीर जी के सम्मुख ले आए। राव जी ने विवश हुए बादशाह को देखकर अपने सर्दारों से कहा कि यह पृथ्वीपति बादशाह है। अदंड्य है। इसलिये आप लोग इसे योंही छोड़ दीजिए। निदान राजपूत सर्दारों ने राव जी की आज्ञा मानकर अलाउद्दीन को उसकी सेना में पहुँचा दिया और वह भी उसी समय वहाँ से कूचकर दिल्ली को चला आया।

उधर राव हम्मीर जी ने अपने घायलों को उठवाकर और बादशाही सेना से छीने हुए निशान लिवाकर निज दुर्ग की तरफ फेरा किया।

राव जी ने भूलवश, अथवा विजय के उत्साहवश, शाही निशानों को आगे चलने की आज्ञा दी, यह देखकर रानी जी ने समझा कि रावजी खेत हार गए और यह किले पर शाही सेना आ रही है। ऐसा विचार कर रानीजी ने अन्यान्य सब परिवार की वीर महिलाओं सहित प्रज्वलित अग्नि में

शरीर होम कर शाका किया। जब राव जी ने किले में आकर यह दृश्य देखा तो सब सर्दारों और सैनिकों को आज्ञा दी कि वे चित्तौर.में जाकर कुँअर रतनसेन की रक्षा करें और आप शिव के मंदिर में जाकर नाना प्रकार के पूजन अर्चन करके यह वरदान माँगा कि अब जो मैं पुनः जन्म धारण करूँ तो इसी प्रकार वीर क्षत्रिय कुल में। और खड्ग खींचकर अपने ही हाथों से कमल के पुष्प के समान अपना माथा उतार के शिव जी को चढ़ा दिया।

जब यह समाचार अलाउद्दीन के कर्णगोचर हुआ तो राव जी के कर्तव्य पर पश्चात्ताप करता हुआ वह फौरन फिर आया और राव जी के सम्मुख खड़ा होकर अदब से प्रणाम करता हुआ बोला कि अब मुझे क्या आज्ञा है। यह सुन-कर राव जी के मस्तक ने उत्तर दिया कि तुम जाकर समुद्र में शरीर छोड़ो तब हम तुम मिलेंगे। राव जी के शीश के वचन मानकर अलाउद्दीन ने वजीर महरम खाँ को आज्ञा दी कि वह सब लश्कर सहित दिल्ली जाकर "शाहजादा" अलावृत्त को तख्त पर बिठावे और वह आप उसी क्षण रामेश्वर को चला गया। वहाँ पर उसने रामेश्वर जी की पूजा की और उन्हीं का ध्यान और स्मरण करते हुए समुद्र में वह कूद पड़ा।

इस प्रकार बादशाह के तन त्यागने पर राव हम्मीर जी और अलाउद्दीन और मीर महिमाशाह परस्पर स्वर्ग में गले मिले और अप्सराओं और देवताओं ने पुष्पवृष्टि की।

इस प्रकार राव हम्मीर जी का यश कीर्तन सुनकर राव चंद्रभान जी ने कवि जोधराज को बहुत सा दान दिया, और सब भाँति से प्रसन्न किया।

चैत्र सुदी तृतीया बृहस्पतिवार संवत् १८८५ को ग्रंथ पूर्ण हुआ।

यह जोधराज कृत हम्मीररासो का सारांश हुआ। इसमें दी हुई ऐतिहासिक बातों पर विचार करने के पहले मैं एक दूसरे कवि की लिखी हुई हम्मीर राव की कथा का सारांश देना चाहता हूँ। नयनचंद्र सूरि नामक एक जैन कवि ने हम्मीर महाकाव्य नाम का एक ग्रंथ संस्कृत में लिखा है। नयन-चंद्र जयसिंह सूरि का पौत्र था। यह ग्रंथ पंद्रहवीं शताब्दी का लिखा हुआ जान पड़ता है। सन् १८७८ में पंडित नील-कंठ जनार्दन ने इस काव्य का एक संस्करण छपाया जिसकी भूमिका में उन्होंने काव्य का सारांश दिया है। उससे नीचे लिखा वृत्तांत मैं हिंदी में उद्धृत करता हूँ। यहाँ पर इस ग्रंथ में दिया हुआ हम्मीरदेव के वंश का कुछ वृत्तांत दे देना उचित जान पड़ता है।

चौहान वंश में दीक्षित वसुदेव नाम का एक पराक्रमी राजा हुआ। इसका पुत्र नरदेव था। इसके अनंतर हम्मीर तक वंशक्रम इस प्रकार है—

चंद्रराज

जयपाल

जयराज

सामंतसिंह

गुयक्क

नंदन

वप्रराज

हरिराज

सिंहराज—इसने हेनिम नाम के मुसल्मान सर्दार को मारा।

भीम—सिंह का भतीजा और उसका दत्तक पुत्र।

विग्रहराज—गुजरात के मूलराज को मारा।

गंगदेव

वल्लभराज

राम

चामुंडराज—हेजम्मुदीन को मारा।

दुर्लभराज—शहाबुद्दीन को जीता।

दुशल—कर्णदेव को मारा।

वीसलदेव—शहाबुद्दीन को मारा।

पृथ्वीराज—प्रथम

अल्हण

अनल—अजमेर में तालाब खुदवाया।

जगदेव

वीशल

जयपाल

गंगपाल

सोमेश्वर—कर्पूरादेवी से विवाह किया।

पृथ्वीराज—द्वितीय

हरिराज

गोविंद

वाल्हण—प्रल्हाद और वाग्भट्ट दो पुत्र हुए।

प्रह्लाद

वीरनारायण—प्रह्लाद का पुत्र।

वाग्भट्ट—वाल्हण का पुत्र।

वाग्भट्ट के उत्तराधिकारी उनके पुत्र जैत्रसिंह हुए। उनकी रानी का नाम हीरादेवी था जो बहुत रूपवती और सर्वथा अपने उच्च पद के योग्य थी। कुछ काल में हीरादेवी गर्भवती हुई। उसकी इस अवस्था की वासनाओं से गर्भस्थित जीव की प्रवृत्ति और उसके महत्त्व का आभास मिलता था। कभी कभी उन्हें मुसलमानों के रक्त से स्नान करने की इच्छा होती। उसके पति उसकी अभिलाषाओं को पूरा करते; अंत में, शुभ घड़ी में, उसको एक पुत्र उत्पन्न हुआ। पृथ्वी की चारों दिशाओं ने सुंदर शोभा धारण की; सुखद समीर बहने लगा; आकाश निर्मल हो गया; सूर्य्य मृदुलता से चमकने लगा; राजा ने अपना आनंद ब्राह्मणों पर सुवर्ण बरसाकर और देवताओं की वंदना करके प्रगट किया। ज्योतिषियों ने बालक के मुहूर्त्तस्थान में पड़े हुए नक्षत्रों के शुभ योग का विचार

करके भविष्यद्वाणी की कि कुमार समस्त पृथ्वी को अपने देश के शत्रु मुसल्मानों के रक्त से आर्द्र करेगा। बालक का नाम हम्मीर रखा गया। हम्मीर बढ़कर एक सुंदर और बलिष्ठ बालक हुआ। उसने सब कलाओं को सीख लिया और शीघ्र ही वह युद्ध-विद्या में भी निपुण हो गया!

जैत्रसिंह के सुरत्राण और विराम दो और पुत्र थे, जो बड़े योद्धा थे। यह देखकर कि उनके पुत्र अब उनको राज्य के भार से मुक्त करने योग्य हो गए, जैत्रसिंह ने एक दिन हम्मीर से इस विषय में बातचीत की, और उन्हें किस रीति से चलना चाहिए इस विषय में उत्तम उपदेश देने के उपरांत, राज्य उनके (हम्मीर के) हवाले कर दिया, और वे आप वनवास करने चले गए। यह बात संवत् १३३९ (१२८३ ई०) में हुई।*

छः गुणों और तीन शक्तियों से संपन्न होकर हम्मीर ने युद्ध के हेतु प्रस्थान करने का संकल्प किया। पहले वह राजा अर्जुन की राजधानी सरसपुर में गया। यहाँ एक युद्ध हुआ जिसमें अर्जुन पराजित होकर अधीन हुआ। इसके अनंतर राजा ने गढ़मंडले पर चढ़ाई की जिसने कर देकर अपनी रक्षा की। गढ़मंडले से हम्मीर धार की ओर बढ़ा। यहाँ एक

---

* ततश्च संवन्नववह्नि वह्निभूहायने माघवलक्षपक्षे।
पौष्यां तिथौ हेलिदिने सपुष्ये दैवज्ञनिर्दिष्टबलेऽलिलग्ने॥
सर्ग ८ श्लोक ४९।

राजा भोज राज्य करता था जो स्वनामधारी विख्यात राजा भोज के समान ही कवियों का मित्र था। भोज को पराजित करके सेना उज्जैन में आई जहाँ हाथी, घोड़े और मनुष्य च्चिप्रा के निर्मल जल में नहाए। राजा ने भी नदी में स्नान किया और महाकाल के मंदिर में जाकर पूजा की। बड़े समारोह के साथ वे उस प्राचीन नगरी के प्रधान मार्गों से होकर निकले। उज्जैन से हम्मीर चित्रकोट (चित्तौर) की ओर बढ़ा और मेड़वार (मेवाड़) को उजाड़ करता हुआ आबू पर्वत पर गया।

वेद के अनुयायी होकर भी यहाँ हम्मीर ने मंदिर में ऋषभदेव की पूजा की, क्योंकि बड़े लोग विरोधसूचक भेदभाव नहीं रखते। वस्तुपाल के स्तुति-पाठ के समय भी राजा प्रस्तुत थे। वे कई दिन तक वसिष्ठ की कुटी में रहे, और मंदाकिनी में स्नान करके उन्होंने अचलेश्वर की आराधना की। यहाँ अर्जुन की कृतियों को देखकर वे बहुत ही आश्चर्यित हुए।

आबू का राजा एक प्रसिद्ध योद्धा था, किंतु उसके बल ने इस अवसर पर कुछ काम न किया और उसे हम्मीर के अधीन होना पड़ा।

आबू छोड़कर राजा वर्द्धनपुर आए और उस नगर को उन्होंने लूटा तथा नष्ट किया। चंगा की भी यही दशा हुई। यहाँ से अजमेर की राह से हम्मीर पुष्कर को गए जहाँ उन्होंने आदिवराह की आराधना की। पुष्कर से

राजा शाकंभरी को गए। मार्ग में मरहटा*, खंडिल्ला, चमद्दा और काँकरौली लूटे गए। काँकरौली में त्रिभुवनेंद्र उनसे मिलने आए और बहुत सी अमूल्य भेट लाए।

इन विशद कार्य्यों को पूरा करके हम्मीर अपनी राजधानी को लौट आए। राजा के आगमन से वहाँ बड़ी धूम हुई। राज्य के सब बड़े कर्म्मचारी धर्मसिंह के साथ दल बाँधकर अपने विजयी राजा की अगवानी के लिये बाहर आए। मार्ग के दोनें ओर प्रेमी प्रजा अपने राजा के दर्शन के हेतु उत्सुक खड़ी थी।

इसके कुछ दिन पीछे हम्मीर ने अपने गुरु विश्वरूप से कोटियज्ञ का फल पूछा और उनसे यह उत्तर पाकर कि इस यज्ञ के पूरा करने से स्वर्ग लोक प्राप्त होता है राजा ने आज्ञा दी कि कोटियज्ञ की तय्यारी की जाय। चट देश के सब भागों से विद्वान् ब्राह्मण बुलाए गए, और यज्ञ पवित्र शास्त्रों में लिखे विधानें के अनुसार समाप्त किया गया। ब्राह्मणों को खूब भोजन कराकर उन्हें भरपूर दक्षिणा दी गई। इसके उपरांत राजा ने एक महीने तक के लिये मुनिव्रत ठाना।

जब कि रणथंभौर में ये सब बातें हो रही थीं, दिल्ली में, जहाँ अलाउद्दीन राज्य करता था, कई परिवर्त्तन हुए। रणथंभौर में जो कुछ हो रहा था उसका समाचार पाकर उसने

---

* इस नाम का एक स्थान जोधपुर राज्य में है। जोधपुर राज्य में नाडोल नाम का एक गाँव है जहाँ आसापुरा देवी का स्थान है। रणथंभ से यदि नाडोल जाया जाय ते। मेड़ता बीच में पड़ेगा।

अपने छोटे भाई उलगखाँ * को सेना लेकर चौहान प्रदेश पर चढ़ाई करने और उसको उजाड़ देने की आज्ञा दी। उसने कहा "जैत्रसिंह हम लोगों को कर देता था; पर यह उसका बेटा न कि केवल कर ही नहीं देता वरन् हम लोगों के प्रति अपनी घृणा दिखाने के लिये प्रत्येक अवसर ताकता रहता है। यह उसकी शक्ति को नष्ट करने का अच्छा अवसर है।" ऐसी आज्ञा पाकर उलगखाँ ने ८०००० सवार लेकर रणथंभौर प्रदेश पर चढ़ाई की। जब यह सेना वर्णनाशा नदी पर पहुँचो तब उसने देखा कि सड़कें जो शत्रु के प्रदेश को गई हैं, सवारों के चलने योग्य नहीं हैं। इससे वह कई दिन वहाँ टिका रहा; इस बीच में उसने आस पास के गाँवों को जलाया और नष्ट किया।

यहाँ रणथंभौर में मुनिव्रत पूरा न होने के कारण राजा स्वयं युद्धक्षेत्र में न जा सकते थे। अतएव उन्होंने भीमसिंह और धर्म्मसिंह अपने सेनापतियों को आक्रमणकारियों को भगाने के लिये भेजा। राजा की सेना वर्णनाशा नदी के किनारे एक स्थान पर आक्रमणकारियों पर टूट पड़ो और उसने शत्रुओं को, जिनके बहुत से लोग मारे गए, परास्त किया। इस जयलाभ से संतुष्ट होकर भीमसिंह रणथंभौर की ओर लौटने लगा, और उलगखाँ अपनी सेना का प्रधान अंग साथ लिए

* मालिक मुईजुद्दीन उलगखां। बिग्स ने अपने फिरिश्ता के अनुवाद में इसको "अलफखाँ" लिखा है।

छिपकर उसके पीछे पीछे बढ़ने लगा। अब यह हुआ कि भीमसिंह के सिपाही, जिन्होंने लूट में बहुत सा धन पाया था, उसको रक्षापूर्वक अपने अपने घर ले जाने को व्यग्र थे, और इसी व्यग्रता में उन्होंने अपने नायक को पीछे छोड़ दिया जिसके साथ केवल अनुचरों की एक छोटी सी मंडली रह गई। जब इस प्रकार भीमसिंह हिंदावत घाटी के बीचो बीच पहुँचा तब उसने विजय के अभिमान में उन नगाड़ों और बाजों को जोर से बजाने की आज्ञा दी जिनको उसने शत्रु से छीना था। इस कार्य्य का फल अचिंत्यपूर्व और आपत्ति-जनक हुआ। उलगखाँ ने अपनी सेना को छोटे छोटे दलों में भीमसिंह का पीछा करने की आज्ञा दे रखी थी और बाजा बजाते ही उसे शत्रु के ऊपर जयलाभ की सूचना समझ, उस पर टूट पड़ने का आदेश दे रखा था। अतः जब मुसल्मानों के पृथक् पृथक् दलों ने नगाड़ों का शब्द सुना तब वे चारों ओर से घाटी में आ पहुँचे, और उलगखाँ भी एक ओर से आकर भीमसिंह से युद्ध करने लगा। हिंदू सेनापति कुछ काल तक यह बेजोड़ की लड़ाई लड़ता रहा, पर अंत में घायल हुआ और मारा गया। शत्रु के ऊपर यह जयलाभ पाकर उलगखाँ दिल्ली लौट गया।

यज्ञ पूरा होने के उपरांत हम्मीर ने युद्ध का वृत्तांत और अपने सेनापति भीमसिंह की मृत्यु का समाचार सुना। उन्होंने धर्म्मसिंह को भीमसिंह का साथ छोड़ने के लिये धिक्कारा,

उसको अंधा कहा क्योंकि वह यह न देख सका कि उलगखाँ सेना के पीछे पीछे था। उन्होंने उसको क्लीव भी कहा क्योंकि, वह भीमसिंह की रक्षा के लिये नहीं दौड़ा। इस प्रकार धर्म्मसिंह को धिक्कार कर ही संतुष्ट न होकर राजा ने उस दोषी सेनापति को अंधा करने और उसको क्लीव करने की आज्ञा दी। सेनानायक के पद पर भी धर्म्मसिंह के स्थान पर भोजदेव हुए, जो राजा के एक प्रकार से भाई होते थे और धर्म्मसिंह को देश निकालने का दंड भी सुनाया जा चुका था पर भोजदेव के बीच में पड़ने से उसका बर्त्ताव नहीं हुआ।

धर्म्मसिंह इस प्रकार अवयवभग्न और अपमानित होकर राजा के इस व्यवहार से अत्यंत दुःखित हुआ, और उसने बदला लेने का संकल्प किया। अपने संकल्पसाधन के हेतु उसने राधादेवी नाम की एक वेश्या से, जिसका दरबार में बहुत मान था, गहरी मित्रता की। राधादेवी नित्य प्रति जो कुछ दरबार में होता उसकी रत्ती रत्ती सूचना अपने अंधे मित्र को देती। एक दिन ऐसा हुआ कि राधादेवी बिलकुल उदास और मलिन घर को लौटी, और जब उसके अंधे मित्र ने उसकी उदासी का कारण पूछा तब उसने उत्तर दिया कि आज राजा के बहुत से घोड़े बेधरोग से मर गए इससे उन्होंने मेरे नाचने और गाने की ओर बहुत थोड़ा ध्यान दिया, और जान पड़ता है कि बहुत दिन तक यही दशा रहेगी। अंधे पुरुष ने उसे प्रसन्न होने को कहा क्योंकि थोड़े ही दिनों में सब फिर ठीक हो

जायगा। उसे केवल राजा से यह जताने का अवसर देखते रहना चाहिए कि यदि धर्म्मसिंह अपने पहले पद पर फिर हो जाय तो वह राजा को जितने घोड़े हाल में मरे हैं उनसे दूने भेंट करे। राधादेवी ने अपना काम सफाई से किया, और राजा ने लोभ के वश में होकर धर्म्मसिंह को उसके पहले पद पर फिर आरूढ़ कर दिया।

धर्मसिंह इस प्रकार फिर से नियुक्त होकर बदले ही का विचार करने लगा। राजा का लोभ बढ़ाता गया और उसने अपने अत्याचार और लूट से प्रजा की ऐसी हीन दशा कर दी कि वह राजा से घृणा करने लगी। वह किसी को जिससे कुछ—घोड़ा, रुपया, कोई भी रखने योग्य पदार्थ— मिल सकता था न छोड़ता। राजा, जिसका कोष वह भरता था, अपने अंधे मत्री से बहुत प्रसन्न रहता जिसने, सफलता से फूलकर भोजदेव से उसके विभाग का लेखा माँगा। भोज जानता था कि वह उसके पद से कुढ़ता है, अतः उसने राजा के पास जाकर धर्म्मसिंह के समस्त षड्यंत्र की बात कही और मंत्री के अत्याचार से रक्षा पाने के लिये उनसे प्रार्थना की। किन्तु हम्मीर ने भोज की बात पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया और कहा कि धर्म्मसिंह को पूरा अधिकार सौंपा गया है, वह जो उचित समझे कर सकता है, इसलिये यह आवश्यक है कि और लोग उसकी आज्ञा मानें। भोज ने जब देखा कि राजा का चित्त उसकी ओर से फिर गया है तब उसने अपनी संपत्ति

जब्त होने दी और धर्मसिंह के आज्ञानुसार उसे लाकर राजा के भांडार में रखा। पर कर्त्तव्य के अनुरोध से वह अपने नायक के साथ अब भी जहाँ कहीं वे जाते रहता था। एक दिन राजा बैजनाथ के मंदिर में पूजन के हेतु गए और भोज को अपने दल में देखकर उन्होंने एक सभासद से जो पास खड़ा था, व्यंग्यपूर्वक कहा कि 'पृथ्वी अधम जनों से भरी है; किन्तु पृथ्वी पर सबसे अधम जीव कौआ है, जो क्रुद्ध उल्लू से अपने पर नोचवाकर भी अपने पुराने पेड़ पर के घोंसले में पड़ा रहता है।' भोज ने इस व्यंग्य का अर्थ समझा और यह भी जाना कि यह उसी पर छोड़ा गया है। अत्यंत दुखी होकर वह घर लौट गया और उसने अपने अपमान की बात अपने छोटे भाई पीतम से कही। दोनों भाइयों ने अब देश छोड़ने का संकल्प किया, और दूसरे दिन भोज हम्मीर के पास गया और उसने बड़ी नम्रता से तीर्थाटन के हेतु काशी जाने की अनुमति माँगी। राजा ने उसकी प्रार्थना स्वीकार की और कहा कि 'काशी क्या जी चाहे तो तुम और आगे जा सकते हो—तुम्हारे कारण नगर उजड़ जाने का भय नहीं है।' इस अविनीत वचन का उत्तर भोज ने कुछ न दिया। वह प्रणाम करके चला गया और उसने तुरंत काशी के हेतु प्रस्थान कर दिया। राजा भोजदेव के चले जाने से प्रसन्न हुआ और उसने कोतवाल का पद, जो (उसके जाने से) खाली हुआ, रतिपाल को प्रदान किया।

जब भोज शिरसा पहुँचा तब उसने अपने दिन के फेर पर विचार किया और संकल्प किया कि इन अपमानों का बिना बदला लिए न रहना चाहिए। चित्त की इसी अवस्था में वह अपने भाई पीतम के साथ योगिनीपुर गया और वहाँ अलाउद्दीन से मिला। मुसल्मान सरदार अपने दरबार में भोज के आ जाने से बहुत प्रसन्न हुआ। उसने बड़े आदर से उसके साथ व्यवहार किया और जगरा का नगर तथा इलाका उसे जागीर में दिया। अब से पीतम तथा भोज के परिवार के और लोग यहाँ रहने लगे और वह आप (भोज) दरबार में रहने लगा। अलाउद्दीन का अभिप्राय हम्मीर का वृत्त जानने का था इसलिये वह भेंट और पुरस्कार से दिन दिन भोज की प्रतिष्ठा बढ़ाने लगा और वह भी धीरे धीरे अपने नए स्वामी के हित-साधन में तत्पर हुआ।

भोज को अपने पक्ष में समझ अलाउद्दीन ने एक दिन उससे अकेले में पूछा कि हम्मीर को दबाने का कोई सुगम उपाय है। भोज ने उत्तर दिया कि हम्मीर ऐसे राजा पर विजय पाना कोई सहज काम नहीं है जिससे कुंतल, मध्यदेश, अंग और कांची तक के राजा भयभीत रहते हैं, जो छः गुणों और तीन शक्तियों से संपन्न, एक विशाल और प्रबल सेना का नायक है, जिसकी और समस्त राजा शंका करते और आज्ञा मानते, कई राजाओं को दमन करनेवाला पराक्रमी विराम जिसका भाई है, जिसकी सेवा में महिमासाह तथा और

दूसरे निःशंक मोगल सर्दार रहते हैं, जिसने उसके भाई को हराकर स्वयं अलाउद्दीन को छकाया। भोज ने कहा कि न केवल हम्मीर के पास योग्य सेनापति ही हैं वरन् वे सबके सब उससे स्नेह रखते हैं। एक ओर के सिवाय और कहीं लोभ दिखाना असंभव है। हम्मीर की सभा में केवल एक ही व्यक्ति ऐसा है जो अपने को बेच सकता है। जैसे दीपक के लिये वायु का झोंका, कमल के लिये मेघ, सूर्य्य के लिये रात्रि, यती के लिये स्त्रियों का संग, दूसरे गुणों के लिये लोभ, वैसे ही हम्मीर के लिये अप्रतिष्ठा और नाश का कारण यह एक व्यक्ति है। भोज ने कहा कि वह समय भी हम्मीर के विरुद्ध चढ़ाई करने के लिये अनुपयुक्त नहीं है। इस वर्ष चौहान प्रदेश में खूब अन्न हुआ है। यदि किसी प्रकार अला-उद्दीन उसे रखने के पहले ही किसानों से छीन सके तो वे जो कि अंधे व्यक्ति के अत्याचार से पहले ही से पीड़ित हैं, हम्मीर का पक्ष छोड़ने पर सम्मत हो सकते हैं।

अलाउद्दीन को भोज का विचार पसंद आया और उसने तुरंत उलगखाँ को एक लाख सवारों की सेना लेकर हम्मीर के देश पर आक्रमण करने की आज्ञा दी। उलगखाँ की सेना एक प्रबल धारा के समान जिन प्रदेशों से होकर निकलती उनके अधिपतियों को नरकट के समान नवाती चली जाती। सेना इसी ढंग से हिंदावत पहुँच गई तब उसके आने का समाचार हम्मीर तक पहुँचाया गया। इस पर उस हिंदू राजा ने एक

सभा की और विचार किया कि किन उपायों का अवलंबन करना अच्छा होगा। यह निश्चय हुआ कि वीरम और राज्य के शेष आठ बड़े पदाधिकारी शत्रु से युद्ध करने जायँ। तुरंत राजा के सेनानायकों ने सेना को आठ भागों में विभक्त किया और आठों दिशाओं से आकर वे मुसल्मानों पर टूट पड़े। वीरम पूर्व से आया और महिमासाह पश्चिम से। जाजदेव दक्षिण से और गर्भारूक उत्तर की ओर से बढ़ा। रतिपाल अग्निकोण से आया और तिचर मोगल ने वायुकोण से आक्रमण किया। रणमल ईशानकोण से आया और वैचर ने नैर्ऋत्य की ओर से आकर आक्रमण किया। राजपूत लोग बड़े पराक्रम के साथ अपने कार्य्य में तत्पर हुए। उनमें से कई एक ने शत्रु की खाइयों को मिट्टी और कूड़े करकट से भर दिया, कई एक ने मुसल्मानों के लकड़ी के घेरों में आग लगा दी। कुछ लोगों ने उनके डेरों (खेमों) की रस्सियों को काट डाला। मुसल्मान लोग शस्त्र लेकर खड़े थे और डींग हाँककर कहते थे कि हम राजपूतों को घास के समान काट डालेंगे। दोनों दल साहसपूर्वक जी खोलकर लड़े; किंतु राजपूतों के लगातार आक्रमण के आगे मुसल्मानों को हटना पड़ा। अतएव उनमें से बहुतों ने रणक्षेत्र त्याग दिया और वे अपना प्राण लेकर भागे। कुछ काल पीछे समस्त मुसल्मानी सेना ने इसी रीति का अनुसरण किया और वह कायरता से युद्धक्षेत्र से भागी; राजपूतों की पूरी विजय हुई।

जब युद्ध समाप्त हो गया तब सीधे सादे राजपूत लोग युद्ध-स्थल में अपने मरे और घायल लोगों को उठाने आए। इस खोज में उन्होंने बहुत सा धन, शस्त्र, हाथी और घोड़े पाए। शत्रु की बहुत सी स्त्रियाँ उनके हाथ आईं। रतिपाल ने आते हुए प्रत्येक नगर में उनसे मट्ठा बेचवाया।

हम्मीर शत्रु के ऊपर अपने सेनापतियों की इस विजय-प्राप्ति से अत्यंत प्रसन्न हुए। इस घटना के उपलक्ष में उन्होंने एक बड़ा दरबार किया। दरबार में राजा ने रतिपाल को सोने की सिकरी पहनाई, और उसकी तुलना युद्ध के हाथी से की जो सुवर्ण के पट्टे का अधिकारी होता है। दूसरे सरदार और सिपाही लोग भी अपनी अपनी योग्यता के अनुसार पुरस्कृत किए गए और अनुग्रहपूर्वक उन्हें अपने अपने घर जाने की आज्ञा मिली।

मोगल सरदारों के सिवाय और सब लोग चले गए। हम्मीर ने यह बात देखी और कृपापूर्वक उनसे रह जाने का कारण पूछा। उन्होंने उत्तर दिया कि कृतघ्न भोज को, जो जगरा में जागीर भोग रहा है, दंड देने के पहले हम तलवार म्यान में करना और अपने घर जाना बुरा समझते हैं। उन्होंने कहा कि राजा के संबंध के कारण ही हम लोगों ने उसे अब तक जीता छोड़ा है; किंतु अब वह इस सहनशीलता के योग्य नहीं रहा क्योंकि उसी की प्रेरणा से शत्रु ने रणथंभौर प्रदेश पर चढ़ाई की थी। अतएव उन्होंने जगरा पर चढ़ाई करके

भोज पर आक्रमण करने की अनुमति माँगी। राजा ने प्रार्थना स्वीकार की और दोनों मोगलों ने तुरंत जगरा की ओर प्रस्थान किया। उन्होंने नगर को घेरकर ले लिया और पीतम को कई और मनुष्यों के साथ बंदी बनाकर वे उसे फिर रण-थंभौर ले आए।

उलगखाँ पराजय के पीछे तुरंत दिल्ली लौट गया और जो कुछ हुआ था अपने भाई से उसने सब कह सुनाया। उसके भाई ने उस पर कायरता का दोष लगाया; अपने भागने का दोष उसने यह कहकर मिटाया कि उस अवस्था में मेरे लिये केवल एक यही उपाय था जिससे इस संसार में एक बेर फिर मैं आपका दर्शन करता और चौहान से लड़ने के लिये दूसरा अवसर पाता। उलगखाँ ने बात गढ़कर छुट्टी भी न पाई थी कि क्रोध से लाल भोज भीतर आया। उसने अपने उपवस्त्र को पृथ्वी पर बिछा दिया और उस पर इस प्रकार लोटने और अंडबंड बकने लगा जैसे उस पर प्रेत चढ़ा हो। अलाउद्दीन को उसका यह विलक्षण आचरण कुछ कम बुरा नहीं लगा; उसने उसका कारण पूछा। भोज ने उत्तर दिया कि मेरे लिये इस विपत्ति को कभी भूलना कठिन है जो आज मुझ पर पड़ी है; क्योंकि महिमासाह ने जगरा में जाकर मुझ पर आक्रमण किया और मेरे भाई पीतम को बंदी करके हम्मीर के पास ले गया। भोज ने कहा—लोग घृणा से मेरी ओर उँगली दिखा-कर अब यही कहेंगे कि यह एक ऐसा मनुष्य है जिसने अधिक

पाने के लालच से अपना सर्वस्व खो दिया। असहाय और अनाथ होकर मैं पृथ्वी पर अब भी बेखटके नहीं लेट सकता क्योंकि वह समस्त पृथ्वी हम्मीर की है; इसी लिये मैंने अपना वस्त्र बिछा दिया है जिसमें उसी पर मैं उस शोक में छटपटाऊँ जिसने मुझमें खड़े रहने की शक्ति भी नहीं रहने दी है।

अपने भाई की सहायता की कथा से अलाउद्दीन के हृदय में क्रोध की अग्नि पहले ही से जल उठी थी अब भोज की ये बातें उस अग्नि में आहुति के समान हुईं। हृदय के आवेग में अपनी पगड़ी को पृथ्वी पर पटककर उसने कहा कि हम्मीर की मूर्खता उस मनुष्य की सी है जो समझता है कि मैं सिंह के कपाल पर पैर रख सकता हूँ, और प्रतिज्ञा की कि मैं चौहानों की समस्त जाति ही को नष्ट कर डालूँगा। उसने तुरंत अनेक देशों के राजाओं के पास पत्र भेजे और हम्मीर के विरुद्ध लड़ाई में योग देने के लिये उन्हें बुलाया। अंग, तैलंग, मगध, मैसूर, कलिंग, बंग, भोट, मेड़पाट, पंचाल, बंगाल, थमिम, भिल्ल, नेपाल तथा डाहल के राजा और कुछ हिमालय के सरदार अपना अपना दल आक्रमणकारी सेना में भरने को लाए। इस बहुरंगिनी सेना में कुछ लोग ऐसे थे जो युद्ध की देवी के प्रेम से आए थे, और कुछ ऐसे थे जो लूट की चाह से आक्रमणकारियों के दल में भरती हुए थे। कुछ लोग केवल उस घमासान युद्ध के दर्शक ही होने के हेतु आए थे जो होनेवाला था। हाथी, घोड़ों, रथों और मनुष्यों की इतनी

कसामस थी कि भीड़ में कहीं तिल रखने की जगह नहीं थी। इस भारी समारोह के साथ दोनों भाई नसरतखाँ और उलगखाँ रणथंभौर प्रदेश की ओर चले।

अलाउद्दीन छोटे से दल के साथ इस अभिप्राय से पीछे रह गया जिसमें राजपूतों को यह भय बना रहे कि अभी बादशाह के पास सेना बची है।

सेना की संख्या इतनी अधिक थी कि मार्ग में नदियों का जल चुक जाता था इससे यह आवश्यक हुआ कि सेना किसी एक स्थान पर कुछ घंटों से अधिक न ठहरे। कूच पर कूच बोलते दोनों सेनापति रणथंभौर प्रदेश की सीमा पर पहुँच गये। इससे आक्रमणकारियों के हृदयों में भिन्न भिन्न भाव उत्पन्न हुए। वे लोग जो पहली लड़ाई में सम्मिलित नहीं हुए थे कहते थे कि विजय पाना निश्चित है क्योंकि राजपूतों के लिये ऐसी सेना का सामना करना असंभव है। किंतु पहली चढ़ाई के योद्धा लोग ऐसा नहीं समझते थे और अपने साथियों से कहते थे कि याद रखना हम्मीर की सेना से सामना करना है अतएव युद्ध के अंत तक डींग हाँकना बंद रखना चाहिए।

जब सेना उस घाटी में पहुँची जहाँ उलगखाँ की पराजय और दुर्गति हुई थी तब उसने अपने भाई को शिक्षा दी कि अपनी शक्ति ही पर बहुत भरोसा न करना चाहिए, वरन, चूँकि स्थान विकट और हम्मीर की सेना बली और निपुण है, इससे

यह चाल चलनी चाहिए कि किसी को हम्मीर की सभा में भेज दें जो दो चार दिन तक संधि की बातचीत में उन्हें बहलाए रहे; और इस बीच में सेना कुशलपूर्वक पर्वतों को पार करे और अपनी स्थिति दृढ़ कर ले। नसरतखाँ ने अपने भाई की इस अनुभवपूर्ण बात को माना, और मोल्हणदेव उन बातों का प्रस्ताव करने के लिये भेजा गया जिनसे मुसल्मान लोग हम्मीर के साथ संधि कर सकते थे। बातचीत होने तक हम्मीर के लोगों ने आक्रमणकारी सेना को उस भयानक घाटी को बे-रोक टोक पार करने दिया। अब खाँ ने अपने भाई को तो उस मार्ग के एक पार्श्व में स्थित किया जो मंडी पथ कहलाता था और उसने स्वयं श्रीमंडप के दुर्ग को छेंका। साथी राजाओं के दल जैत्रसागर के चारों ओर टिकाए गए।

दोनों पक्ष अपनी अपनी घात में थे। मुसल्मानों ने समझा कि हम आक्रमण आरंभ करने के लिये धूर्त्तता से उत्तम स्थिति पा गए हैं; उधर राजपूतों ने विचारा कि शत्रु अंतर्भाग में इतनी दूर बढ़ आए हैं कि वे अब हमसे किसी प्रकार भाग नहीं सकते।

रणथंभौर में खाँ के दूत ने राजा की आज्ञा से दुर्ग में प्रवेश पाया; जो कुछ उसने वहाँ देखा उससे उस पर राजा के प्रताप का आतंक छा गया। उसके हेतु जो दरबार हुआ उसमें वह गया, और आवश्यक शिष्टाचार के उपरांत उसने

साहसपूर्वक उस सँदेसे को कहा जो लेकर वह आया था। उसने कहा 'मैं विख्यात अलाउद्दीन के भाई उलगखाँ और नसतरखाँ का दूत होकर राजा के दरबार में आया हूँ; मैं राजा के हृदय में, यदि संभव हो, तो यह बात जमाने के लिये आया हूँ कि अलाउद्दीन ऐसे महाविजयी का सामना करना कैसा निष्फल है और उन्हें अपने सरदार से संधि कर लेने की सम्मति देन आया हूँ।' उसने हम्मीर से संधि के लिये यह चंद शर्तें बतलाईं—"चाहे आप मेरे सरदार को एक लाख मोहर, चार हाथी और तीन सौ घोड़े भेंट करें और अपनी बेटी अलाउद्दीन को ब्याह दें, अथवा उन चार विद्रोही मोगल सरदारों को मेरे हवाले कर दें जो अपन स्वामी के कोपभाजन होकर अब आपकी शरण में रहते हैं।" दूत ने फिर कहा "यदि आप अपने राज्य और प्रताप को शांतिपूर्वक भोगना चाहते हों तो इन दो में से किसी शर्त को मानकर अपना अभिप्राय सिद्ध करने के लिये आपको अच्छा अवसर मिला है; इससे आपको शत्रुओं का नाश करनेवाले बादशाह अलाउद्दीन की कृपा और सहायता प्राप्त होगी जिसके पास असंख्य दृढ़ दुर्ग, सुसज्जित शस्त्रागार और मेगजीन हैं, जिसने देवगढ़ ऐसे ऐसे अगणित अजेय दुर्गों पर अधिकार करके महादेव को भी लज्जित किया क्योंकि उनकी (महादेव की) ख्याति तो अकेले त्रिपुर के गढ़ को सफलतापूर्वक अधिकृत करने से हुई है।

सात के आ जाने पर उलगखाँ को लड़ाई बंद करनी पड़ी। वह दुर्ग से कुछ दूर हट गया और उसने अलाउद्दीन के पास अपनी भयानक स्थिति का समाचार भेजा। उसने नसरत खाँ का शव भी समाधिस्थ करने के निमित्त उसके पास भेज दिया। अलाउद्दीन ने यह समाचार पाकर तुरंत रणथंभौर की ओर प्रस्थान किया। यहाँ पहुँचकर उसने तुरंत अपनी सेना को दुर्ग के द्वार की ओर बढ़ाया और उसे छेंक लिया।

हम्मीर ने इन कार्य्यों की तुच्छता सूचित करने के लिये दुर्ग की दीवारों पर कई जगह सूप के झंडे गड़वा दिए। इससे यह अभिप्राय झलकता था कि दुर्ग सम्मुख अलाउद्दीन के आगमन से राजपूतों को कुछ भी बोझ वा कष्ट नहीं मालूम होता था। मुसल्मान सरदार ने देखा कि उससे साधारण धैर्य्य और साहस के मनुष्यों से पाला नहीं पड़ा है, और उसने हम्मीर के पास सँदेसा भेजकर यह कहलाया कि मैं तुम्हारी वीरता से बहुत प्रसन्न हूँ, और ऐसा पराक्रमी शत्रु चाहे जिस बात की प्रार्थना करे उसे मानने में मैं प्रसन्न हूँ। हम्मीर ने उत्तर दिया कि यदि अलाउद्दीन जो मैं चाहूँ उसे देने में प्रसन्न है तो मेरे लिये इससे बढ़कर संतोष की बात और कोई नहीं होगी कि वह दो दिन मेरे साथ युद्ध करे, और मुझे आशा है कि मेरी यह प्रार्थना स्वीकृत होगी। मुसल्मान सरदार ने इस उत्तर की यह कहकर बड़ी प्रशंसा की कि वह सर्वथा उसके प्रतिद्वंद्वी के साहस के योग्य है, और उससे

दूसरे दिन युद्ध रोपने का वचन दिया। इसके अनंतर अत्यंत भीषण और कराल युद्ध हुआ। इन दो दिनों में मुसल्मानों के कम से कम ८५००० आदमी मारे गए। दोनों योद्धाओं के बीच कुछ दिन विश्राम करना निश्चित होने पर लड़ाई कुछ काल के लिये बंद हुई।

इस बीच में एक दिन राजा ने दुर्ग के प्राचीर पर राधादेवी का नाच कराया: उनके चारों ओर बड़ा जमाव था। यह स्त्री क्रम से क्षण क्षण पर घूमती हुई, जिसे संगीत जाननेवाले ही अच्छी तरह समझ सकते थे, जान बूझकर अपनी पीठ अलाउद्दीन की ओर फेर लेती थी जो किले से थोड़ी दूर नीचे अपने डेरे में बैठा यह सब देख रहा था। कोई आश्चर्य नहीं कि वह इस आचरण से रुष्ट हुआ, और कोप करके अपने पास के लोगों से उसने कहा कि क्या मेरे असंख्य साथियों में कोई ऐसा है जो इस स्त्री को इतनी दूर से एक तीर से मारकर गिरा सकता है। एक सरदार ने उत्तर दिया कि मैं केवल एक आदमी को जानता हूँ जो यह काम कर सकता है, वह उड्डानसिंह है जिसे बादशाह ने कैद कर रखा है। कैदी तुरंत छोड़ दिया गया और अलाउद्दीन के पास लाया गया जिसने उसे उस सुंदर लक्ष्य पर अपना कौशल दिखाने की आज्ञा दी। उड्डानसिंह ने आज्ञानुसार वैसा ही किया, और एक क्षण में उस वारांगना की सुंदर देह बाण से बिधकर दुर्ग की दीवार पर से सिर के बल नीचे गिरी।

इस घटना से महिमासाह को बहुत क्रोध हुआ और उसने राजा से अलाउद्दीन के साथ भी वही व्यवहार करने की अनुमति माँगी जो उसने बेचारी राधादेवी के साथ किया था। राजा ने उत्तर दिया कि मुझे तुम्हारी धनुर्विद्या का असाधारण कौशल विदित है, किंतु मैं नहीं चाहता कि अलाउद्दीन इस रीति से मारा जाय क्योंकि उसकी मृत्यु से मेरे साथ शस्त्र ग्रहण करनेवाला कोई पराक्रमी शत्रु न रह जायगा। महिमा-साह ने तब प्रत्यंचा चढ़े हुए बाण को उड्डानसिंह पर छोड़ा और उसे मार गिराया। महिमासाह के इस कौशल ने अलाउद्दीन को इतना सशंकित कर दिया कि वह तुरंत अपने डेरे को झील के पूर्वीय पार्श्व से हटाकर पश्चिम की ओर ले गया जहाँ ऐसे आक्रमणों से अधिक रक्षा हो सकती थी। जब डेरा हटाया गया तब राजपूतों ने देखा कि शत्रु ने नीचे नीचे सुरंग तैयार कर ली है, और खाई के एक भाग पर मिट्टी से ढका हुआ लकड़ी और घास का पुल बाँधने का यत्न किया है। राजपूतों ने इस पुल को तोपों से नष्ट कर दिया, और सुरंग में खौलता हुआ तेल डालकर उन लोगों को मार डाला जो भीतर काम कर रहे थे। इस प्रकार अलाउद्दीन का गढ़ लेने का सब यत्न निष्फल हुआ। उसी समय वर्षा से भी उसे बहुत कष्ट होने लगा जो मूसलाधार होती थी। अतएव उसने हम्मीर के पास सँदेसा भेजा कि कृपा करके रतिपाल को मेरे डेरे में भेज दीजिए क्योंकि मुझे उनसे इस अभिप्राय

से बातचीत करने की इच्छा है कि जिसमें हमारे और आपके बीच का झगड़ा शांतिपूर्वक तै हो जाय।

राजा ने रतिपाल को जाकर अलाउद्दीन की बात सुनने की आज्ञा दी। रणमल रतिपाल के प्रभाव से कुढ़ता था और नहीं चाहता था कि वह इस काम के लिये चुना जाय।

अलाउद्दीन रतिपाल से बड़े ही आदर के साथ मिला। उसके दरबार के डेरे में प्रवेश करने पर मुसल्मान सरदार अपने स्थान पर से उठा और उसे आलिंगन करके उसने अपनी गद्दी पर बैठाया और वह आप उसके बगल में बैठ गया। उसने अमूल्य भेंट उसके सामने रखवाई तथा और भी पुरस्कार देने का वचन दिया। रतिपाल इस सुंदर व्यवहार से बहुत प्रसन्न हुआ। उस धूर्त्त मुसल्मान ने यह देखकर और लोगों को वहाँ से हट जाने की आज्ञा दी। जब वे सब चले गए तब उसने रतिपाल से बातचीत आरंभ की। उसने कहा—"मैं अलाउद्दीन मुसल्मानों का बादशाह हूँ, और मैंने अब तक सैकड़ों दुर्ग ढहाए और लिए हैं। किंतु शस्त्र के बल से रण-थंभौर को लेना मेरे लिये असंभव है। इस दुर्ग को घेरने से मेरा अभिप्राय केवल उसके अधिकार की ख्याति पाना है। मैं आशा करता हूँ (जब कि आपने मुझसे मिलना स्वीकार किया है) कि मैं अपना मनोरथ सिद्ध करूँगा और अपनी इच्छा पूरी करने में मुझे आपसे कुछ सहायता पाने का भरोसा है। मैं अपने लिये और अधिक राज्य और किले

नहीं चाहता। जब मैं इस गढ़ को लूँगा तब इसके सिवाय और क्या कर सकता हूँ कि उसे आप ऐसे मित्र को दे दूँ ? मुझे तो उसके प्राप्त करने की ख्याति ही से प्रसन्नता होगी।" ऐसी ऐसी फुसलाहटों से रतिपाल का मन फिर गया और उसने इस बात का अलाउद्दीन को निश्चय भी करा दिया। इस पर, अलाउद्दीन अपने लक्ष्य को और भी दृढ़ करने के लिये रतिपाल को अपने हरम में ले गया और वहाँ उसने उसे अपनी सब से छोटी बहिन के साथ खान पान करने के लिये एकांत में छोड़ दिया। यह हो चुकने पर रतिपाल मुसल्मानों के डेरे से निकलकर दुर्ग को लौट आया।

रतिपाल इस प्रकार अलाउद्दीन के पक्ष में हो गया। अतएव जब वह राजा के पास आया तब उसने जो कुछ मुसल्मानों के डेरे में देखा था और जो कुछ अलाउद्दीन ने उससे कहा था, उसका सच्चा वृत्तांत नहीं कहा। यह न कहकर कि अलाउद्दीन का बल राजपूतों के लगातार आक्रमण से बिलकुल टूट गया है और वह गढ़ लेने का नाम मात्र करके लौटना चाहता है उसने कहा कि वह न केवल राजा से दीनतापूर्वक अधीनता स्वीकार कराने ही पर उतारू है वरंच उसमें अपने धमकियों को सच्चा कर दिखाने की सामर्थ्य है। रतिपाल ने कहा कि अलाउद्दीन इस बात को मानता है कि राजपूतों ने उसके कुछ सिपाहियों को मारा है किंतु इसकी उसे कुछ परवा नहीं, 'गोजर की एक टाँग टूटने से, वह लँगड़ा नहीं कहा जा

सकता'। उसने हम्मीर को सम्मति दी कि ऐसी दशा में आपको स्वयं इसी रात को रणमल से मिलना चाहिए और उसे आक्रमणकारियों को हटाने पर उद्यत करना चाहिए, देश-द्रोही रतिपाल ने कहा कि रणमल एक असाधारण योद्धा है किंतु वह शत्रुओं को हटाने का पूरा पूरा उद्योग नहीं करता है क्योंकि वह राजा से किसी न किसी बात के लिये दुखी है। रतिपाल बोला कि राजा के मिलने से सब बातें ठीक हो जायँगी।

राजा से मिलने के उपरांत रतिपाल रणमल से मिलने गया और वहाँ जाकर मानों अपने पुराने मित्र को सर्वनाश से बचाने के निमित्त उसने कहा कि न जाने क्यों राजा का चित्त तुम्हारी ओर से फिर गया है इससे युद्ध के पहले ही हल्ले में तुम शत्रु की ओर हो जाना। उसने कहा कि हम्मीर इसी रात को तुम्हें बंदी बनाना चाहता है। उसने उससे वह घड़ी भी बतलाई जब राजा उसके पास इस अभिप्राय से आवेंगे। यह सब करके रतिपाल चुपचाप अपनी इस शठता का परिणाम देखने की प्रतीक्षा करने लगा।

जब रतिपाल हम्मीर से मिलने गया था तब उनके पास उनका भाई वीरम भी था। उसने अपने भाई से यह विश्वास प्रगट किया कि रतिपाल ने जो कुछ कहा है वह सत्य नहीं है। शत्रुओं ने उसे अपनी ओर मिला लिया है। उसने कहा कि बोलते समय रतिपाल के मुँह से मद्य की गंध आती

थी, और मद्यप का विश्वास करना उचित नहीं। कुल का अभिमान, शील, विवेक, लज्जा, स्वामिभक्ति, सत्य और शौच ये ऐसे गुण हैं जो मद्यपों में नहीं पाए जा सकते। अपनी प्रजा में राजद्रोह का प्रचार रोकने के लिये वीरम ने अपने भाई को रतिपाल के बध की सम्मति दी। किंतु राजा ने इस प्रस्ताव को यह कहकर अस्वीकार किया कि मेरा दुर्ग इतना दृढ़ है कि वह शत्रु को किसी दशा में भी रोक सकता है; किंतु यदि कहीं संयोगवश रतिपाल के बध के अनंतर यह गढ़ शत्रुओं के हाथ में पड़ जायगा तो लोगों को यह कहने को हो जायगा कि एक निर्दोष मनुष्य के बध के दुष्कर्म के कारण उसका पतन हुआ।

इस बीच में रतिपाल ने राजा के रनिवास में यह खबर फैलाई कि अलाउद्दीन केवल राजा की कन्या से विवाह करना चाहता है और यदि उसकी यह इच्छा पूरी हो जाय तो वह संधि करने के लिये प्रस्तुत है, क्योंकि वह और कुछ नहीं चाहता। इस पर रानियों ने राजकन्या से राजा के पास जाकर यह कहने को कहा कि मैं अलाउद्दीन से विवाह करने में सहमत हूँ। वह कन्या वहाँ गई जहाँ उसके पिता बैठे थे और उसने उनसे अपने राज्य और शरीर की रक्षा के हेतु अपने को मुसल्मान को दे डालने की प्रार्थना की। उस (कन्या) ने कहा "हे पिता मैं एक व्यर्थ काँच के टुकड़े के समान हूँ और आपका राज्य और प्राण चिंतामणि वा

पारस पत्थर के समान है; मैं बिनती करती हूँ कि आप उनको रखने के लिये मुझको फेंक दीजिए।"

जब वह भोली भाली लड़की इस प्रकार हाथ जोड़कर बोली तब राजा का जी भर आया। उन्होंने उससे कहा, "तुम अभी बालिका हो इससे जो कुछ तुम्हें सिखाया गया है उसके कहने में तुम्हारा दोष नहीं। किंतु मैं नहीं कह सकता कि उनको क्या दंड मिलना चाहिए जिन्होंने तुम्हारे हृदय में ऐसे ख्याल भर दिए हैं। स्त्रियों का अंग भंग करना राजपूतों का काम नहीं, नहीं तो उनकी जीभ काट ली जाती जिन्होंने ऐसी कुत्सित बात मेरी कन्या के कान में कही।" हम्मीर ने फिर कहा "पुत्री! तुम अभी इन बातों को समझने के लिये बहुत छोटी हो इससे तुम्हें बतलाना व्यर्थ है। किंतु तुम्हें म्लेच्छ मुसल्मान को देकर सुख भोगना मेरे लिये ऐसा ही है जैसा अपना ही मांस खाकर जीवन काटना। ऐसे संबंध से मेरे कुल में कलंक लगेगा, मुक्ति की आशा नष्ट होगी, इस संसार में हमारे अंतिम दिन कड़ुए हो जायँगे। मैं ऐसे कलंकित जीवन की अपेक्षा दस हजार बार मरना अच्छा समझता हूँ"। अब वे चुप हुए और दृढ़ता तथा स्नेह-पूर्वक अपनी कन्या को चले जाने को उन्होंने कहा।

राजा, रतिपाल की सम्मति के अनुसार संध्या के समय अपनी शंकाओं को मिटाने के लिये रणमल के डेरे पर जाने को तैयार हुए, साथ में उन्होंने बहुत थोड़े आदमी लिए।

जब वे रणमल के डेरे के निकट पहुँचे तब उसको (रणमल को) रतिपाल की बात याद आई, वह यह समझकर कि यदि मैं यहाँ ठहरूँगा तो मेरा बंदी होना निश्चय है, अपने दल के सहित गढ़ से भाग निकला और अलाउद्दीन की ओर जा मिला; यह देखकर रतिपाल ने भी वैसा ही किया।

राजा इस प्रकार ठगे और घबड़ाए हुए कोट में लौट आए और उन्होंने भंडारी को बुलाकर भंडार की दशा पूछी कि कितने दिन तक सामान चल सकता है। भंडारी ने सच्ची बात कहने में अपने प्रभाव की हानि समझ, कहा कि सामान बहुत दिन तक के लिये काफी है। किंतु ज्योंहीं यह कह-कर वह फिरा त्योंही विदित हुआ कि राजभांडार में कुछ भी अन्न नहीं है। राजा ने यह समाचार पाकर वीरम को उसके मारने और उसकी समस्त संपत्ति पद्मसागर में फेंक देने की आज्ञा दी।

उस दिन की अनेक आपत्तियों को झेलकर, राजा शिथि-लता से अपनी शय्या पर जा पड़े। किंतु उनकी आँखों में उस भयावनी रात को नींद नहीं आई। जिन लोगों के साथ वे भाई से बढ़कर स्नेह का व्यवहार करते थे उनका उन्हें ऐसी दशा में अकेले छोड़कर एक एक करके चल खड़े होना उनको असह्य जान पड़ता था। जब सबेरा हुआ तब उन्होंने नित्य-क्रिया की और दरबार में बैठकर वे उस समय की दशा पर विचार करने लगे। उन्होंने सोचा कि जब हमारे राजपूतों ही

ने हमें छोड़ दिया तब महिमासाह का क्या विश्वास, जो मुसल्मान और विजातीय है। इसी दशा में उन्होंने महिमा-साह को बुला भेजा और उससे कहा "सच्चा राजपूत होकर मेरा यह धर्म्म है कि देश की रक्षा में मैं अपना प्राण त्याग दूँ, किंतु मेरे विचार में यह अनुचित है कि वे लोग जो मेरी जाति के नहीं मेरे हेतु युद्ध में अपने प्राण खोवें, इससे मेरी इच्छा है कि तुम कोई रक्षा का ऐसा स्थान बतलाओ जहाँ तुम सपरिवार जा सकते हो जिससे मैं तुम्हें कुशलपूर्वक वहाँ पहुँचवा दूँ।"

राजा के इस शील से सकुचित होकर, महिमासाह बिना कुछ उत्तर दिए, अपने घर लौट गया, और वहाँ तलवार लेकर उसने अपने जनाने के सब लोगों को काट डाला और हम्मीर के पास आकर कहा कि मेरी स्त्री और मेरे लड़के जाने को तैयार हैं किंतु मेरी स्त्री एक बेर अपने राजा का मुँह देखना चाहती है जिसकी कृपा से उसने इतने दिनों तक सुख किया। राजा ने यह प्रार्थना अंगीकार की और अपने भाई वीरम के साथ वे महिमासाह के घर गए। किंतु वहाँ जाने पर यह हत्याकांड देख उनके आश्चर्य्य और शोक का ठिकाना न रहा। राजा, महिमासाह को हृदय से लगाकर बच्चे के समान रोने लगे। उन्होंने उससे चले जाने को कहने के कारण अपने को दोषी ठहराया और कहा कि ऐसी अलौकिक स्वामिभक्ति का बदला नहीं हो सकता। अतः धीरे धीरे, वे

कोट में लौट आए और प्रत्येक वस्तु को गई हुई समझ, उन्होंने अपने लोगों से कहा कि तुम लोग जो उचित समझो वह करो, मैं तो शत्रु के बीच लड़कर प्राण देने को उद्यत हूँ। इसकी तैयारी में, उनके परिवार की स्त्रियाँ रंगदेवी के साथ चिता पर जलकर भस्म हो गईं। जब राजा की कन्या चिता पर चढ़ने लगी तब राजा शोक के वशीभूत हुए। वे उसे हृदय से लगाकर छोड़ते ही न थे। किंतु उसने अपने को पिता की गोद से छुड़ाकर अग्नि में विसर्जन कर दिया। जब चौहानों की सती साध्वी ललनाओं की राख के ढेर के अतिरिक्त और कुछ न रह गया तब हम्मीर ने मृतक संस्कार किया और तिलांजलि देकर उनकी आत्माओं को शांत किया। इसके अनंतर वे अपनी बची हुई स्वामिभक्त सेना को लेकर गढ़ के बाहर निकले और शत्रुओं पर टूट पड़े। भीषण सम्मुख युद्ध उपस्थित हुआ। पहले वीरम युद्ध की कसामस्म के बीच लड़ते हुए गिरे, फिर महिमासाह के हृदय में गोली लगी। इसके पीछे जाज, गंगाधर, ताक और चेत्रसिंह परमार ने उनका साथ दिया। सबके अंत में महापराक्रमी हम्मीर सैकड़ों भालों से बिधे हुए गिरे। प्राण का लेश रहते भी शत्रु के हाथ में पड़ना बुरा समझ उन्होंने एक ही वार में अपने हाथों से सिर को धड़ से जुदा कर दिया और इस प्रकार अपने जीवन को शेष किया। इस प्रकार चौहानों के अंतिम राजा हम्मीर का पतन हुआ! यह

शोचनीय घटना उनके राज्य के अठारहवें वर्ष में श्रावण के महीने में हुई।

यहाँ पर यह कथा समाप्त होती है। दोनों के मिलान करने पर मुख्य मुख्य बातों में आकाश पाताल का अंतर जान पड़ता है। किस में कहाँ तक सत्यता है इसका निर्णय करना बड़ा कठिन है। दोनों कथाओं में हम्मीर के पिता का नाम जैत्रसिंह लिखा है अतएव इस संबंध में कोई संदेह की बात नहीं जान पड़ती। हम्मीररासो में लिखा है कि हम्मीर का जन्म विक्रम संवत् ११४१ शाके १००८ में हुआ। साथ ही यह भी लिखा है कि अलाउद्दीन का जन्म भी इसी दिन हुआ। इस हिसाब से हम्मीर और अलाउद्दीन का जन्म १०८४ ई० में हुआ। पर अन्य ऐतिहासिक ग्रंथों से यह बात ठीक नहीं जान पड़ती। हम्मीर महाकाव्य में हम्मीर के गद्दी पर बैठने का संवत् १३३० (सन् १२८३ ई०) दिया है। यह ठीक जान पड़ता है। फिर हम्मीर महाकाव्य में लिखा है कि चौहान-राज की मृत्यु उनके राज्य के अठारहवें वर्ष में अर्थात संवत् १३४८ सन् १३०१ ई० में हुई। अमीर खुशक की तारीख आलाई में यह तिथि तीसरी जीलकाद ७०० हिजरी (जुलाई १३०१ ई०) दी है। मुसलमानी इतिहासों से विदित है कि सन् १२९६ में सुल्तान अलाउद्दीन मुहम्मदशाह अपने चाचा जलालुद्दीन फीरोजशाह को मारकर गद्दी पर बैठा, और सन् १३१६ ई० तक राज्य करता रहा। इस

अवस्था में हम्मीररासो में दिए हुए संवत् ठीक नहीं हो सकते। कदाचित् यहाँ यह कह देना भी अनुचित न होगा कि हम्मीररासो में हम्मीर की जो जन्म कुंडली दी है वह भी ठीक नहीं है।

दूसरी बात जो इस काव्य के संबंध में विचार करने की है वह यह है कि हम्मीर की अलाउद्दीन से लड़ाई क्यों हुई। हम्मीररासो तथा ऐसे ही अन्य हिंदी काव्यों में मीर महिमाशाह की रक्षा के लिये युद्ध का होना लिखा गया है और इसमें कोई संदेह नहीं कि इस अद्भुत कथा से हम्मीर का गौरव बहुत कुछ बढ़ जाता है और कथा में भी एक अद्‌भुत रस का संचार हो आता है। पर हम्मीर महाकाव्य में इसका कहीं नाम भी नहीं है और न कहीं किसी पुराने इतिहास में इसका वर्णन मिलता है पर महिमाशाह का हम्मीर के यहाँ रहना निश्चित है तथा उसके अपने बाल बच्चों को मारकर लड़ाई में हम्मीर के साथ देने की बात भी ठीक है। यह अवस्था तभी हो सकती है जब महिमाशाह अपने को हम्मीर का किसी बड़े उपकार के लिये ऋणी मानता हो। अलाउद्दीन का साथ न देकर हम्मीर का साथ देना एक मुसलमान सर्दार के लिये निस्सन्देह बड़े आश्चर्य की बात है। हिंदी काव्यों में जिन घटनाओं का उल्लेख है उनका होना तो कोई असंभव बात है ही नहीं। भारतवर्ष में जितने बड़े बड़े युद्ध हुए हैं सब स्त्रियों के ही कारण हुए हैं। पृथ्वीराज के समय में तो मानों इसकी पराकाष्ठा

हो गई थी। पर मुसल्मानों के लिये यह निन्दा की बात थी। इसलिये मुसल्मान इतिहासकारों का इस घटना को छोड़कर युद्ध का कुछ दूसरा ही कारण बताना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। पर नयनचंद्र सूरि का कुछ न कहना अवश्य संदेह उत्पन्न करता है। अलाउद्दीन ने जिस नीचता से रतिपाल को मिला लिया इसका तो यह कवि पूरा पूरा वर्णन करता है। यहाँ के कुछ श्लोक उद्धृत कर देना उचित जान पड़ता है।

अन्तरंतःपुरं नीत्वा शकेशस्तमभोजयत्।
अपीप्यत्तद्भगिन्या च प्रतीत्यै मदिरामपि ॥ ८१ ॥
प्रतिश्रुत्य शकेशोक्तं ततः सर्वं स दुर्मतिः।
विरोधोद्बोधिनीर्वाचो गत्वा राज्ञे न्यरूपयत् ॥ ८२ ॥

[सर्ग १३]

इनसे यह स्पष्ट विदित होता है कि नयनचंद्र कुछ मुसल्मानों का पक्षपाती नहीं था। कुछ लोग कह सकते हैं कि जैनी होने से उसका विरोधी होना असंभव नहीं है। मेरा अनुमान तो यह है कि उसने मुसल्मानी इतिहासों के आधार पर अपना काव्य लिखा है क्योंकि उसमें कथित घटनाएँ और सन संवत् सब मुसल्मानी इतिहासों से मिलते हैं। जो कुछ हो इसमें कोई संदेह नहीं कि ऐतिहासिक दृष्टि से नयनचंद्र सूरि का काव्य जोधराज के रासो से अधिक प्रामाणिक है।

तीसरी घटना जिस पर विचार करना आवश्यक है वह हम्मीर की मृत्यु है। दोनों काव्यों से यह सिद्ध होता है कि हम्मीर ने आत्महत्या की। हम्मीररासो में इसका कारण कुछ और ही लिखा है और हम्मीर महाकाव्य में कुछ और है। जोधराज के अनुसार हम्मीर को विजय प्राप्त हुई और विजय के उत्साह में उसने मुसल्मानी झंडे निशानों को आगे करके अपने गढ़ की ओर पयान किया जिस पर रानियों और रनिवास की अन्य महिलाओं ने यह समझा कि हम्मीर की हार हुई और मुसल्मानी सेना गढ़ को लेने के लिये आ रही है। इस पर अपने सतीत्व की रक्षा के निमित्त उन्होंने अग्नि में अपने प्राण दे दिए। इस पर हम्मीर को ऐसी ग्लानि हुई कि उसने भी अपने प्राण देकर अपने संताप को शांत किया। नयनचंद्र के अनुसार रणमल और रतिपाल के विश्वासघात पर विजय की सब आशा जाती रही और हम्मीर ने पहले राजमहिलाओं को अग्निदेव के अर्पण कर रण में वीरोचित मृत्यु से मरना विचारा। अंत में जब उसका शरीर रणक्षेत्र में विधकर गिर पड़ा तो उसे आशंका हुई कि कहीं मुसलमानों के हाथ से मेरे प्राण न जायँ। इसलिये वहीं उसने अपने मस्तक को अपने हाथ से काटकर इस आशंकित अपमान से अपनी रक्षा की। दोनों बातों में राजमहिलाओं का अग्नि में आत्म-समर्पण करना और हम्मीर का आत्महत्या करना मिलता है और इन घटनाओं के संघटित होने में भी कोई संदेह या आश्चर्य की बात

नहीं है। जो कथा इस संबंध में दोनों काव्यों में दी है वह युक्तिसंगत जान पड़ती है। कौन कहाँ तक सत्य है इसका निर्णय करना तो बड़ा कठिन है, विशेष करके ऐतिहासिक प्रमाणों के अभाव में तो इस संबंध में कुछ कहना व्यर्थ है। जोधराज का यह लिखना कि अलाउद्दीन ने समुद्र में कूदकर अपने प्राण दे दिए निस्संदेह असत्य जान पड़ता है। इस युद्ध के १५ वर्ष पीछे तक वह जीता रहा इसके अनेक प्रमाण मिलते हैं।

जो कुछ हो, ऐतिहासिक अंश में गड़बड़ रहने पर भी हम्मीर की कथा बड़ी अद्भुत है और भारतवर्ष के गौरव को बढ़ानेवाली है। कौन ऐसा स्वदेशाभिमानी होगा जो राज-महिलाओं के जौहर और हम्मीर की वीरता तथा उसके साहस का वृत्तांत पढ़कर अपने को धन्य न मानता हो और जिसका हृदय देशगौरव से न भर जाता हो। धन्य है वह देश जहाँ ऐसे ऐसे वीर हो गए हैं, धन्य हैं वे स्त्रियाँ जो अपने सतीत्व की रक्षा के लिये बिना कुछ सोचे विचारे इस क्षणभंगुर शरीर को नष्ट कर डालती थीं और धन्य हैं वे लोग जो उनके वृत्तांतों को पढ़कर आनंदित और प्रफुल्लित होते हैं और जिन्हें अपने देश के गौरव की रक्षा का उत्साह होता हो।

मैं पहले लिख चुका हूँ कि दो हम्मीर हो गए हैं। एक के विषय में तो मैंने इतना कुछ मसाला इकट्ठा कर दिया है। मेवाड़ के हम्मीर के विषय में भी कुछ कह देना आवश्यक

जानकर ठाकुर हनुवंत सिंह लिखित मेवाड़ के इतिहास से इनका वृत्तांत उद्धृत कर देता हूँ। वह इस प्रकार है—

"लखमसी जी के पीछे मुसलमानों से बैर लेनेवाला अब केवल उनका लड़का अजयसिंह था जो कि केलवाड़े में रहता था। यह केलवाड़ा अर्बेली पर्वत के उच्च प्रदेश में है। वहाँ उसकी रक्षा करनेवाले भील लोग थे। अजयसिंह जी के बड़े भाई अरसी जी के कुँअर हम्मीरसिंह को अपने पीछे गद्दी पर बिठलाने का वचन लखमसी जी ने अजयसिंह से ले लिया था इससे तथा अजयसिंह के पुत्र के हम्मीरसिंह के समान पराक्रमी न होने से उनके उत्तराधिकारी हम्मीरसिंह ही थे। इनकी माता के विषय में यह कथा प्रसिद्ध है कि एक दिन अरसी जी युवराजत्व अवस्था में ऊदवा गाँव के जंगल में आखेट को गए थे। वहाँ जब एक सूअर के पीछे इन्होंने घोड़ा दिया तो वह भागकर ज्वार के खेत में घुस गया। ज्योंही अरसी जी सूअर के पीछे खेत में जाने लगे त्योंही एक कन्या ने, जो उस खेत की चौकसी कर रही थी, इनको भीतर जाने से रोका और कहा कि ठहरो सूअर को मैं बाहर निकाले देती हूँ। फिर उस लड़की ने ज्वार के पेड़ को उखाड़ सूअर को दो चार सपाटा लगाकर उसे उनकी ओर खदेड़ दिया। उस लड़की की निर्भयता को देख आखेटकों को बड़ा आश्चर्य्य हुआ। पीछे जब कि वे एक नाले पर विश्राम करने के लिये ठहरे हुए थे तो सनसनाता हुआ दूर से एक पत्थर का टुकड़ा आया और घोड़े

की टाँग में ऐसे जोर से लगा कि उसका पैर टूट गया। बहुत ही छोटे से पत्थर के टुकड़े से घोड़े का पैर टूटा हुआ देख खोजा गया तो उसकी मारनेवाली भी वही खेत की रखवालिन कन्या निकली। पक्षियों के उड़ाने को उसने गोफन में रख कर गिल्ला फेंका था परंतु दैवयोग से वह घोड़े को आ लगा। जब उसने यह सुना कि घोड़े को चोट लग गई है तो अरसी जी के पास जाकर अपने बिना जाने अपराध की क्षमा बड़ी नम्रता से माँगी। संध्या को लौटते समय अरसी जी को फिर वही कन्या अपने घर को जाती हुई राह में मिली। यह लड़की माथे पर दूध का मटका रखे और दोनों हाथों में दो पड़रे (भैंस के बच्चे) लिए हुए जा रही थी, उस समय अरसी जी के साथियों में से एक ने हँसी में उसके दूध को गिरा देने का विचार किया और वह मनुष्य घोड़ा दौड़ाता हुआ उसके पास होकर निकला। इससे यह लड़की कुछ भी न घबड़ाई और अपने हाथ में का एक पड़रा घोड़े के पिछले पैरों में ऐसा मारा कि घोड़ा और सवार दोनों धरती पर गिर पड़े और हँसी के बदले उलटी अपनी हानि कर ली। अरसी जी ने घर जाकर निश्चय कराया तो वह कन्या चंदाना वंश (चहुवानों की एक शाखा है) के एक राजपूत की पुत्री निकली। अरसी जी ने उसके बाप को बुलवाकर उससे अपने विवाह करने के लिये वह लड़की माँगी, परंतु उस राजपूत ने निषेध कर दिया। घर पहूँचकर जब अपनी स्त्री से उसने सब वृत्तांत

कहा तो वह पति के इस कार्य्य से बहुत अप्रसन्न हुई और लग्न स्वीकार करने के लिये अपने पति को फिर अरसी जी के पास उसने लौटाया। अंत में अरसी जी का उस कन्या के साथ विवाह हुआ, जिसके पेट से अति पराक्रमी हम्मीर-सिंह ने जन्म लिया। सिंहनी के पेट में तो सिंह ही जन्म लेता है। हम्मीरसिंह जी बचपन में अपनी ननसाल में रह-कर बड़े हुए थे।

"हम्मीरसिंह के काका अजयसिंह जब केलवाड़े में रहते थे तो उनकी मुसलमानों के सिवाय पहाड़ियों में रहनेवाले राज-पूत सर्दारों के साथ भी बड़ी लड़ाई रही। इन पहाड़ियों का मुखिया बालेछा जाति का मूंजा नामी एक राजपूत था जिसके साथ लड़ाई करने में एक बार अजयसिंह बहुत घायल हुए। इस समय अजयसिंह के दो पुत्र सजनसी और अजीतसी भी थे जिनकी आयु अनुमान १५ वर्ष के थी परंतु वे कुछ भी वीरता लड़ाई में न दिखा सके, इससे उन्होंने अपने भतीजे हम्मीर-सिंह को बुला लिया और उनको सब वृत्तांत कह सुनाया। हम्मीरसिंह अपने दोनों चचेरे भाइयों से बड़े न थे परंतु तो भी उन्होंने मूंजा बालेछा का सिर काट लेने का उत्साह किया। मरना वा मूंजा का सिर काट लाना ऐसा विचार निश्चय करके वे निकले। थोड़े दिनों में उन्होंने मूंजा का सिर काट लाकर अपने काका को भेट किया। अजयसिंह इस बात से बहुत प्रसन्न हुए, और मूंजा के ही रुधिर से तिलक करके अपने

पीछे हम्मीरसिंह को राज्य का अधिकारी ठहराया। जब अजयसिंह मरे तो उनसे पहले ही अजमाल मर चुके थे, सजनसी गद्दी के लिये अधिकारी हम्मीरसिंह को नियत हुआ देख दक्षिण में चले गए, जिनके वंश में एक ऐसा वीर पुरुष जन्मा कि जिसने मुसल्मानों से पूरा बदला ही न लिया किंतु अपने असामान्य पराक्रम और साहस से मुसल्मानी राज्य का मूलोच्छेदन ही कर दिया। यह पुरुष मरहठों के राज्य की नींव जमानेवाला सितारे का राजा शिव जी था जो समस्त भारतवर्ष में विख्यात है। सजनसी से बारहवीं पीढ़ी में यह हिंदू धर्म्म-रक्षक और अतुलित पराक्रमी वीर पुरुष शिव जी हुआ है। सजनसी जी से पीछे दुलीपजी, सीओजी, भोराजी, देवराज, उग्रसेन, माहुलजी, खेलुजी, जनकोजी, संतोजी, शाहजी और शिव जी हुए। अजयसिंह के पीछे हम्मीरसिंह सं० १३०१ ई० में मेवाड़ की गद्दी पर बैठे। उस समय मेवाड़ की गिरती दशा होने से आस-पास के राजा लोगों ने मेवाड़ के राणाओं को अपना शिरोमणि मानना छोड़ दिया था। हम्मीरसिंह ने अपने पहाड़ी साथियों को इकट्ठा करके जिन जिन राजाओं ने इनको अधिष्ठाता मानना छोड़ दिया था उन सभों को परास्त करके अपने अधीन किया। इस प्रकार थोड़े दिनों में ही हम्मीरसिंह ने अपना गौरव आस पास के राजाओं पर जमा लिया। अब चित्तौर को किस विधि लूँ इस विचार में हम्मीरसिंह पड़े।

"हम्मीरसिंह ने चित्तौर के आस-पास का सारा देश लूट-कर उजाड़ डाला, अकेला चित्तौर ही मुसल्मानों के अधीन रह गया था। किसी प्रकार उसे लूँ यही हम्मीरसिंह का दृढ़ विचार था। एक दिन उन्होंने अपने सब मनुष्यों को बुलाकर कहा कि "भाइयो! जिसे जीने की इच्छा हो, जिसे संसार के इन क्षणिक सुखों के बदले स्वर्ग का सुख छोड़ देना हो, जिसे अपनी प्रतिष्ठा की अपेक्षा प्राण प्यारे हों, जिसे अपने उग्र वैरी मुसल्मानों का डर हो, जिसे अपनी गई हुई भूमाता को तुर्कों के हाथ में से निकाल लेने की हौस न हो और जिसको इस अर्वली पर्वत की झाड़ी जंगलों में सदा पड़े रहने की इच्छा हो, वह भले ही सुख से इस अर्वली की विकट गुह्य गुफाओं में रहे मेरी आज्ञा है, जो मेरी भुजा में बल होगा तो तुम्हारे चले जाने पर भी अपने कुलदेवता की सहायता से अकेला भी चित्तौर को लूँगा। तुम लोग सुख से जाओ और जो ईश्वर-इच्छा से मैं चित्तौर को जल्दी ले सका तो तुमको पीछे बुला लूँगा, उस समय आ जाना।" हम्मीरसिंह के मनुष्यों में राजपूत भी थे परंतु अधिक तो आसपास के भील लोग थे। उन लोगों ने बालकपन से ही हम्मीरसिंह का पराक्रम देख रक्खा था और निरंतर उनके साथ रहने से वे भी राजपूतों के समान ही साहसी और पराक्रमी हो गए थे और हम्मीर-सिंह के चाल चलन तथा व्यवहार से भी वे लोग ऐसे प्रसन्न थे कि यदि वे कहते तो प्राण देने को वे लोग उद्यत हो जाते।

हम्मीरसिंह के उपरोक्त वचनों का उत्तर उन लोगों ने इस प्रकार दिया "हम मरेंगे अथवा शत्रुओं को मारेंगे परंतु अपने राजा को छोड़कर कभी पीछे न हटेंगे, हम अपने कुल को कलंकित न करेंगे, हम अपने शत्रुओं के हाथ में से अपनी भूमाता को छुड़ाने के लिये अपने प्राण देंगे और इस जगत् के क्षणस्थायी सुखों को छोड़ स्वर्ग का सदैव सुख भोगेंगे।" इस प्रकार वे एक स्वर होकर बोले कि मानो एक साथ मेघ की गर्जना हुई। हम्मीर-सिंह ने इन वीर राजपूतों के ऊपर पुष्पों की वृष्टि करके कहा "धन्य हो मेरे प्यारे! धन्य हो! धन्य हो क्षत्रिय पुत्रो! धन्य हो! ऐसे ही उत्तर की मैं आशा रखता था और सोही अंत को मिला। तुम लोगों की शुभचिंतकता से मैं अपनी भूमाता को छुड़ा सकूँगा। तुम्हारी राजभक्ति और तुम्हारी एकता देख, तुम्हारा साहस और पराक्रम देख हमारे कुलदेवता हमारे सहायक होंगे। और मुझे निश्चय है कि हमारा मनोरथ सिद्ध होगा; इसलिये प्यारे वीर पुरुषो तैयार हो जाओ। अपने बाल बच्चों को इस पहाड़ की सुरक्षित गुफा में छोड़ आओ और उनकी सब प्रकार रक्षा होती रहे इसके लिये पाँच सहस्र वीर भीलों को नियत कर चलो।" हम्मीरसिंह के इन वाक्यों को सुनकर सर्वत्र जय जयकार होने लगी। उक्त प्रकार के प्रबंध करके वे सब चित्तौर के लिये पहाड़ों से उतर पड़े।

"इस समय हम्मीरसिंह के पास पाँच हजार से कुछ अधिक मनुष्य थे तथापि, 'एक मराऊ सौ को मारे' इस कहावत

के अनुसार वे पाँच लाख के समान थे। उन्होंने चित्तौर के चारों ओर का देश लूट लिया, ग्राम जला दिए, मुसलमानों को पकड़ लिया। चारों ओर अशांति रहने से व्यापारी व्यापार से और किसान खेती करने से रुक गए। मुसल्मान लोग अपनी प्रजा का रक्षण न कर सके। इससे प्रजा का समूह हम्मीरसिंह के अधीन हो बसने लगा। इस समय हम्मीर-सिंह की रहन सहन अर्वली पर्वत की चोटियों पर केलवाड़े में थी। वहाँ जाने का मार्ग बड़ा बेड़ा था। शत्रुओं के अधि-कार कर लेने योग्य कदापि न था। अर्वली पर्वत के भीतरी गुप्त स्थलों को वहाँ से भाग जाने का मार्ग पृथक् था। ये गुप्त स्थल पहाड़ों की घनी झाड़ियों में होने से बड़े विकट थे। वहाँ इतने फलादि खाने योग्य पदार्थ उत्पन्न होते थे कि वर्षों तक सहस्रों मनुष्यों का निर्वाह हो सकता था। केलवाड़े से पश्चिम ओर का मार्ग खुला था जहाँ होकर गुजरात और मार-वाड़ का माल व्यापारी लाते थे तथा मित्रता रखनेवाले भीलों से भोजन की बड़ी सहायता मिलती थी। बाल बच्चों की रक्षा के लिये जो पाँच सहस्र भील नियत थे वे आवश्यकतानुसार रसद पहुँचा जाते थे। अच्छी तरह सोच समझ के और चतुराई से हम्मीरसिंह ने अपने लिये निर्भय स्थान ढूँढ़ा था। परंतु हम्मीरसिंह की बुद्धि को भला उनका दुर्दांत शत्रु अला-उद्दीन कैसे सह सकता था। वह सैन्य लेकर स्वयं आया और उसने अर्वली का पूर्व भाग जीत लिया। परंतु इससे

हम्मीर की कुछ भी हानि न हुई। बादशाह ने अर्वली का पूर्वी भाग जीत लिया तो वे दक्षिण भाग में धूम मचाने लगे। अंत में अलाउद्दीन थक गया और हम्मीरसिंह को अधीन करने का काम चित्तौर के सूबेदार मालदेव को सौंप आप दिल्ली को लौट गया।

मालदेव अपने बल से तो हम्मीरसिंह को वश में कर न सका, छल से उनको वश में लाने तथा उनके अपमान करने का विचार कर अपनी पुत्री के विवाह कर देने के बहाने से उसने हम्मीरसिंह के पास नारियल भेजा। हम्मीरसिंह ने अपने संपूर्ण राजपूत लोगों तथा साथियों से इस विषय में सम्मति ली तो उन सभों ने इस संबंध के स्वीकार करने का निषेध किया, परंतु हम्मीरसिंह ने कहा कि "भाइयो मेरी समझ में तो यही आता है कि तुम सब भूल रहे हो। तुम लोग जो भय बतलाते हो उससे मैं अजान नहीं हूँ परंतु राजपूत होकर किसी के डर से अपना निश्चय किया हुआ कार्य्य छोड़ देना यह बड़ी कायरता है। यह राजपूत का नहीं किंतु दासीपुत्र का काम है। राजपूतों को तो सदा दुःख के समय के लिये कटिबद्ध रहना चाहिए। राजपूतों को तो एक बार घायल होकर घर भी छोड़ना पड़ता है, और एक बार बाजे गाजे के साथ गद्दी पर भी बैठना पड़ता है। जो भेजा हुआ यह टीका न स्वीकार करूँ तो मेरी माँ की कोख कलंकित होवे। मेरे शूरवीर भाइयो! मैं यह जानता हूँ कि तुम लोग

अपने प्राणों की अपेक्षा मेरे प्राणों की अधिक चिंता रखते हो परंतु इसमें तुम्हारी भूल है। घर में बैठे बैठे सवा मन रुई के गद्दे पर सोते सोते और बातें करते करते सैकड़ों मनुष्य मर जाते हैं, यह हम सभों से छिपा नहीं है। क्या यह तुम समझते हो कि जो इस संसार का मारने वा जिलानेवाला है वह हमको जो डरकर घर में छिप जावेंगे तो न मारेगा। और जो उसे जीवित रखना होगा तो हमारा नाम मिटानेवाला कौन है? इसलिये घर में निकम्मे पड़े पड़े मर जाने से तो शत्रु को मारते मारते मरना ही श्रेष्ठ है, नहीं तो जीना भी किस काम का है। भला इस बहाने से जिन स्थानों में मेरे बाप दादे रहते थे, जिन किलों के ऊपर मेरे बाप दादों के झंडे फहराते थे, जिन जंगलों में मेरे बाप दादों के शरीर का रुधिर बह चुका है, वे स्थल, वे गढ़ और राजमहल तो देखने को मिलेंगे। मेरे बाप दादे जिन स्थानों में मरे हैं वहीं मैं भी मरूँगा उनके साथ मैं भी स्वर्गधाम पाऊँगा। कहीं हमारे कुल देव-ताओं ने ही अथवा हमारी भूमाता ने ही इस बहाने से मुझे वहाँ बुलवाया हो। कदाचित् उनकी इच्छा यही हो कि मैं वहाँ जाऊँ, इसलिये वहाँ जाने से वे भी हमारी सहायता अवश्य करेंगी। भाइयो! मेरी इच्छा है कि नारियल को स्वीकार करना चाहिए। उनके वचन सुनते ही सब लोगों में वीर रस उमड़ आया और यह बात सबने स्वीकार कर ली और हम्मीरसिंह ने पाँच सौ सवार लेकर चित्तौर जाने का विचार

कर लिया। हम्मीरसिंह अपने छँटे छँटाए पाँच सौ सवार लेकर चित्तौर के निकट पहुँचे, उस समय मालदेव के पाँच लड़के उनकी अगवानी को आए। द्वार पर तोरण बँधा हुआ न देखा, तथा नगर में कोई धूमधाम और विवाह की तैयारी न देखी, इससे उन्होंने मालदेव के पुत्रों से पूछा कि क्यों क्या बात है, विवाह की कुछ धूमधाम नहीं दीखती। वे कुछ उत्तर न दे सके। इससे हम्मीरसिंह क्रोध में भरे हुए चित्तौर में जाकर दर्बार में बैठ गए। हम्मीरसिंह का कोप और उनके मनुष्यों के लाल मुख देख मालदेव के देवता कूँच कर गए। उनके पकड़ लेने की तो सामर्थ्य कहाँ थी। पाँच सौ वीर नंगी तलवारें लिए अडिग जमे हुए थे, वहाँ किसकी सामर्थ्य थी जो हम्मीरसिंह की ओर देख सके। हम्मीरसिंह अकेले भी मालदेव और उसके पाँच पुत्र के लिये काफी थे। मालदेव ने डरकर अपनी पुत्री के साथ हम्मीर-सिंह का पाणिग्रहण कर दिया। उस लड़की ने हम्मीरसिंह को चित्तौर लेने की यह युक्ति बतलाई कि आपको जिस समय दहेज दिया जाय, उस समय आप उस वृद्ध महता को जो मेरे पिता का बड़ा चतुर सेवक है अपने लिये माँग लेना। निदान यही हुआ। इस भाँति विवाह करके हम्मीरसिंह अपने घर को लौटे। केलवाड़े में लोग बड़े अधीर हो रहे थे परंतु हम्मीरसिंह को कुशलपूर्वक लौट आया देख लोग आनंद में मग्न हो गए।

"इस रानी से हम्मीरसिंह के खेतसी नामक पुत्र जन्मा। जब खेतसी एक वर्ष का हुआ तो उसकी माता ने अपने बाप को लिखा कि मुझे अपने क्षेत्रपाल देवता के पगों लगना है, इसलिये मुझे वहाँ बुला लो। मालदेव उस समय मेर लोगों के साथ लड़ने को गया हुआ था, इससे उसके भाइयों ने अपनी बहिन को बुला लिया। इस प्रकार हम्मीरसिंह की स्त्री, उनका पुत्र और कुछ मनुष्य चित्तौर में प्रविष्ट हुए। उसी बूढ़े महता के यत्न से जो कि मालदेव के यहाँ से सेना का अध्यक्ष रह चुका था, और अब हम्मीरसिंह के यहाँ रहता था यह परिणाम निकला कि चित्तौर की संपूर्ण राजपूत सेना हम्मीरसिंह के पक्ष में हो गई। हम्मीरसिंह को गद्दी पर बिठाने के समाचार भेजे गए। हम्मीरसिंह आगे से ही साव-धान होकर आस पास फिरते रहते थे। यह समाचार पाते ही आ निकले, परंतु इतने ही में शत्रु की सेना भी लड़ने को आ गई। इस समय हम्मीरसिंह के पास थोड़े और शत्रु के पास बहुत से मनुष्य थे परंतु बड़े पराक्रम के साथ अपनी तल-वार का स्वाद चखाते हुए हम्मीरसिंह सबको परास्त करके विजय प्राप्तकर चित्तौर में आ गद्दी पर बैठ गए।

"अलाउद्दीन उस समय मर गया था और मुहम्मद तुग-लक उस समय बादशाह था। मालदेव यह देखकर कि चित्तौर छिन गया और बिना बादशाही मदद के फिर मिलना कठिन है, दिल्ली को भाग गया।

"चित्तौर के गढ़ पर राणा जी का झंडा फहराता हुआ देख पहाड़ों में से आस पास के ग्रामों में से तथा गुप्त स्थानों में से निकल निकलकर टिड्डा दल की भाँति लोग चित्तौर में घुसने लगे। चित्तौर में से मुसल्मानों का राज्य उठ गया और राजपूतों का आ गया, यह सुनकर लोग आनंद मग्न हो गए और दूर दूर से वहाँ आने लगे। छोटे और बड़े सब ही लोग मुसल्मानों से बदला लेने की उमंग के साथ आ एकत्रित हुए। जो इस समय मुसल्मानों की सेना चित्तौर लेने को आवे तो उसे कुचल डालो ऐसा वचन सबके मुख से निकलने लगा। हम्मीरसिंह को सेना की कमी न रही। मुसल्मानों से युद्ध करने की उमंग में चित्तौर में झुंड के झुंड सहस्रों मनुष्य फिरने लगे। सब कहने लगे कि जो मुसल्मानी सेना ऐसे समय में लड़ने को आ जावे तो उसकी अच्छी दुर्गति हो और वे जो कह रहे थे सो ही हुआ। मुहम्मद अपने छिने हुए राज्य को लौटाने को आया। हम्मीरसिंह के पास बिना बुलाए सहस्रों मनुष्य मुसल्मानों के प्राण लेने को आ उपस्थित हुए और उनके उत्साह को देख राणाजी तत्काल चित्तौर से बाहर लड़ने के लिये निकले। सिंगोली स्थान के निकट बड़ा संग्राम हुआ। सारांश यह है कि राजपूतों ने इस उत्कटता से युद्ध किया कि मुसल्मानों का एक भी मनुष्य दिल्ली को लौटकर न जाने दिया।

"इस लड़ाई में स्वयं मुहम्मद पकड़ा गया। मालदेव का पुत्र हरीसिंह हम्मीरसिंह के साथ द्वंद्व युद्ध करता हुआ मारा

गया। मुहम्मद को तीन महीने तक हम्मीरसिंह ने बँधुआ बना-कर रखा। पीछे मुहम्मद ने अजमेर, रणथंभौर, नागौर आदि पर्गने सौ हाथी और पचास लाख रुपया देकर छुटकारा पाया।

"हम्मीरसिंह का बड़ा साला बनबीरसिंह उनके पास नौकरी के लिये आया। राणा जी ने उसे सत्कारपूर्वक अपने पास रखा और उसके निर्वाह के लिये नीमच, जीरण, रतन-पुर और कीरार ये पर्गने जागीर में दिए। जागीर देते समय राणा जी ने उससे कहा कि 'यह जागीर भोगो और प्रामा-णिक रीति से चाकरी देते रहो। तुम एक समय तुरकों के पादसेवी थे परंतु अब तो अपनी ही जाति के, स्वधर्मवाले के तथा अपने सगे संबंधी के नौकर हो। जिस भूमि के लिये मेरे बाप दादों तथा सहस्रों शुभचिंतक पुरुषों ने अपना रुधिर बहाया था उस भूमि को फिर लौटा लेने का मेरे ऊपर ऋण था सो मैंने कुलदेवताओं की कृपा से लौटा लिया। तुम अब से तुर्क के नौकर न रहकर राजपूत के हुए सो ईमानदारी से काम करना।' बनबीर भी वैसा ही ईमानदार निकला। उसने मरते समय तक शुद्ध चित्त से सेवा की और चंबल नदी के ऊपर का भीनौर ग्राम जीतकर मेवाड़ में मिलाया।

"जब से चित्तौर को मुसल्मानों ने ले लिया था तभी से मेवाड़ के राणाओं की प्रतिष्ठा घट गई थी। भरतखंड के समस्त देशी राज्यों में मेवाड़ के राणा शिरोमणि गिने जाते थे परंतु चित्तौर के निकल जाते ही इसमें बाधा पड़ गई थी। जो राजा

कर देनेवाले थे उन्होंने कर तथा गद्दी पर बैठते समय भेंट, और आवश्यकता के समय पर सेना द्वारा सहायता करना आदि सब बंद कर दिया था। उस समय संपूर्ण क्षत्रिय राज्य निर्बल थे। उनको किसी के आश्रय की आवश्यकता थी। जब तक चित्तौर में राणा रहे वे लोग उनके आश्रय में रहे परंतु चित्तौर निकल जाने से वे दिल्ली के बादशाहों के अधीन हो गए, परंतु राणा हम्मीरसिंह जी ने फिर से इस प्रवाह को फेरा। उन्होंने चित्तौर को मुसल्मानों से छीनकर उन फेरफारों को फिर ज्यों का त्यों कर दिया जिन्हें कि मुसल्मानों ने अपने राज्य समय में कर डाला था। देश के संपूर्ण क्षत्रिय राजा मुसल्मानों की अपेक्षा चित्तौर के राणाओं के अधीन रहने से प्रसन्न हुए। ज्यों ही हम्मीरसिंह जी ने चित्तौर ले लिया और मुहम्मद को हराया कि संपूर्ण आर्य वंश के राजा एक के पीछे एक भेंट ले लेकर आए, कर देने लगे और यथासमय सेना द्वारा युद्ध में सहायता करने लगे। इस भाँति मारवाड़, जयपुर, बूंदी, ग्वालियर, चंदेरी, राजौड़, रायसेन, सीकरी, कालपी और आबू आदि ठिकानों के राजा हम्मीरसिंह जी के आज्ञाकारी हुए। हम्मीरसिंह जी भारतखंड के समस्त राजपूत राज्यों में महाराजाधिराज बन गए। मुसल्मानों के आने से पहले इस देश में मेवाड़ के राणाओं की शक्ति अधिक थी, मुसल्मानों के आते ही वह दिन दिन घटने लगी। हम्मीरसिंह जी ने इस अवनति को केवल रोका ही नहीं किंतु मुसल्मानों के आने से

पहले मेवाड़ की जो उत्तम दशा थी फिर उसी पर उसे पहुँचा दिया। मुहम्मद के पीछे किसी भी बादशाह ने चित्तौर के लेने का साहस न किया, इसका एकमात्र हेतु हम्मीरसिंह जी के पराक्रम का भय था। इसी से हम्मीरसिंह के राज्यशासन के पिछले पचास वर्षों में मेवाड़ में अटल शांति रही और इस दीर्घकाल की शांति ने मेवाड़ देश को व्यापार, धन, विद्या, सभ्यता, तथा शूर पुरुषों से परिपूर्ण कर दिया। हम्मीरसिंह जी जैसे बलवान् थे वैसे ही राज्य चलाने में, न्याय करने में, कलाकौशल की उन्नति देने में प्रवीण थे। उनके राज्य में यह कहावत पूर्णतया चरितार्थ हो गई थी कि "बाघ और बकरी एक घाट पानी पीते हैं"; शांति बढ़ने से संपूर्ण व्यापारी, किसान और कारीगर अपने अपने धंधों में लग गए, इससे देश में संपत्ति बढ़ी जिससे राज्य की आय में अधिकता हुई। इन्होंने उत्तम उत्तम स्थान बनाकर कारीगरी की उन्नति की और प्रजा का न्याय यथोचित करके तथा पुत्रवत् पालन करके सबसे आशीर्वाद प्राप्त किया। इस भाँति चौंसठ वर्ष राज्य भोगकर अति वृद्धावस्था में सन् १३६५ ई० में हम्मीरसिंह जी ने वैकुंठधाम का मार्ग लिया। परम बुद्धिमान् और पराक्रमी महाराणा हम्मीरसिंह जी अपने पुत्र खेतसी जी के लिये शांति-संपन्न और विस्तीर्ण राज्य छोड़ गए। मेवाड़पति महाराणा हम्मीरसिंह जी अपनी अक्षय कीर्ति छोड़कर मरे। वहाँ के लोग उन्हें अब तक सराहते हैं।"

इन हम्मीर के विषय में विशेष कुछ लिखना अथवा इनके संबंध की घटनाओं पर विचार करना मैं आवश्यक नहीं समझता। एक तो इनका इस रासो काव्य से कोई संबंध नहीं है, दूसरे यह भूमिका योंही इतनी बड़ी हो गई है कि अब इसे और बढ़ाना अनुचित जान पड़ता है। केवल कथाभाग मैंने इसलिये दे दिया है कि जिसमें पाठकों को इसके जानने का यहीं अवसर प्राप्त हो जाय और वे स्वयं इसके विषय में और जानने का उद्योग करें। जिन महाशयों को हम्मीर के विषय में कुछ लिखने का अवसर प्राप्त हो उन्हें उचित है कि वे दोनों हम्मीरों को अलग अलग मानकर उनके संबंध की घटनाओं का उल्लेख करें।

बस अब मुझे हिंदी के प्रेमियों से क्षमा माँगनी है कि एक तो इस भूमिका के लिखने में इतना विलंब हो गया, दूसरे यह भूमिका इतनी बड़ी हो गई। आशा है कि पहले अपराध का मार्जन दूसरे से हो जाय।

इस भूमिका को समाप्त करने के पहले मैं कुँवर कन्हैया जू और पंडित रामचंद्र शुक्ल को अनेक धन्यवाद देना चाहता हूँ जिन्होंने इसके कई अंशों के लिखने में मुझे बड़ी सहायता दी। साथ ही मैं कुँअर कृष्णसिंह वर्म्मा को भी धन्यवाद दिए बिना नहीं रह सकता। उन्हीं के द्वारा मुझे यह काव्य प्राप्त हुआ। ठाकुर विजयसिंह जी ने इस काव्य को प्राप्त करने और कुँवर कृष्णसिंह जी की सहायता करने में जो

कष्ट उठाया उसके लिये मैं उनका भी उपकार मानता हूँ। आशा है कि ये सब महाशय इसी प्रकार मुझ पर कृपा बनाए रहेंगे जिससे मैं अन्य अन्य ऐसे काव्यों के संपादन करने में समर्थ होऊँ।

काशी,
९ फरवरी १९०८ } श्यामसुंदरदास

हम्मीररासो

दोहा

सिन्धुर्बदन अमंद दुति, बुद्धि सिद्धि बरदाय।
सुमिरत पद पंकज तुरत, विघ्न अनेक बिलाय ॥ १ ॥

छप्पय

दुरद बदन बुधि सदन चंद्र लल्लाट बिराजै।
भुजा च्यारि आयुद्ध तेज फरसी कर राजै[1] ॥
इक दंत छबिधाँम अरुण सिंदुरमय सोहै।
मनो प्रात रवि उदित कहन उपमा कवि को है ॥
कर कमल माल मोदक लिए उर उदार उपवीत बर।
शिव शिवा सुवन गणराज तुम देहु सदा बरदान बर[2] ॥२॥
पुंडरीक सुत सुता तासु पद कमल मनाऊँ।
बिसद बरण[3] बर बसन बिसद भूषन हिय ध्याऊँ ॥
बिसद जंत्र सुर शुद्ध तंत्र तुंबर जुत सोहै।
बिसद ताल इक भुजा द्वितिय पुस्तक मन मोहै ॥

---

१ बर साजै। २ बरदायक बरदानबर। ३ बसन।

गति राजहंस हंसह चढ़ी रटी सुरन कीरति बिमल ।
जय मात बिमल[1] बरदायिनी देहु सदा बरदान बल ॥३॥

छंद पद्धरी

जय विघ्नराज गणईशदेव ।
जय जगदंब जननी सएब[2] ॥
गुरु पाद पद्म बंदन सुकीन ।
सब सज्जन पद मन[3] लीन कीन ॥ ४ ॥
पृथिराज राज जग भौ प्रसिद्ध ।
भृगुवंश मध्य प्रगटे सुसिद्ध ॥
नृप चंद्रभाँनु तिहि वंश मध्य ।
किरवान दान होऊ प्रसिद्ध ॥ ५ ॥
पिच निंबराण जग ग्राम नाम ।
जुत वर्णाश्रम निज धर्म्म धाम ॥
जय कीरति भुवमंडल उदार ।
अरु तेज प्रतापी बल अपार ॥ ६ ॥
सब कहैं राठ को पातिशाह ।
जस श्रवन सुनन की सदा चाह ॥
द्विजराज गौड़कुल जग प्रसिद्ध ।
विद्या विनीत हरि धर्म्म वृद्ध ॥ ७ ॥
सब दया दान उदार बीर ।
गुण सागर नागर परम धीर ॥

---

१ सदा । २ सहेब । ३ हुलसन ।

कुल पंच वृत्त के मूल जान।
द्विज आदि गौड़[1] जानत जहान[2] ॥ ८ ॥
सौ चौदह सै चालीस च्यार।
जन सासन सागर अति उदार ॥
अब सब को किंकर मोहि जानि।
ऋषि अत्रि गोत्र मैं जन्म मानि ॥ ९ ॥
डिडवरिया राव कहि बिरद ताहि।
शुभ राठ देस मैं उदित आहि ॥
तिहिं नाम ग्राम भल बीजवार।
सब प्रजा सुखी जुत वरण चार ॥१०॥
जहँ बालकृष्ण सुत जोधराज।
गुन जोतिष पंडित कवि समाज[3] ॥
नृप करी कृपा तिहिं पर अपार।
धन धरा बाजि गृह बसन सार ॥११॥
बाहन अनेक[4] सतकार भूरि।
सब भाँति अजाची कियो मूरि ॥
नृप एक[5] समय दरबार माहिं।
रासो हमीर कह्यौ सुन्यो नाहिं ॥१२॥
नृप प्रश्न करिय यह उभै बात।
सब कहौ वंश उत्पति सुतात ॥

---

१ सोइ आदि गोर। २ जानि। ३ उदार। ४ वात। ५ इक।

अरु कहौ साहि हम्मीर बैर ।
किहि भाँति[1] कंक बढ़्यौ सु फेर ॥१३॥
तब कही प्रथम यह कल्प आदि ।
जल सेस सैन जब ह्वै अनादि ॥
नहि धरणि चंद्र सूरज अकाश ।
नहिं देव दनुज नर बर प्रकाश ॥१४॥
सब बीज वृच्छ[2] हरि संग मेलि ।
करि आप जोग निद्रा सकेलि ॥
करि सैन अंत निज शक्ति जानि ।
ऊरण सुतंत्र करि सूत्र मानि ॥१५॥
ह्वै माया ईश्वर उभै नाम ।
करि महत तत्व गुण प्रगट जाम ॥
यह धरि चरित्र[3] लीला अपार ।
हरि नाभि कोस पंकज प्रचार[4] ॥१६॥
तिहिं प्रगट भए ब्रह्मा सु आदि ।
वाराहकल्प यह कहि अनादि ॥
बहु काल ब्रह्म चिंता सु कीन ।
मैं कौन करों का कर्म कीन[5] ॥१७॥
अध उद्ध भ्रम्यों बहु कमल नाल ।
नहि पार लह्यौ तद्दपि भुआल[6] ॥

---

१ बात । २ जुक्त । ३ धरौचित्त । ४ बढ्यो पंकज अपार असार । ५ कर्मचीन, कर्महीन । ६ भुआय ।

करि ध्यान स्वयंभू लख्यौ आय।
तप करो सृष्टि उपजै अमाय ॥१८॥
तप करयौ स्वयंभू अति प्रचंड।
तब भयउ प्रजापति बिधि अखंड ॥
मानसी सृष्टि कीनी उदार।
सब वृत्त बीज किन्ने अपार ॥१९॥
जल गगन तेज भुव वायु मानि।
सनकादि भए सुत चारि मानि[1] ॥
तप पुंज भये नहिं सृष्टि भोग।
तहाँ मध्य भए तब रुद्र जोग ॥२०॥
मन तैं मरीचि भय तव सु आय।
उपजे पुलस्त ऋषि श्रवण पाय ॥
इमि भए नाभि तें पुलह और।
कृत भए ब्रह्म कर तैं जु मौर ॥२१॥
भृगु भए स्वयंभू त्वचा थान।
भय प्राण नात वाशिष्ट मान ॥
अंगुष्ट दत्त उपजे सु ब्रह्म।
नारद जु भए उतसंग ब्रह्म ॥२२॥
भय छाया तें कर्दम ऋषील।
अरु भए प्रष्टि अद्धर्म दीस ॥

---

1 आनि।

अरु हृदय भए कामा उदार ।
करदन तें भौ धर्मावतार ॥२३॥
भय लोम अधर तैं अति बलिष्ठ ।
बानी जु विमल मुख तैं प्रतिष्ठ ॥
पद निरत मिंड[1] तैं सिंधु जानि ।
यहि बिधि जु प्रजापति ब्रह्म मानि ॥२४॥
अब सुनहु वंश तिनके अपार ।
यह भइय सृष्टि चहुँ खाँ निवार ॥
शिव कै जु सती त्रिय बिन प्रसूत ।
दिय दच्छ शाप तातैं न पूत ॥२५॥
इक कला नाम त्रिय धर मरीच ।
द्वै पुत्र भए ताकै जु बीच ॥
इक भए प्रथम कश्यप सुजान ।
फिर उपजि धर्म जहँ पूर्णमान ॥२६॥
भय कस्यप के सूरज सु आय ।
सो भयो वश सूरज सुगाय ॥
अरु सुनो अत्रि कै पुत्र तीन ।
इक दत्त सोम जान्यो प्रवीन ॥२७॥
ऋषि भए अपर दुर्वास नाम ।
सोइ सुनो श्रवण तिहि वंश जाम ॥

---

१ मींड, मिंडु ।

सुत भयो सोम के बुद्ध आय ।
पुरूरवा पुत्र ताकै सुभाय ॥ २८ ॥
षट पुत्र भए ताके प्रसिद्ध ।
भए सोम वंश तिनके जु सिद्ध ॥
भृगु वंश सुनो अतिशय उदार ।
चहुवान भए तिनतें अपार ॥ २९ ॥
इक ख्यात नाम तिय अति अनूप ।
भय उभै पुत्र ताके जु भूप ॥
इक कह्यो प्रथम धाता जु नाम ।
फिरि भए विधाता धर्मधाम ॥ ३० ॥
इक[1] अपर प्रिया भृगु कै कनिष्ट ।
ए पुत्र भए ताके प्रतिष्ट ॥
भय शुक्र जेष्ठ गुरु असुर जानि ।
तिहिं अनुज च्विमन[2] तप पुंज मानि ॥ ३१ ॥
भृगु के जु भए जग अति विख्यात ।
जिहि श्रुक्र नाम बल तेज तात ॥
तिनके रिचीक भय पुत्र आय ।
जमदग्नि भए तिनके सुभाय ॥ ३२ ॥
ऋषि जामदग्नि सुत परशुराम ।
हनि चत्रि सकल द्विज तेजधाम ॥ ३३ ॥

---

१ एक । २ च्यवन ।

दोहरा छंद

ब्रह्मा के सुत भृगु भए, भार्गव भृगु के गेह।
ऋषि रिच्चिक ताके भए, तेज पुंज तप देह ॥३४॥
जामदग्नि तिनके भए, परसराम सुत जाहि।
चत्रि मेंटि विप्रन दई, भुंमि किती बर ताहि ॥३५॥
कमलासन कुल मैं प्रकट, परसराम रणधीर।
सहस्राऽर्जुन बैर तें, हने जु चत्री वीर ॥३६॥
बार इकीस जुद्धि जिन, दीना[1] उर्वी राज।
बच्यो न चत्री जगत तब, आए तप के काज[2] ॥३७॥

छंद मुक्तादाम

हने चिति के सब बीर अपार।
भरे बहु कुंड जु श्रोणित धार॥
करे तिहिं पितृन तर्पन नीर।
भए सब हर्षित पित्र सधीर ॥ ३८ ॥
दए तब आसिष प्रेम समेत।
चले ऋषिराज तप:कृत हेत॥
रह्यो नहिं चत्रिय जाति विशेष।
भए निर्मूल जु चत्रि अशेष[3] ॥ ३९ ॥
बचे कछु दीन मलीन सुवेस।
कहूँ तिनके अब रूप असेस॥

---

१ दिन्नों। २ अप्प (आप) गए तप काज। ३ विशेष।

धरैं तृणदंत कि दीन बयन्न[1] ।

किए तियरूप लखे जु नयन्न ॥ ४० ॥

नपुंसक बालक वृद्ध सु दीन ।

धरैं मुख नष्ष सुबैन सहीन ॥

तजे तिन आयुध पिट्ठि दिखाय ।

गहे तिन आय सुभाय सुपाय ॥ ४१ ॥

मिले सब पित्र सु[2] दीन असीस ।

भए सुअ निर्भय[3] पित्र जगीस ॥

तजो अब उग्र[4] असेस स्वभाव ।

करो सब उप्पर छोभ सु चाव ॥ ४२ ॥

तजे तब क्रोध भए सु दयाल ।

चले पद बंदि पिता पदु हाल ॥

भई कछु काल चत्रो बिन भुंमि ।

नहीं जग रच्छ रह्यौ सोइ पुंमि[5] ॥ ४३ ॥

बढ़े[6] रजनीचर वृंद अनेक ।

मिटे जप तप्प सुवेद विवेक ॥

करे उतपात सुघात अपार ।

तजे कुल धर्म्म सु आश्रम चार[7] ॥ ४४ ॥

मिटी मरजाद रहैं सब भीत ।

तबै ऋषिराजन बाढ़न[8] चीत ॥

---

१ नयन्न । २ जु । ३ अनिरिय । ४ उग्ग । ५ नहीं जग रच्छिक यो जग पूमि । ६ बन्ने । ७ च्यार । ८ बाढ़त, बड्ढत ।

जुरे ऋषिवृंद सु अर्बुद आय।
जहाँ ऋषि चाय बसै सत भाय ॥ ४५ ॥
सुर नर नाग मिले सह आय।
रचे रजनीचर मेटि उपाय[१] ॥
मिले कमलासन और वसिष्ट।
कियो[२] सुचि कुंड अनिल्ल[३] सुइष्ट ॥ ४६ ॥

दोहरा छंद

चाय आय अर्बुद सुनग[४], मिलिय सकल ऋषिराय।
तब आराधिय शंभु तिन, दिन्ना दरसन आय[५] ॥ ४७ ॥
जटा मुकुट बिभ्भूत अँग, सीस गंग अहि अंग[६]।
भूत संग अनभंग मन, हर्षित अधिक उमंग ॥ ४८ ॥
ऋषिसमूह अस्तुति करत[७], करब[८] अचल नग[९] आय।
बास करा तिहिं पर अचल, यज्ञ करैं तव पाय ॥ ४९ ॥

छप्पय छंद

तब भव[१०]भयउ प्रसन्न वास अर्बुद सिर किन्निव।
कियव यज्ञ आरंभ विप्र सम्मूह सुलिन्निव ॥
द्वैपायन, वासिष्ठ, लोम, दालिभ,[११] सब आए।
जैमिनि हर्षन, धौम्य, भृग्गु, घटयोनि[१२], सुभाए ॥

---

१ मेंटन पाय। २ किए। ३ अनह्ल। ४ गन। ५ धाय। ६ संग। ७ करिव, करय्व। ८ करत। ९ मन। १० भेष। ११ दालिंभ सु। १२ जोनि।

कौसिक, वत्स, मुद्गल मिलिउ, उद्दालाक, मातंग, भनि।
स्वर मिलिय स्वयंभुव शभुयुत लगे करन मख मुदित मन ॥५०॥

पुलह, अत्रि, गौतम्म, गर्ग, सांडिल्य महामुनि।
भरद्वाज, जावालि, मारकंडय, इष्ट गुनि॥
जरतकार[1] जाजुल्ल्य, पराशर परम पुनीतव।
चिमन[2] चाइ सुर आइ, पिप्पलायनहिं, सुरचि[3] सब॥

वोटा अनेक बरनूं किते, पंचसिखा पिक्खिय प्रगट।
तप तेज पुंज झलहलत तहँ, दर्शन तैं पातक सुघट॥५१॥

सिद्धि औषधिय सकल,[4] सकल तीरथ जल आनिव।
जिते यज्ञ के योग्य तिते, द्रव सब मन मानिव॥
जजन[5] जानि अध्याय होम ध्वनि होम सु उठ्ठे।
सकल वेद के मंत्र विप्र मुख सुर जुत[6] जुठ्ठे॥

ध्वनि सुनत असुर आए तुरत करन यज्ञ उच्छिष्ट थल।
उत्पात अमित किन्ने[7] तबै तहाँ वृष्टि किन्निय[8] सबल॥५२॥

पवन चलत परचंड घोर घन वारि सु बुठ्ठे।
रुधिर माँस तृण पत्र अग्गि[9] रज देखत उठ्ठे॥
गए तहाँ वाशिष्ट यज्ञ बहु विघ्न सुनायो।
करै[10] प्रथम बध असुर होय तब यज्ञ सुभायो॥

वाशिष्ट कुंड किन्नो सुरुचि करन असुर निंमूल तब।
धरि ध्यान होम देवी विमल वेदमंत्र आहूति जब॥ ५३॥

---

१ जरदकालु। २ च्यवन। ३ सुरच्चिय। ४ सकल तीर्थनु जल आन्यौ, तिर्त्थोदिक आन्यौ, द्रव्य तितने मत मानिव। ५ यजन। ६ बुट्ठे। ७ कीने। ८ कीनिय। ९ अग्नि। १० करो।

दोहरा छंद

ऋषि वशिष्ठ वेदिय विमल, सामवेद स्वर साधि।
प्रगट कियउ छत्रिय पहुमि, वेदमंत्र आराधि ॥५४॥
तीन पुरुष उपजे तहाँ, चालुक प्रथम पँवार।
दूजै तीजै ऊपजै, चत्रि जाति [1]पड़िहार ॥५५॥
कियउ[2] युद्ध अतुलित तिनहिं, नहि खल जीते भूरि।
तब चतुरानन यज्ञ थल, कियो तुरत वह दूरि ॥५६॥
आबू गिरि अग्नेव दिसि, चायस्थल सब आय।
आराधे तिहिं फरस धरि, आए शीघ्र सुभाय ॥५७॥
कमलासन ब्रह्मा भए, होता भृगु मुनि कीन।
आचारज वाशिष्ठ भौ, ऋत्वज वत्स प्रवीन ॥५८॥
परसराम अजमान करि, होम करन मुनि लाग।
महाशक्ति आराधि करि, अनलकुंड पटि[3] जाग ॥५९॥

छंद पद्धरी

विधि करी[4] परसु धर, बोलि ठौर।
यजमान कियौ भृगुकुल सुमौर ॥
वरदेव शक्ति आराधि ताम।
चहुँ वेद बदन उच्चार जाम ॥ ६० ॥
निज बारि कमंडल अग्नि सींच।
रज संख पानि होमें स बीच ॥

---

१ पाठीहार। २ कियो। ३ पढ़ि। ४ करे फरसधर।

चहुँ[1] वेद मंत्र बल शक्ति पाय ।
तब अग्नि रूप प्रगटे सुभाय ॥ ६१ ॥
उत्तंग अंग सुचि तेज धाम ।
झलहलत कांति तन प्रभा काम ॥
झलहलत मुकुट भृकुटी करूर ।
पलहलत नेत्र आरक्त मूर ॥ ६२ ॥
हल हलत दनुज बहु त्रास मानि ।
भुज चारि दीर्घ आयुध सजानि[2] ॥
यम यज्ञ पुरुष प्रगटे अजोनि ।
कर खड्ग[3] धनुष कटि लसै तोनि ॥ ६३ ॥
कर जोरि ब्रह्म सो कह्यो धाय ।
मैं करूँ कहा लोकेस आय ॥
जब कह्यो कमलभू सुनहु तात ।
भृगुनाथ कहै सोइ करो बात ॥ ६४ ॥
भृगुनाथ कही खल हनो धाय ।
संग सक्ति दइय नृप कै सहाय ॥
दसबाहु उग्र आयुध बिसाल ।
आरूढ़ सिंह उर कमल माल ॥ ६५ ॥
मुनि देव मिले अभिशेष कीन ।
नृप अनल नाम कह तासु दीन ॥

१ चउ । २ मानि जानि । ३ खग्ग ।

नृप कियो युद्ध तिनतै अखंड।
हनि जंत्रकेत करि खंड खंड॥ ६६॥
हनि धूम्रकेत जो सक्ति आय।
नृप हर्ष सहित परसे सु पाय॥
बहु दैत्य नृपति मारे अपार।
उठि चली खेत तैं रुधिर धार॥ ६७॥
उबरे सु गए पाताललोक।
भय दनुजहीन सब मृत्युलोक[1] ॥ ६८॥

दोहरा छंद

आसा पूरण सबन की, करी शक्ति तिहिं बार।
याही तैँ आशापुरा, धरयो नाम निर्धार॥६९॥
चहुवानन[2] के वंश मैं, परम इष्ट कुल देवि।
सकल मनोरथ सिधि तहाँ, पूजत पावैं[3] सेवि॥७०॥
परसराम अवतार भो, हरन सकल भुव भार।
जैत राव तिहि वंश मैं, जन्म्यो परम उदार॥७१॥

छप्पय छंद

जैत राव चहुवान सकल विद्या युत सोहै।
दान कृपान विधान अखिल भूपति मन मोहै॥
अमित थाट रजपूत वंश छत्तीस अमानौ।
सूर बीर उद्दार बिरद बंदी जु बखानौ॥

---

१ मर्त्यलोक। २ चाहुआंन। ३ देव, देवि।

दिन प्रति तेज[1] बढ़ते नृपति, शत्रु शंक निसि दिन रहैं।
वीसलह[2] भूप अवतंस भुव, अर्थिन् मिले दारिद दहैं ॥७२॥

इक्क समय आखेट, राव खेलन बन[3] आए।
सकल सुभट थट संग, बीर बानै जु बनाए॥
लखिव[4] इक्क बाराह, बाजि पिच्छै नृप दिन्निव।
रहे[5] संग तै दूरि, सथ्थ बिन राव सु किन्निव॥
बन विषम बंक भूधर बिरह, सुथल पदम भव तप करत।
मृग त्यागि भागि मिल्ले सुऋषि, बंदि चरण सेवा धरत ॥७३॥

छंद लघुनाराच

करे प्रणाम रावयं, सुदिन्न पद्म पावयं।
उभै सुपाणि जोरि कै, विनै सु कीन कोरि कै॥ ७४ ॥
खुले सुभाग्य मोरयं, लह्यो दरस्स तोरयं।
अखंड जोग भूपथं, नमः सजीव मोषयं॥ ७५ ॥
त्रिकाल ज्ञान धामय, रटंत नाम रामयं।
समस्त योग धामयं, त्रिलोक पूर कामयं॥ ७६ ॥
समीप स्वामि शंकरं, गणेशयं सुधं करं।
धरौ सुशीस रथ्थयं, प्रभू[6] सदा समथ्थयं॥ ७७ ॥

दोहरा छंद

प्रसन भए ऋषि पद्म तब, अस्तुति सुनत प्रमान[7]।
जैत राज यहिँ थल करौ, राव राखि शिव ध्यान॥ ७८ ॥

---

१ बड्ढिय, बड्ढिग। २ बिस्सलह। ३ आयउ, बनायउ।
४ लख्यव। ५ रहयउ। ६ प्रभु सदा सथ्थयं। ७ अमान।

हर प्रसन्न भय राव पहँ, मुनिवर पद्म प्रसाद।
मिले भीलकुल सकल तहँ, हर्षित मिटे विषाद ॥७९॥

छंद पद्धरी

ऋषिराज पद्म आज्ञा सुपाय।
नृप जैत मित्र मंत्रिय बुलाय ॥
बड़ बणिक गणक कोविद सुजान।
तिन पुच्छि मंत्र वास्तव प्रमान ॥ ८० ॥
सुभ दिए मुहूरत नीव हेत।
रणथंभ नाम औ गढ़ समेत ॥
सब ग्यारह सै दस बरष और।
सुइ संवत विक्रम कहत मौर ॥ ८१ ॥
इषु अर्द्ध अरंगा को प्रसिद्ध।
रवि अयन सौम्य जान्यो प्रसिद्ध ॥
सब कला पाँच जानो सुइष्ट।
त्रिय पुरुष लग्न गढ़ कीन इष्ट ॥ ८२ ॥
गत इक्क अंश वृषभानु जानि।
शशि वेद सार्द्ध मिथुनेस मानि ॥
तृन अंश वृश्चिक के इलानंद।
शशि बीसनंद अजअंश मंद ॥ ८३ ॥
जष राशि जानि नव अंश शुद्ध।
तम तीन अंश मूरति सु मुद्ध ॥

त्रिय धूमकेतु गुण अंश जानि।
भृगु सप्त गुरू सत्रा सु मानि ॥ ८४ ॥
तन लग्न उभै जानो सु जानि।
फल कह्यो वर्ष सत आयु मानि ॥
षय भाव भान तिहिं भवनहीन।
कछु घटे वर्ष तिन में प्रवीन ॥ ८५ ॥
तिहिं समय अटल शूणी सु थप्प।
गणनाथ पूजि शुभ मंत्र जप्प ॥
करि होम देव पुज्जे अपार।
गो भुंमि रत्न हाटक सुढार ॥ ८६ ॥
दिय दान द्रिजन बहु बिधि अनेक।
नृप जैत सकल पुज्जे बिबेक ॥
तिय करत गान मंगल सरूप।
धुनि दुंदुभि बज्जत अति अनूप ॥ ८७ ॥
सब करहिं हर्ष नर नारि वृंद।
यहि भाँति नीम रचना सुछंद ॥ ८८ ॥

दोहरा छंद

ग्यारा सै दस अग्गरो, संवत माधव मास।
शुक्ल तीज शनिवार कै, चंद्र रच्च अनयास ॥८९॥
शूणीगढ़ रणथंभ की, रोपी पदमप्रताप।
सुमिरि गणेश गिरीश को, नगर बसायो आप[1] ॥९०॥

---

१ आय।

वार्त्ता (वचनिका)

राव जैत पदम ऋषि की आज्ञा तें गढ़ रणथंभ की नीव दिवाई। ताही समय शहर बसावन की मन मैं आई। ग्यारा[1] सै दसोत्तरा को संवत् बैशाख की आषै[2] तीज मैं शनीश्चर मैं घड़ी पाँच दिन चढ़े मिथुन लग्न मैं नीव दीनी। गणेश पूजकर शिवजी की और पद्म ऋषि की आज्ञा पाय अनेक उछाह करि धन दीनो।

चौपाई

जैत राव थिर थूणी रुप्पियय। भूसुर वृंद बंदि पद उप्पियय॥
ध्वजा पताक कलस अरु तोरन। मंगलरूप सुरूप निचोरन॥६१॥
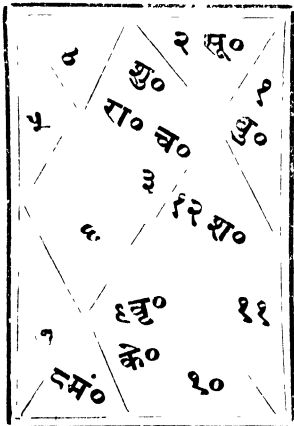
इष्ट लग्न सू० ५ ॥ २। ८॥ १। ०० चं० ३। ४। मं० ७। ३००। २०। बृ० ८। १७। शु० २७ श० ११। ६। रा० २। ६ के ८। ३

छंद भुजंगप्रयात

पुरं मंदिरं चौहटं औ गवाष्यं।
भुजंगप्रयातं प्रबंधं सुभाष्यं॥
पुरी इंद्र की शीस वै शुभ्र देखी।
सबै मंदिरं सुंदरं उच्च लेखी॥ ६२॥

---

१ रणथंभ की नीव का लग्न। २ अक्षय तृतीया।

परद्दा[1] जरी बाफतं के बनाए।
धजा तोरणं सर्ब के गेह छाए॥
कपाटं सिरीखंड हाटक्क सोहैं।
सबै चित्र सा चित्र सूचित्त मोहैं॥ ९३॥
बितानं छए झल्लरी शोभ सानी।
सबै ठौर सोहै मनौ काम गानी॥
गृहं द्वार गोखा झरोखा सुहाए।
चोवा सुगंध इत्र महकंत भाए॥ ९४॥
यसो नग्र रम्यं रचो भूप केरा।
किते चारु चौकंत भावंत हेरा॥
बसैं बर्ण च्यारयो यथा संखि बासं।
चहूँ आश्रमं औ तजं लोभ आसं॥ ९५॥
सबै आय आयं रहै धर्म माहीं।
क्षमा शील दानं वृतं नीति[2] आही॥ ९६॥

छप्पय छंद

महा बंक गढ़ दृढ्ढ बुरजि कंगुर बर सोहैं।
चहूं कोध[3] अग अगम चारु दरवाजे मोहैं॥
घाटी चतुरा सीति[4] विषम अति[5] पच्छि न पावैं।
बनचर बंकट बेस पाय लगि यों गुन गावैं॥

---

१ पड़द्दा। २ नित्य। ३ कोध। ४ घाटी चोइस साटि।
५ और।

तुम नाथ हमारे[१] कृपा करि गढ़ लज्जा यह धारिए।
परबेस[२] मनहुँ रवि को प्रगट यह गढ़ हम प्रति पारिए ॥९७॥

दोहरा छंद

च्यारि दरा चहुँ ग्राम बसि, घाटी किती जु और।
चहूँ ओर पर्वत अगम, विचरण थंभ सु जोर ॥९८॥

अथ पद्मऋषि तनपात प्रसंग

छप्पय

रणत भँवर ऋषिपद्म उग्रतप तेज कराए[३]।
इंद्रासन डिगमिगिय[४] देवपति शंका खाए॥
तब कामादिक बोलि शक्र ऋषि पास पठाए।
करो बिघ्न तब जाय भंग पर काज नसाए[५]॥
तब चल्यव मार निज सेन युत[६] ऋतु बसंत प्रगटिय तुरित।
बह त्रिविध पवन अद्भुत महा करहिं गान रंभा सुरति ॥९९॥

वसंत ऋतु वर्णन

छंद पद्धरी

तिहि समय काम प्रेरयौ सुरिंद्र।
जुहूहारि[७] इंद्र उठि पाव बंदि॥

---

१ हमार। २ वेष। ३ करायो। ४ इंद्र मन माहिं (माँझि) डरायो। ५ नठांए। ६ जुरि। ७ जुग।

सब परिकर बोले[1] चढ़ि सुमार।
ऋतु छहूँ संग धनु सुमन हार॥ १०० ॥
रति परम प्रिया ऋतुराज जानि।
नित रहत निरंतर रूप मानि॥
बहु किन्नर गावत देव नारि।
गंधर्व संग अति बल उदार॥ १०१ ॥
संगीत भाव गावैं अनंत।
सुर नर सुनंत बसि होत मंत॥
वन उपवन फुल्लहि अति कठोर।
रहे जोंर भौंर रस अंब मौर॥ १०२ ॥
कल कूंजत कोकिल ऋतु वसंत।
सुनि मोहत जहँ तहँ सकल जंत॥
नर नारि भए कामंध अंध।
तजि लाज काज परि काम फंद॥ १०३ ॥
पहुँच्यौ सुमारि ऋषि निकट आय।
प्रेर्यो सु परम भट अग्ग जाय॥
ऋषि लखे सुभट सेना सुकाम।
ऋषि कह्यौ कहा करिहै सुवाम॥ १०४ ॥
करि कठिन आप लाई समाधि।
तिहिं रहत काम क्रोधारि व्याधि॥

---

१ बुल्ले।

ग्रीष्म ऋतु वर्णन

ऋतु ग्रीषम को आज्ञा सु दिन्न ।
तिहि अति प्रताप ज्वल्लि किन्न ॥ १०५ ॥
रवि तपै बिषम अति किरन धूप ।
रवि नैन खुल्लि दिक्खिय अनूप ॥
बट इक्क महा गह्वर सुजानि ।
तिहिं निकट सरोवर सुर समानि ॥ १०६ ॥
इक आश्रम सुंदर अति अनूप ।
तिय गान करत सुंदर सरूप ॥
सौरभ अपार मिलि मंद पौन ।
मृग मद कपूर मिल करत गौन ॥ १०७ ॥
श्रीखंड मेद[1] केसर उशीर ।
तिहिँ परसि ताप मिट्टत सरीर ॥
गंधर्ब और किन्नर सुबाल ।
मिलि अंग रंग पहरें सुमाल ॥ १०८ ॥
चित चल्यो नाहिं ऋषि बज्रमान ।
रहि ग्रीष्म[2] ऋतू हिय हारि मान ॥ १०९ ॥

दोहरा छंद

लग्यो न ग्रीषम कौ कछू, ऋषि प्रताप तप धीर ।
तब पावस परनाम करि, आयस काम गहीर ॥११०॥

१ मेरु । २ ग्रीष्म ।

वर्षा ऋतु वर्णन

छंद भुजंगप्रयात

उठे बद्दलं वार आकाश भारी ।
भई एक बारं अपारं अँध्यारी ॥
बहै पौन चारयों महासीतकारी ।
चहूँ ओर कोधंत दामिनि अँध्यारी ॥ १११ ॥
घने घोर गज्जंत बर्षंत पानी ।
कलापी पपीहा रहैं भूरि बानी ॥
तहाँ बाल झूलंत गावंत झीनी ।
रही जाय आश्रम भई काम भीनी ॥ ११२ ॥
उड़ैं चीर सग्मीर लग्गंत अंगं ।
लसै गात देखंत जग्गै अनंगं ॥
करैं सोर झिल्ली घने दद्दुरंगे ।
तहाँ बाल लीला करैं काम संगे ॥ ११३ ॥
निकट्टं उघट्टंत संगीत बाला ।
बरं अंग अंगं रची फूल माला ॥
कटाच्छं करैं मंद हासं प्रहारैं[1] ।
तहाँ पद्म अंगं लगैं ना निहारैं ॥ ११४ ॥

दोहरा छंद

पावस हारि विचारि जिय, ऋषि न तज्यो तप आप ।
तब सु मैन मन मैं कहिय, उपजे शरद सुताप ॥ ११५ ॥

---
१ प्रसारैं ।

शरद ऋतु वर्णन

छंद त्रोटक

तजिए तप पावस बित्ति सबं ।
ऋतु शारद बादर दीस अबं ॥
सरिता सर निम्मल नीर[1] बहैं ।
रस रंग सरोज सु फुल्लि रहैं ॥ ११६ ॥
बहु खंजन रंजन भृंग भ्रमैं ।
कल हंस कलानिधि बेद भ्रमैं ॥
बसुधा सब उज्जल रूप कियं ।
सित वासन जानि बिछाय दियं ॥ ११७ ॥
बहु भाँति चमेलिय फूल रही ।
लषि मार सुमार सुदेह दही ॥
बन रास बिलास सुबास भरैं ।
तिय काम[2] कमान सुतानि धरैं ॥ ११८ ॥
समणें पर तैं नर काम जगै ।
बिरही सुनि कै उर घाव[3] खगै ॥
धर अंबर दीपक जोति जगी ।
नर नारि लखैं उर प्रीति पगी ॥ ११९ ॥
ऋषि पास त्रिया सर न्हान रच्यो ।
जल केलि अनेक[4] प्रकार मच्यो ॥

---

१ वारि । २ बान । ३ घ्याव । ४ अपुब्ब ।

बिन चीर अधीर लषै नर वै ।
कुच पीन नितंब सुकाम तबै ॥ १२० ॥
कवरी छुटि नागनि सी दरसै ।
सुर संग भ्रमै रस सों सरसै ॥
ऋषिराज महा उर धीर अयं ।
रितु सारद हारि सुजात रयं ॥ १२१ ॥

दोहरा छंद

हारि मानि सारद गइय, उठि हेमंत सकोपि ।
महासीत प्रगटिय जगत, सबै लाज तजि लोपि ॥ १२२ ॥

हेमंत ऋतु वर्णन

छप्पय छंद

तब सु हेम करि कोप सीत अति जगत प्रकास्यौ ।
बिषम तुखार अपार मार उपचार सुभास्यौ ॥
कंपत[1] चैतन रूप कहा जर जरत समूरे ।
तिय हिय लगि लगि बचन चरत मुख सैन सरूरे ॥
तिहि समय जीव सब जगत के भए इक्क नर नारि सब ।
उरबसी आय ऋषि निकट तक हिए लाय मोहि सरन अब ॥१२३॥

दोहरा छंद

खुली न कठिन समाधि ऋषि, चली हिमंत सुहारि ।
सिसिर परस मन बरनि करि, उठी सुकाम जुहारि ॥१२४॥

---

१ नचै ।

शिशिर ऋतु वर्णन

छंद मोतीदाम

किये तब मार हुकम्म सु हेरि।
उठी ससियो[1] तब आयसु फेरि॥
किए नव पल्लव जे तरु वृंद।
प्रफुल्लित अंब कदब स्वछंद॥ १२५॥
बहै बहु भांति त्रिविद्धि समीर।
रहै नहि धीरज होत अधीर॥
लता तरु भेंटत संकुल भूरि।
भए त्रण गुल्म हरे जड़ मूरि॥ १२६॥
मिटै जग सीत न ताप न तोय।
सबै सुखदायक जीवन सोय॥
झुके फल फूल लतावर भार।
भ्रमैं बहु भृंग जगावत मार॥ १२७॥
लगी लखि वायु सबै तिहिं बार।
सुनै डफ ताज तजैं नर नार॥
बजावत गावत नाचत संग।
अबीर गुलालरु केसरि रंग॥ १२८॥
भए मतवार सु खेलत[2] फाग।
महा सुख संग सजोगनि[3] भाग॥

---

१ ससिसिरौ। २ खिल्लत। ३ सजुगानि।

वियोगनि जारत मारत मार।
अनेक सुगंध अनेक विहार ॥ १२९ ॥

वसंत ऋतु वर्णन

छंद लघुनाराच

असंत संत मोहियं, वसंत खोलि जोहियं।
बजंत[1] बीन बाँसुरी, मृदंग संग आसुरी ॥ १३० ॥
लियं सुबाल वृंदयं, जगत्त काम द्वंदयं।
अनेक रूप सुंदरी, मनोज राव की छरी ॥ १३१ ॥
स्ववेस केस पासयं, मनो कि मैन फासयं।
गुही त्रिविद्धि बैनियं, कि मोह किन्न सैनियं ॥ १३२ ॥
महा सुघट्ट पट्टियं, सिंगार भूमि फट्टियं।
विचै सुमंद[2] रेखयं, महा विशुद्ध देखयं ॥ १३३ ॥
विशाल भाल सोभियं, छपा सु नाथ लोभियं[3]।
सु मध्य सीस फूलयं, दिनेश तेज तूलयं[4] ॥ १३४ ॥
भरी सु मुक्त मंगयं, मनो नछत्र संगयं।
विशाल लाल बिंदयं, मिले सु भोम चंदयं ॥ १३५ ॥
जराव आड भाइयं[5], मनो मिलन्न आइयं।
दिनेस भौम बुद्धयं, शशि गृहे सु शुद्धयं ॥ १३६ ॥

---

१ मुदंग ताल खंजरी। उपंग संग अंसुरी। २ सुमंग, माँग। ३ लोपियं। ४ तुल्लयं। ५ भालयं।

कपोल गोल आदसं, कि भौंह भौंर साहसं ।
प्रफुल्लि कंज लोचनं, मृगाच्छि गर्व्व मोचनं ॥ १३७ ॥
त्रिविद्धि रंग गातयं, सु स्याम स्वेत राजयं[1] ।
बनी कि कीर नासिका, सु गथ्थ नथ्थ भासिका॥ १३८ ॥
मनो सु काम ओपयं[2] , दयो सुचक्र[3] कोपयं ।
करन्न फूल राजयं, उभै कि भांन साजयं ॥ १३९ ॥
सुहंत स्याम अल्लकं, भ्रमत्त भौंर वल्लकं ।
अरुन्न रेख बेमयं, पियूष कोस देखयं ॥ १४० ॥
अनार दंत कुंदयं लसंत वज्र दंतयं[4] ।
बुलंत बाँणि कोकिला, विपंच की सुरं मिला ॥ १४१ ॥
कपोति पोति कंठयं, सुढार हार गंठयं[5] ।

छप्पय छंद

कुच कंचन घट प्रगट, नाभि सरवर बर सोहै ।
त्रिबली तापहँ ललित, रोम राजी मन मोहै ॥
पंचानन मधि देस, रहत सोभा हिय हारी ।
मनहुँ काम के चक्र, उलटि दुंदुभि दोउ डारी[6] ॥
दोउ जंघ रंभ कंचन दिपत[7] ,धरी कमल हाटक[8] तनै ।
गति हंस लखत मोहत जगत, सुर नर मुनि धीरज हनै ॥१४२॥
जिती उब्बसी संग, सकल सम्मूह मिलिय बर ।
बिच्चि सु मैन सह सैन गए, ऋषि निकट मरूकर ॥

---

१ रातयं । २ वोपयं । ३ चक्क । ४ द्वंदयं । ५ तट्ठयं ।
६ निसान सुधारी । ७ उलटि । ८ हारक ।

गावत बिबिधि प्रकार, करत लीला मन भाइय ।
हाव भाव परभाव, करत आश्रम मैं आइय ॥
ऋषि निकट आय होरिय रची, बर्षत रंग अनंग गति ।
मन[1] चलै चित्त ज्यौं भै अचल, करत कृपा त्यों त्यों अमित ॥१४३॥

दोहरा छंद

करि बिचार त्रिय कृत कृपा, कुसुम कुंद गहि लीन ।
लीलाललित सु बिथ्थरिय, चंचल[2] बयसु नबीन ॥१४४॥
शशि मुख वृंद[3] स्वछंद मिलि, रति सम रूप अनूप ।
ऋषि समीप क्रीड़ा करति, हरति धीर मुनि भूप ॥१४५॥

चौपाई छंद

वर्षत रंग अनंग सु बाला ।
मनहुँ अनेक कमल की माला ॥
चंचल नैन चलैं चहुँ आसा ।
रूप सिंधु मनु मीन सु पासा ॥ १४६ ॥
घूँघट ओट दुरत प्रगटत यों ।
मनो ससि घटा छबि उघटत ज्यों ॥
बिलुलित बसन अंग दुति सोहै ।
निरखत सुर नर मुनि मन मोहै ॥ १४७ ॥
अलक सलक[4] अतिसै चटकारी ।
अमी पियत शशि नाग निकारी ॥

---

१ चन । २ बिस्तरि । ३ वोइ । ४ चिलक ।

छुटै गुलाल मुठी मृदु मसकै ।
　　चूवै अधर[1] बिंब रस चमकै ॥ १४८ ॥
करैं गान पशु पच्छी मोहै ।
　　कहो जगत इन पटतर को है ॥
लै लै गेंद परसपर मेलैं ।
　　बाल वृंद मिलि मिलि सुख झेलैं ॥ १४९ ॥
अध[2] ऊरध चहुँ ओर सुमारैँ ।
　　लजति खिजति लगि[3] प्रेम प्रहारैं ॥
मंद पवन लगि चोर[4] परयो धर ।
　　कुच अंकुर उर मनहुँ उभै हर ॥ १५० ॥
दमकति दिपति सलोनी दीपति ।
　　काम लता विहरैं मनु गज गति[5] ॥
लगत गेंद कंपित उर भागी ।
　　मंद मुसुकि ऋषि निकट सुपागी[6] ॥ १५१ ॥
सुमन वृंद सौरभ उठि भारी ।
　　भ्रमर पुनीति[7] गुँजार उचारी[8] ॥
शरद उन्माद संधान सु किन्नौं ।
　　अति रिसि तानि श्रवन उर दिन्नौं ॥ १५२ ॥

---

१ अधर बिंब रसकै चसकै । २ अद्ध, उद्ध । ३ मिलि । ४ अंबर । ५ झीन लंक अंग झलकत वर । नाभि गँभीर त्रिबलि अति सुंदर । ६ सुनि बादित्र गान कल लीला । काम कोपि सर धनुष सुमीला । ७ पुनिच । ८ त्रिविधि समीर सुहावन जानी । प्रफुलित नूत बैठि धनु पानी ।

छुटि समाधि ऋषि नैन उघारे।
अति सकोप सम्मर उर मारे॥
चहुँ दिसि चितै चक्रित ऋषि भयऊ।
लखि तिय वृंद अनंद सु भयऊ॥ १५३॥
लीला गैंद फागु मिसि[1] दौरी।
ही हो करत उठी बर जोरी[2]॥
बन अकेलि तिय पुरुष न कोऊ।
लीला अमित देखि दृग दोऊ॥ १५४॥
रंग अपार डारि ऋषि ऊपर।
कल कल हंस बजत पद नूपर॥
करैं कटाक्ष अनेक सु बाला।
नैन सैन सर लगि चित चाला॥ १५५॥
अंग अंग गहि फाग[3] सु मग्गै।
परसि गात तब काम सु जग्गै॥
मुख मींडत[4] अंजन गहि दिन्नौं।
जग्यो काम ऋषि काम सु भिन्नौं॥ १५६॥
लखि मुसकानि भई मति भोरी।
जीति सरस ऋषि कामनि हेरी॥ १५७॥

---

१ मिलि। २ कंदुक केलि और मिसि होरी। भोरी निपट लेत चित चोरी। डारि मोहिनिय मोहिव बाला। माया बसि भो ऋषि तिहिं काला। ३ फाग सुमागै, जागै। ४ माड़त।

दोहरा छंद

का नहिं पावक जरि सकै, का नहिं सिंधु समाय।
का न करै अबला प्रबल, किहि जग काल न खाय ॥१५८॥
कवि लाखन अबला कहत, सबला जोध कहंत।
दुबला तन मैं प्रगट जिहिं, मोहत संत असंत[१] ॥१५९॥
जीति सिसिर बित्तिय[२] तबै, फिरि आयव ऋतुराज।
मिले उर्वसी पद्म ऋषि, सरे शक्र के काज ॥१६०॥
बिबस भए मुनि अप्सरा[३], भुल्लिय तप ब्रत नेम।
निसि बासर क्रीड़ा करत, बढ्यो जु तन मन प्रेम ॥१६१॥
सुरति बढ़ी चित में चढ़ी मढ़ी मोह मति भूरि।
छिन छिन तिय ऋषि रजत[४] दोउ, भयउ[५] प्रेम परि पूरि ॥१६२॥
हृदय पुरंदर त्रास गनि, गइय उर्वसी त्यागि।
बिन माया ऋषिराज तब, मन सुत्तो[६] सो जागि[७] ॥१६३॥
जाय जुहारे इंद्र को, काम उर्वसी संग।
काज[८] सँवारयो रावरो, करयो कठिन तप भंग ॥१६४॥

(वचनिका) वार्त्तिक

तब इन्द्र कामादिक को सत्कार कियो। यहाँ ऋषि पद्म सूतो सो जाग्यौ। मन महँ विचार करन लाग्यौ। मैं तो माया मैं पाग्यौ तप खोयो औ कलंक लाग्यौ। और अब दोनौं गईं तपस्या तो खंडित भई, अरू उर्वसी हू जात रही

---

१ अनंत। २ बीती। ३ अच्छरिय। ४ राज। ५ भरे। ६ सोवत सो। ७ लागि। ८ कज्ज।

अत्र यातैं यह शरीर राखनो योग्य नहीं और मन की बासना भैात ठैार भई तातैं एक शरीर सूँ कछू बनि आवै नहीं। जब ऋषि होम करि शरीर त्यागो। जहाँ जहाँ बासना रही तहाँ ही पाय्यो॥

दोहरा छंद

तिय वियोग ऋषि तन तज्यौ, ग्यारा सै चालीस।
माघ शुक्ल द्वादशि सु तिथि, वार बरनि रजनीस॥१६५॥

छंद पद्धरी

तन पात किन्न ऋषि पदम आप।
उर्वसी विरह तन मन सु ताप॥
ग्यारा सौ चालीस जानि।
नृप विक्रम संवत ताहि मानि॥ १६६॥
तप[1] सिद्धि मास अरु बहुत पच्छि।
ऋतु शिशिर द्वादशी तिथि सु रच्छि॥
शिववार सोम जान्यौं प्रसिद्ध।
जित प्रीति योग बिच करन अद्ध॥ १६७॥
रवि अयन[2] अंश अठ बीस मानि।
शशि जन्म त्रियोदश अंश जानि॥
सुध मीन लग्न बिगृह सु त्यागि।
करि हवन जवन सुख हृदय पागि॥ १६८॥

---

१ तपसि। २ एण।

निज प्रथम अंग पंचांग होम।
जित रही बासना सरस धोम॥
ऋषि मुद्गल गोती शिखाहीन।
वहि तिलक हृदय आयो नवीन॥ १६९॥
शिर भयो पृथ्वीपति जमन ईस।
जिहिं राज्य करउ पूरण दिलीस॥
वह रह्यो तिलक दिय परि अनूप।
तहाँ भै हमीर चहुवान भूप॥ १७०॥
दोउ बाद कर्म्म किन्नो सु चाहि।
दोउ भए मीर महिमा सु साहि॥
अरु लग्न उर्वसी चरन संग।
यह भए पंच ऋषि पदम अंग॥ १७१॥

(वचनिका) वार्तिक

ऋषि पद्म उर्वसी को विरह तन त्यागयौ। माह शुक्ल १२ द्वादशी सोमवार आद्रा नक्षत्र प्रीति योग ववकर्ण, सूर्य्य २८ अट्ठाईस, चंद्रमा मिथुन को तेरा १३ अंश, मीन लग्न मैं देह होमी। पाँच अंग होम्याँ जितनी वासना जितनी जायगा हुई। ताही सों पाँच स्वरूप एक शरीर का हुआ॥

*

अथ राव हम्मीर को जन्म वर्णन

दोहरा छंद

ससि वेद रुद्र संवत गिनो, अंग खाभ्र षित साक।
दच्छण अयन सु सरद ऋतु, उपजे गए न नाक ॥१७२॥
गजनी गौरी शाह सुत, भय अलावदी साय।
ताही दिन रणथंभ गढ़, जन्म हमीर सु आय ॥१७३॥
यह हमीर नृप जैत कै, अमर करण आचार।
मीणा भारू बंधु दोउ, भई नारि तिहिँ बार ॥१७४॥

छंद पद्धरी

शशि रुद्र वेद संवत सुजान।
षट सहस इक साको प्रमान॥
रवि जाम अयन दच्छिण सुगोल।
ऋतु शरद शुभ्र सुंदर अमोल॥ १७५॥
तिथि भान उर्ज्ज बल पच्छि जानि।
रवि घटी तीस अरु दोय मानि॥
हिर बुध्न वेद घटि घटिय साठ।
व्याघात योग मुनि घटी आठ॥१७६॥
बालब्ब नाम सोइ कहत कर्ण।
यहि भाँति कह्यउ पंचांग वर्ण॥
रवि उदय इष्ट घटिका छतीस।
पल शून्य पंच जान्यूँ सदीस॥१७७॥

पल षोड़श अष्टाबीस दंड ।
दिन मान जान तिहिं दिन सुमंड ॥
इकतीस चवाली रात्रि मानि ।
सब घटिय साठि दिन राति मानि ॥१७८॥
भौ जन्म लग्न मिथुनेस आय ।
द्वादसह अंश गत भय बताय ॥
तुलभाँन सप्तदस अंश मानि ।
सरि रुद्र अंश भख रासि मानि[1] ॥१७९॥
मंगल सुबाल धरि एक अंस ।
बुध बारह बृश्चिक मैं प्रशंस ॥
घटि जीव एक अंसह सुशुद्ध ।
भृगु कन्या विद्या सुभग उद्ध ॥१८०॥
शशि मीन तीस कटि एक अंश ।
तिय रासि कह्यो सुर भानु तंस ॥
सोइ कहे अंश चौबीस पूर ।
यह जन्म लग्न हम्मोर सूर ॥१८१॥
सुनि राव जैत मन हर्ष किन्न ।
भंडार अमित सब खोलि दिन्न ॥
गुरु विप्र मंत्र मंत्रो सु बोलि ।
बड़ भीर भइय नृप आय पौलि ॥१८२॥

---

1 जानि ।

किय श्राद्ध नंदि मुख वेद वृद्धि ।
सब जाति कर्म किन्नो सु सिद्धि ॥
गो भुम्मि अन्न कंचन सु दिन्न ।
द्विजराज सकल संतुष्ट किन्न ॥१८३॥
लिय बोलि सकल जाचक सु वृंद ।
हय हेम सुखासन दीन बंद ॥
बहु भूषन बाहन बिबिध रंग ।
जिहिं चाह लही सो दियो संग ॥१८४॥
दधि दूब हरद भरि कनक थाल ।
बहु गान करत प्रविसंत बाल ॥
दुंदुभि बजंत घर घरनबार ।
ध्वज कनक पताका द्वार द्वार ॥१८५।
औछाह राजमंदिर अनूप ।
आनंदमग्न नर नारि भूप ॥
सब दान देत घर घर उछाह ।
सब भय अजाचि जाचत सुताह ॥१८६॥
बहु मंगल गावत अति अनूप ।
जय जयति कहत चहुवान भूप ॥१८७॥

वचनिका

राव जैत कै गढ़ रणथंभवर तहाँ जैत घर हम्मीर जन्म्यौ संवत ११४१ शाकै १००६ दक्षिणायन, शरद ऋतु कार्तिक

शुक्ला १२ द्वादशी रविवार घटी ३२ उत्तरा भाद्रपद घटी ६ पल ५६। कछु घर को धरयौ पायौ। एक सेवक लोह पत्र पाथर सों घस्यो तहाँ लोह सोनो (सुवर्ण) भयौ राव जैत को आणि दयो व्याघात योग घटी १६ प० बालव कर्ण घटी २८ इष्ट घटी २६ पल ५ दिनमान घटी २८ पल १६ रात्रिमान घटी ३१ पल ४४ तुला शंक्रांति गतांश १७ भोगांऽश १३ चंद्रमा मीन को ११ अंश मंगल कन्या को

१ अंश बुद्ध बृश्चिक को १२ अंश बृहस्पति कुंभ को १ अंश शुक्र कन्या को १४ अंश शनि मीन को २९ अंश राहु कन्या को २४ अंश राव हम्मीर असी घड़ी जन्म लियो। सब को मनोर्थ पूर्ण कियो। सर्व वंश में ह हुओ और अजमेर चित्तौर जु बोलि विप्र पोष्या जाचक संतोख्या[1] मंगल गाए बधावा[2] बजाया॥

---

१ सरबस मैं (सर्वस्व में) दान दीन्हों जग यश लीन्हों।

२ भए मन भाए।

हम्मीरराव और अलाउद्दीन पातशाह का वैर वर्णन

दोहा

एक समय पातशाह बन, मृगया कहँ मन कीन[1] ।
सबै खाँन उमराव चढ़ि, हय गय वृंद सु लीन ॥१८८॥
हरम सबै पतशाह को, जो सिकार के जोग ।
साज बाज बनि बनि सकल, अरु अंदर के लोग ॥१८९॥
सुंदरता सुकुमार निधि, बहै अपछरा अंग[2] ।
ताके गुन गन तैं बँध्यौ, निमिष न छाड़त संग ॥१९०॥

छंद भुजंगप्रयात

चले शाह आखेट[3] बज्जे निशानं ।
सबै भूप सथ्थं सुपथ्थ[4] सुजानं ॥
सजं डबंरं अंबरं साज बाजं ।
बनी पष्षरं बाजि साजं समाजं ॥१९१॥
किते बीर बाने अमानं अपारं ।
किते मीर धीरं सजे सार धारं ॥
नफीरी बजी भेरि बज्जे रवद्दं ।
बहै उर्वसी संग लीनी समद्दं ॥१९२॥
जके रूप सौं साह बंध्यौ सुजानं ।
यथा चंद्र की कांति चक्कोर मानं ॥

---

१ किन्न । २ अच्छवी अंग । ३ आलादि । ४ समथथ ।

यथा पंकजं[1] वै दुरैफैं लुभाए ।
तथा शाह बंध्यौ सनेहं सुभाए ॥१९३॥
चले हयदलं पयदलं सथ्थ रथ्थं[2] ।
किते स्वान चीता मृगं संग जुथ्थं ॥
चले शाह गोसं सरोसं सुभानं ।
बजे नद्द नीसान नव्वीन[3] चावं ॥१९४॥
उठी रेणु आकाश छायौ सुहद्दं ।
मनो पावसं मेघ गज्जे सबद्दं[4] ॥
चले तेज ताजी सुबाजी अपारं ।
सबै खान सुलतान संगं जुझारं ॥१९५॥
करैं बीर लीला सुकीली[5] बिधानं ।
धरैं बाँन कम्मान संधान पानं ॥
लखे जीव जेते सु केते जिहानं ।
भ्रमै जंत्र तंत्रं सु पावै न जानं ॥१९६॥
बनै बेहरं गोत्र गंभीर नारी[6] ।
बहै नीर नद्दं सुभद्दं उन्हारी ॥
झरै निर्झरं नाद भारी असार[7] ।
रहे फूलि संकूल वृत्तं अपारं ॥१९७॥
जहाँ अंब नीबू भए और केलं ।
सबै वृत्त[8] फुल्ले फले भार मेलं ॥

---

१ पंकजं पै दुरेफे लुभाए । २ हत्थम् । ३ वाने सुचानं । ४ सुभद्दं । ५ सकेली । ६ भारी । ७ पहारं । ८ वृच्छ फूले ।

भरी भार साखा रही भुम्मि लग्गी ।
लता संकुलं पाद पंतै उमग्गी ॥१९८॥
भ्रमै भृंग पुंजं सुगुंजं अपारं ।
मिली बेलि केती महीरूह डारं ॥
मनों मार अप्पार तानै बितानं ।
तिहूँ काल हेरै लखै नाहिं भानं ॥१९९॥
रमै कोकिला कीर नचै मयूरं ।
कहै बैन मानों बजै कामतूरं ॥
बहै सीत मन्दं सुगंधं पवन्नं ।
करै काम उद्दीपने देखि बन्नं ॥२००॥
सुरं[1] सुंदरं पंकजं बन्न फुल्ले ।
करै कुंज भारी भ्रमै मोर भुल्ले ॥
चहूं ओर कुंमोदिनी चारु फुल्ली[2] ।
महा मोद सों भार आनंद झुल्ली ॥२०१॥
किते जीव संमूह देखंत भज्जैं ।
मृगं व्याघ्र चीते रिच्छं यत्र गज्जैं[3] ॥
कहूँ कौलपुंजं कहूँ नील गाहं ।
कहूँ चीतलं पाडुलं[4] व्याघ्र नाहं ॥२०२॥
कहूँ भील बाँके[5] बसैं ताऽस्थानं[6] ।
भगे सिंह स्यारं ससाश्रोन पानं ॥

१ सरम सुन्दरं पंकजं पुंज । २ फूली, झूली । ३ मृगं भार चेति वृकछत्र गज्जै । ४ पाडलं । ५ वंक । ६ तास स्थानं ।

तिहाँ ठौर ग्रीषम्म किन्नो प्रवेसं ।
महा संकुलं वृच्छ राजं सुदेसं ॥ २०८ ॥
तहाँ तेज भानं न जानं न जानं ।
तिहाँ हेत साहं रहे तास थानं [1] ॥
समो एक ऐसो तहाँ सोइ आयौ ।
महा पौन परचंड आ मेघ छायौ ॥ २०९ ॥
कहूँ ओर पतसाह खेलैं सिकारं ।
करैं केलि जेती जलं बाल लारं ॥
भयो अंधकारं महाघोर ऐनं ।
गई सुद्धि सुज्झै नहीं अप्प[2] नैनं ॥ २१० ॥
फुरगौ[3] साह को सत्थ भोजत्थ तत्थं ।
भयो घोर अंधार सुझ्झै न हत्थं ॥
तजी बालक्रीड़ा जलं त्यागि भग्गी ।
जहाँ ओर दौरी भयो मुक्ख अग्गी ॥ २११ ॥
किहूँ ओर दासी किहूँ ओर खोजा ।
किहूँ ओर हुरमैं कहूँ ओर कोजा ॥
जसो होनहारं बन्यो आय जैसो ।
करो लाख कोऊ टरै नाहि तैसो ॥ २१२ ॥
लिखे लेख जो नाहि मिट्टै सुकोई ।
यही बात निश्चै सुनो सर्व्व सोई ॥

---

१ तिही तेज भाननं जाने न जातं । तिहीं देश साहं रहे संक वातं । २ आप । ३ फुख्यो ।

सरं त्यागि चल्ली सुहुरमैं सुभीतं ।
कँपै गात ताको रह्यो ब्यापि सीतं ॥ २१३ ॥
तहाँ ठौर महिमाँ मिलै सेख आई ।
महा साहसी सूर उदारताई ॥
निजं धर्म साधै तजै नाहि राचं ।
कहै जो कछू[1] तो निबाहंत वाचं ॥ २१४ ॥
मिली बाल ताको कही दीन बानी ।
उभै[2] वाम सेखं मनों आप जानी ॥
डरो ना कहो आप हो कौन कोही ।
कहूँ जो उढ़ावो यहाँ बैठि मोही ॥ २१५ ॥
तबै बाजि तैं सेख भू पैं जु आयौ ।
कछू वस्त्र हो अंग ताकों उढ़ायो ॥ २१६ ॥

दोहरा छंद

महिमा उत्तर बाजि तैं, दियो वस्त्र तिहिँ हत्थ ।
सीत भीत ता ना मिटो, कही हुरम यह गत्थ ॥२१७॥
पुच्छिय महिमा साहि तब, को तू आप बताय ।
मैं घरनी पतिसाह की, रूप बिचित्रा नाय ॥२१८॥
जलक्रीड़ा हम करत सब, आयो पौन प्रचंड ।
तब डेरन को भजि चलीं, तामै मेघ सुमंड ॥२१९॥
भयो भयानक तिमिर बन, सबै सत्थ गय भूल ।
मैं इकली बन महँ यहाँ, डरति फिरति दुख मूल ॥२२०॥

---

१ कहूँ । २ समै ।

छप्पय छंद

तब महिमा कर जोरि हुरम को सीस नवायो[1] ।
चढ़्यो अस्व की पिट्ठि दैव पहुँचाव सुभायो ॥
कहै हुरम सुन सेख देह कंपत है मोरी ।
छिनक बैठि यहि ठैार सरन मैं लीनी तोरी ॥
कहै सेख यह बात नहिँ, तुम साहिब मैं दास तुव ।
यह धरम नाहिं उलटी कहो, सरन सदा सेवक सुभुव ॥२२१॥
सेख समो पहिचानि स्वामि सेवग न बिचारो ।
काम रूप तुम पुरुष वीर वानैत उदारैा ॥
बहुत काल अभिलाष रही जिय मैं यह भारिय ।
कान समो वह होय मिलै महिमा गुन वारिय ॥
सुइ करिय आज साहिब सहल, सकल मनोरथ सिद्ध हुव ।
दै योग भोग संयोग यह, कोन दोस जग देहु तुव ॥२२२॥

चैापाई छंद

कहै सेख तुम बेगम सच्चिय ।
ऐसी बात कहो मति कच्चिय ॥
मैं अब लोँ तिय जग मैं जानत ।
भगनी मात सुता सम मानत ॥ २२३ ॥
ता महि तुम हजरति की बाला ।
सब कै एक वहै हकताला ॥

---

१ हुरूम कहि कहि सन बोयो ।

तातैं कहा धर्म मैं हारूँ ।
यह तो कबहूँ जिय न बिचारूँ ॥ २२४ ॥
सुनहु सेख बेगम तिय सबहीं ।
तुम हूँ धर्म्म सुन्यो है कबहीं ॥
तिय तजि लाज कहत रति जाचन ।
कोनहिँ धर्म जो पुरुष अराचन ॥ २२५ ॥
तन मन धन जाचे ते दीजे[1] ।
कह कुरान पूरन सोइ कीजे ॥
पुरुष धर्म यह भूर न होई ।
तिय जाचत कों नाटत कोई ॥ २२६ ॥

सोरठा छंद

तब जिय सोचि बिचारि, मनहीं मन महिमा समुझि ।
साँची है यह नारि, धर्म उभै जग महँ प्रगट ॥२२७॥
तब महिमा मुसुकाय, कर गहि आलिंगन दियौ ।
इक तरु कै तर जाय, दियो तुरंगम बाँधि तब ॥२२८॥
जीनपोस तर डारि, सस्त्र खुल्लि रक्खिय निकट ।
करी सुमार सुमार, उत्कंठा तिय मिलन की ॥२२९॥

छप्पय छंद

महा मोद मन बढ़यो परस्पर तन मन फुल्लिव ।
मिटिव बंक मन संक निसंक ह्वै आसन भुल्लिव ॥

---

१ दिज्जिय, किज्जिय ।

मानों कोक चकोर चंद लब्भव रविलंबे।
घन दामिनि मनु मिलेय काम रतिपति सुख फंबे॥
दुहुँ ओर शोर स्वातिक सुभो, गाढ़ो अति आलिंगन हियव।
नख खंड नाहि परसे सरहि, सकल कोक केली कियव॥२३०॥
अंग अंग बिन अंग रंग बढ़्ढिव दुहुँ ओरन।
कढिव विरह तन ताप परस्पर वर सत मोरन॥
हाव भाव रति अंग मुदित वर्षत अभिलाषै।
करत कटाच्छ प्रकाश बैन मधुरै मुख भाषै॥
गहि अंग संग आसन हियव, कोक कला रस विस्तरिय।
आनंद द्वंद उन्माद जुत, काम विवस दोउन भइय॥२३१॥
तिहिं छिन इक मृगराज आनि तत्काल सुगज्जिय।
प्रफुलित नयन प्रचंड चँवर सिर उप्पर सज्जिय॥
विकट दंत मुख विकट बाहु नख विकट सुरज्जै।
तिहिं भय वन के जीव सबै गजराज सुभज्जै॥
आवत देखि तेहि सिंह को, ह्वै सभीत इम तिय कहै।
विधि कौन समै यह का भई, दैव वारि मैं बपु दहै॥२३२॥
तब तिय कंपि सभीति उछरि महिमा गरि लग्गिय।
हे प्राणेश्वर कहा भई रसगत जो उमग्गिय॥
तजहु भजहु अब वेगि, बचहु अब प्राण उबारौं।
मैं अब पलटै प्राण तजौं, तुम पर तन वारौं॥
मुसकाय मीर तब यों कहै, न डरि न डरि अबला सुभुव।
तुट्टै जु आब रक्खों भुजन, कहा स्याल डर डरत तुव॥२३३॥

छंद अर्द्धनाराच

गहै कमान बानयं, धरंत ताहि पानयं ।
तज्यो न बाल आसनं, गह्यो सरं सरासनं ॥२३४॥
सु सिद्धि राग वागयं. ढए म धीर पागयं ।
कह्यो हँकारि बाचयं, सम्हारि स्वान साचयं ॥२३५॥
करी सुगुज्ज पुंजयं, उठ्यो सु क्रोध गुंजयं ।
धरयौ सु चौर सीसयं, भुजा उठाय रीसयं ॥२३६॥
यथा सुक्रोध कालयं, उठ्यो सु सिंह बालयं ।
करं कमान लिन्नयं, कसी सतानि[1] दिन्नयं ॥२३७॥
लग्यो सुबाण मत्थयं, लखी अकत्थ गत्थयं ।
लग्यो सुबाण पार भो, गिरयो सुसिंह स्यार भो ॥२३८॥

दोहरा छंद

सिंह मारि इक बांण तैं, भू मैं दिन्नौ डारि ।
फिरि कमांन तिहिं हथ्थ[2] तैं, धरी जु भूपर धारि ॥२३९॥
यह साहस किन्नौ प्रगट, सम स्वभाव सम बुद्धि ।
गर्व हर्ष हिय नहि कछू, प्रगटिय प्रेम प्रसिद्ध ॥ २४०॥
मिलत मिलत मुसुकात मृदु, कंपत हर्षत गात ।
उचकनि लचकिन मसकिबो, सीकर हूकर बात ॥२४१॥

कवित्त छंद

कंचन लता सी थहरात अंग अंग मिलि,
सीकर समूह अंग अंगनि मैं दरसै ।

---

१ नान । २ हाथ ।

चुंबन कपोल नैन खंडन अरध नख,
गहत पयोधर प्रचंड पानि परसै ॥
आनँद उमंगन मैं मुसकात बाल तुत-
रात बतरात सतरात रस बरसै ।
लपटनि झपटनि मसकनि अनेक अंग,
रति रंग जंग तैं अनंग रंग सरसै ॥२४२॥

छप्पय छंद

मिटो पवन परचंड, मिटिव मनमथ मद भारिय ।
हटेउ तिमिर तिहिँ समय, प्रगट परकास सुधारिय ॥
सकल सत्थ जथ तत्थ, मिले अप्पन[1] थल आइव ।
साहि हुरम को सोध करिव तिहिं समय सुहाइव ॥
दीनीजु सीख तब सेख को, आय आय डेरन गयव[2] ।
पहुँची सुजाय पतिसाह पै, हुरम साह आदर दियव ॥२४३॥
तब सु साहि करि कुच्च,[3] सकल दिल्लिय दिसि आयव ।
चढ़िव सेन संमूह, धूरि उड़ि अंबर छाइव ॥
घुमरि घुमरि निस्सान, घोर दुंदुभि घन बज्जिय ।
सकल खान उमराव, हरष संजुत मग रज्जिय ॥
कीन्हें[4] प्रवेस निज निज घरन, साह महल दाखिल भयव ।
सुख खान पान सौगंध जुत, आप आप[5] रस बसि[6] छयव॥२४४॥

---

१ आपन । २ दिन्नो जु सिक्ख तब सेख को अप्प अप्प सिवरन गवय । ३ कूँच । ४ किन्नो । ५ अप्प । ६ बस भयव ।

एक[1] समय पतिसाह, हुरम सँग सेज बिराजे।
दंपति अति रस लीन, कोक की कला[2] सु साजे॥
रमत करत परकार, एक[3] आसन रस[4] भीने[5]।
सरस परस्पर मुदित, उदित कंद्रप तन चीने॥
तिहिं समय दैव संजोग तैं, इक आखु आवत भयव।
देखत ताहि पतिसाहि को, मदन दंद उत्तरि गयव॥२४५॥

दोहरा छंद

मूषक हजरति देखि कै, आसन तजि ततकाल।
लै कमान संधानि कै, हन्यों तीर लखि बाल॥२४६॥

चौपाई छंद

हजरति हरषि तीर तिहि दिन्नौ।
चूहो[6] प्राण-हीन तब किन्नौ॥
तबहीं साहि हरषि मुसकाए।
तिय को ऐसे बचन सुनाए॥२४७॥
कायर जाति तिया हम जानी।
तातैं यह हम प्रथमहि ठानी॥
यह करनी अदभुत तुम देखी।
निज कर करी सु तुम अवरेखी॥२४८॥
हँसी हुरम सुनि हजरत बानी।
पुरुषन की तो अकथ कहानी॥

---

१ इक। २ केलि। ३ इक्क। ४ रति। ५ भिन्ने।
६ चूही प्राणहीन तिहिं चीनो।

मारैं सिंह न तौं मुष भाषैं।
जाचै नाहिं प्राण वे राखैं ॥२४९॥
मैं जग में ऐसा सुनि पाऊँ।
कहै साहि मैं बहुत बधाऊँ॥
बकसौ गुनह तो अबै बताऊँ।
तुरत साहि कै पाइ लगाऊँ ॥२५०॥

सोरठा छंद

ऐसा मोहि बताय, सिंह मारि सिफत न करै।
बकसौ औगुन आय, जो उन तात ज मारियो ॥२५१॥
हुरम तबै कर जोरि, बार बार सिर नाय कै।
सुनहु गुनह अब मोरि, हजरति बीत्यो आपनो ॥२५२॥

छप्पय छंद

मृगया महँ जिहि समय, सकल भूले बन माहीं।
महा घोर तम भयो, तहाँ बरनी नहिं जाहीं॥
तदिन सेख संयोग, आनि हमसै तब मिल्लिव।
नहिन सेख तकसीर, देखि मन मोरहि चल्लिव॥
संयोग भोग बिछुरन मिलन, लिख्यो बिधाता ज दिन जहँ।
नहिं टरै लाख कोऊ करो, सु तौ होय वह तदिन तहँ ॥२५३॥

दोहरा छंद

मैं सेखहिं जानत नहीं, सेख न जानत मोहिं।
होनहार संयोग जो, मिटै न उतनी होहि ॥२५४॥

सुरति करत सिंह जु उठ्यौ, लख्यौ सेख सति भाय ।
ले कमान मारयौ तुरत, तज्यौ न आसन आय ॥२५५॥
सुनू स्वभाव ज सेख के, लच्छिन कहे जु आप ।
मैं सभीति भइ सिंह तें, कहे मोहि बिन पाप ॥२५६॥

त्रोटक छंद

सुनिए पन सेख करै निज ये ।
घर बैठत पाँ जल सों रजए ॥
नहिं भोजन सोहि गरम्म करै ।
उकरू नहिं बैठत भुंमिं भरै ॥२५७॥
सरणागत आवत नाहिं तजै ।
पर बाम लखे मन माहि लजै ॥
जहँ जाचत प्राण न राख तहाँ ।
नहिं झूठ अकारन भाष तहाँ ॥२५८॥
रण मैं नहिं पीठ दई कबहूँ ।
लखि आरतिवंतन सों अबहूँ ॥
तहँ मेटत आरति वार तिहाँ ।
बिन आसन बैठत है कबहाँ ।।२५९॥
मुख से उचरै न टरै कबही ।
सब तें मधुरे मुख बैन सही ॥
द्रग लाज भरे रिझवार घनैं ।
रहनी करनी कविराज भनैं ॥२६०॥

महिमा महिमा नहिँ जात कही।
जस चाहक गाहक गाहक ही॥
बरबीर महारणधीर अरैं।
खग खेत गहै अरि खंड करै॥२६१॥
सुनि साहि मनै अचिरज्ज भयो।
ततकाल जु सेख बुलाय लयो॥
छिरकाय धरा जल सोँ जु भरे।
बहु भोजन आनि गरम्म धरे॥२६२॥
तर गेरि पटंबर अंबरयं।
करि पालथि छोरिय कंमरयं॥
बहु भाँति सिराहि सुभाय मनं।
करिए तब भोजन आप[1] अनं॥२६३॥
मिलिए सब जो कछु बाल कहे।
महिमा तिय जानि सनेह लहे[2]॥
प्रजुरे पतिसाह सु कोप कियं।
मनु ज्वाल विशाल सुघृत्त दियं॥२६४॥
द्रग लाल बिशाल सुबंक भुवं।
रद दाबत[3] ओठ सु ओठ दुवं॥
करि क्रोध तबै पतिसाह कहै।
उर मैं अति क्रोध प्रचंड दहै॥२६५॥

---

१ अप्प। २ लए। ३ दब्बत।

सुनि जामहि जो तकसीर परै।
तिहि कोन कहो अब दंड धरै॥
कर जोरि उठ्यो महिमा तब ही।
हम तो तकसीर भरे सबही॥२६६॥
तुव गर्दन बेग कबूल करो।
है तकसीर जु सेख भरो॥
तब सेख कहै कर जोरि तबै।
करिए मन भावतु है जु अबै॥२६७॥
तब बोलि हुरम्म कहै मुख तैं।
पहलैं तकसीर परी हम तैं॥
गरदन्न कबूल करी अबही।
पहलैँ हम तै तकसीर भई॥२६८॥
समझे पतिसाह तबै मन मैं।
अबला हठ नाहिं मिटै मन[1] मैं॥
इनको सब बेगम लोग कहैं।
मन चाहत सो हठता जु गहै॥२६९॥

दोहरा छंद

हुरम बचन सुनि साह तब, मन विचार तहँ कीन[2]।
बेगम जाति जु तीय की, इन मरबे मन दीन[3]॥२७०॥
जाहु सेख इत मति रहो, जहँ लगि मेरो राज।
जो राखै[4] ताको हनूँ, प्रगट सुसाज समाज॥२७१॥

---

१ तन। २ किन्न। ३ दिन्न। ४ रक्खै।

कट्टन गरद्दन जोग तू, कीनो[1] कुबिध[2] खराब।
को रक्खै या भूमि पर, राखि करै को ज्वाब ॥२७२॥

छप्पय छंद

यह महि मंडल जितो, आन मेरी सब मानै।
खूनी रक्खै कौन, कोउ ऐसा तू जानै॥
हम ते बलो बताय, ओट जाकी तू तक्कै।
बचै न काहू ठौर, एक बिन गए न मक्कै॥
कर जोरि सेख इम उच्चरै, बली एक साहिब गिनूँ।
निर्बीज धरा कबहूँ न है, मैं हमीर श्रवनन सुनूँ ॥२७३॥
तब सुसेख सिर नाय, रजा हजरति जो पाऊँ।
जौ न गिने पतिसाह, सर्न मैं ताकी जाऊँ॥
तुमहि न नाऊँ सीस, नहिंन फिरि दिल्लिय आऊँ।
जुद्ध जुरैं नहिं टरौं, हत्थ तुम कों जु दिखाऊँ॥
यह कहत सेख सल्लाम किय, तबहि चला चलचित्त हुव।
निज धाम आय अप अनुज सों, बिबर बिबर बातैं जु हुव ॥२७४॥

छंद पद्धरी

आए जु सेख घर तब सरोष।
जिय जान्यो अपनो सकल दोष॥
मिलिए[3] जुमीर गबरू सुधाय।
चल चित्त देखि तिहिँ पूछि जाय ॥२७५॥

---

१ किन्नो। २ कुवदि। ३ मिल्लेजु।

किहिँ हेतु आज चिंतत सुभाय।
किहिँ कियव बैर सो मुहिँ[1] बताय ॥
तिहिँ मारि करूँ ततकाल टूक[2]।
हिय क्रोध अग्नि सोँ[3] उठत हूक[4] ॥२७६॥
को[5] करै बैर बिन कर्म्म बीर।
मिट[6] गये अन्न जल को सु सीर ॥
तिहि[7] कौन रहै रक्खै सु कौन।
यह जानि मर्म तुम रहो मौन ॥२७७॥
यह सुनत मीर गबरू सुभाय।
सो[8] पर्‌यो धरनि मुर्च्छा सु खाय ॥
तदि कर्‌यो बांध बहु बिधि सु ताहि।
नहिँ करो सोच रहु निकट माहि॥२७८॥
तब कहै मीर गबरू सु ताहि।
सब तजो देश मक्के सु जाहि ॥
कै रहो राव हम्मीर पास।
तन रहै खुशी नासै जु त्रास ॥ २७९॥
तब चलिव सेख तजि माहि देश।
सब[9] सुभट संग लिन्ने[10] सुवेश ॥

---

१ मो। २ टुक्क। ३ यों। ४ ऊक इक्क। ५ महिमा साह ने कहा। ६ मिटि अन्न जहाँ जाके समीर। ७ तव। ८ सुइ पर्‌यो धरनि मुर्छा सुखाइ। ९ निज। १० लीन्हे।

सत पंच सैन गजराज पंच ।
रथ सत्थ लिए निज नारि संच ॥२८०॥
सब रखत साज निज संग लीन ।
दासी[1] जु दास सुंदर नवीन ॥
सजि साज बाज डेरे अनूप ।
लदि ऊँट किते सँग चलिय[2] जूप ॥२८१॥
चढ़ि[3] सेन सज्या निज संग बाम ।
बज्जिव निशान गज्जिव सु ताम ॥
मग चलत करत मृगया अनेक ।
मिलि चलिय[4] सकल बर बीर एक[5] ॥२८२॥
जिहिँ मिलै राव राजा सु जाय ।
पतिसाह बैर सुनि रहैं चाय ॥
चहु चक्क फिरयौ महिमा सुधीर ।
नहि[6] कह्यो रहन काहू सुपीर ॥२८३॥
द्वै[7] दीन सेख देखे सुभारि ।
बिन राव दसौं दिसि फिरिव हारि ॥
तब तक्कि[8] सेख हम्मीर राव ।
सोइ आइ सरन परसे जु पाव ॥२८४॥

---

१ सब ।दासि दास । २ चले । ३ सजि सेख चढ्यो । ४ चलै । ५ केक । ६ नन कह्यो । ७ द्वै, दोउ दीन दोय । ८ तके ।

दोहरा छंद

गढ़ बंका[1] बंको सुधर, बंका राव हमीर ।
लखि प्रतीत मन महँ[2] भइय, हर्षे महिमा मीर ॥ २८५ ॥

देखि जलाशय बिटप बहु, उतरि सु डेरा कीन[3] ।
हय गय बंधे तरुन तर, खान पान बिधि लीन[4] ॥ २८६ ॥

डेरा ड्योढ़ी कर खरे, करी बिछायति वेस ।
करि[5] मिसलति कौंसिल जुरी, सब भर सरस सुदेस॥ २८७ ॥

मंत्रो मंत्र सुपूछि[6] तब, इक चर लीन सु बोलि ।
जाहु राव के पास तुम, कहो बात सब खोलि[7] ॥ २८८ ॥

प्रथम सलाम कहो जु तुम, विरत[8] कहो सु विसेष ।
हुकम होय जो मिलन को, तो हाजिर ह्वै सेख ॥ २८९ ॥

इतने मैं जानी परै, पन ध्रम प्रीति प्रतीति ।
हर्ष सोक यहिँ गति लख्यो, तुम जानत सब रीति ॥ २९० ॥

तब सु दूत गय राव पहँ, करी खबर दरबान ।
बोलि हजूरि सु दूत को, पूछत कुसल सुजान ॥ २९१ ॥

सकल बात सुनि दूत मुख, हर्ष राव बहु कीन[9] ।
तबहि उलटि पठयो सु वह, सेख बुलाय सुलीन[10] ॥ २९२ ॥

---

१ बक्को । २ जिय में । ३ किन्न । ४ लिन्न । ५ करी कचहरी आय तब । ६ पुच्छि । ७ घुल्लि, खुल्लि । ८ वृत्त, वृत्तांत । ९ किन्नयं । १० लिन्नयं ।

नाराच छंद

चल्यो जु सेख राव पहँ बनाय साज कीनयं[1] ।
तुरंग पंच नाग एक साज साजि लीनयं[2] ॥
कमान दोय टंकनो सु देस मुल्लतान की ।
कृपान एक बेस देस पालकी सुजान की ॥२९३॥

लिये सु दोय बज्र लाल एक[3] मुक्त मालयं ।
कही जु एक दोय बाज स्वान दोय पालयं ॥
सवार एक आपही सबै पयाद चल्लियं ।
रहे तनक्क पौरि जाय फेरि अग्ग हल्लियं ॥२९४॥

सुबेतहार अग्ग[4] जाय राव को सुनाइयं ।
हमीर राव बेगि आय[5] रावतं खँदाइयं ॥
चले लिवाय सेख कौं जहाँ जु राव बट्ठियं ।
सभा समेत राव देखि सेख को सु उट्ठियं॥२९५॥

मिले उभै समाज सौं कुसल्ल छेम पुच्छियं ।
परस्सि पानि[6] पाव सेख हाथ जोरि सुच्छियं ॥
करी जु अग्ग सेख भेट बुल्लियो सु बाचयं ।
सरन्नि राव राखि[7] राखि मैं सरन्नि साचयं ॥२९६॥

फिरयो सु मैं सु दीन दोय खान जाति सब्बयं ।
जितेक राज रावताय छत्रि जाति सब्बयं ॥

---

१ किन्नयं । २ तुरंग पंच नाग इक्क सज्जि लिन्नयं । ३ इक्क । ४ अग्र । ५ आप । ६ हत्थ । ७ रक्खि रक्खि ।

दिशा दसोँ जितेक भूप और बीर बंक जे।
रहो कह्यो सु कौन हू रहूँ तहाँ सुधीर जे[1] ॥२९७॥
हँसे हमीर राव बात सेख की सुने तँही।
कहा अलावदीन, पातसाह, सोभनंतही ॥
रहो यहाँ अभै सदा हमीर राव यों कहै।
तजूँ जु तोहि प्राण साथि और बात योँ कहै ॥२९८॥

चौपाई छंद

राव हमीर नजर सब रक्खिय।
बचन सेख को यहि बिधि भक्खिय ॥
तन धन गढ़ घर ए सब जावैँ।
पै महिमा पतिसाह न पावैँ ॥२९९॥
कहै सेख प्रण समुझि सु किज्जिय[2]।
मेरी प्रथम अर्ज सुनि लिज्जिय[3] ॥
दसो दिशा मों मैं फिरि आयव।
जिते खान सुलतान सु गायव ॥३००॥
राजा रान राव जितने जग।
दीन होय देखे[4] सु अगम मग ॥
बाँध तेग साहस करि कोई[5]।
तजै लोभ जीवन को सोई ॥३०१॥

---

१ सुतंक जे। २ किज्जे। ३ लिज्जे। ४ दिक्खे। ५ कोइय।

यह जिय जानि वास मुहि दीजै[1] ।
सेख राखि[2] सरनै जस लीजै ॥
इतनी धरा सेस सिर होई ।
कहै साहि रक्खै नहिँ कोई ॥२८२॥

छप्पय छंद

बार बार क्यों कहै सेख उत्कर्ष बढ़ावै ।
एक बार जो कही बहुरि कछु और कहावै[3] ॥
प्रथम वंश चहुवान टेक गहि कबहु न छँडै ।
बहुरि राव हम्मीर हठ न छूटै तन खंडै ॥
थिर रहहु[4] राव इम उच्चरै न डरि न डरि अब सेख तुव ।
उग्गै न सूर जो तजहुँ[5] तोहि चलहिं[6] मेरु अरु भुम्मि ध्रुव ॥२०३॥
बकसि सेख को बाजि[7] साज कंचन के साजे ।
मुक्त माल सिरपेंच जटित हीरा[8] छबि छाजे ॥
सकल सथ्थ सिरपाव शाल दिन्नव अति[9] भारिय ।
पंच लक्ख को पटो दियो आदर भुवकारिय ॥
दिन्नी सुठौर सुंदर इकै तेहि देखत हिय हर्षियउ ।
उच्छाह सहित उठि शेष तब आनँद मंगल वर्षयउ ॥३०४॥

दोहरा छंद

महिमानी पठई नृपति, सबै सथ्थ के हेत ।
खान पान लायक जिते, मधु आमिष सु समेत ॥३०५॥

---

१ दिज्जिय । २ रक्खि । ३ कढावै । ४ होहु । ५ तजैं । ६ चलैं । ७ वाच । ८ हीरन । ९ असि ।

ज दिन शेख दिल्ली तजी, दूत सथ्थ दिय ताहि ।
को रक्खै कित जात यह, लखो जु तुम हूँ वाहि ॥३०६॥
राख्यो राव हमीर तब, महिमा साह जु पास ।
कहै राव सों दूत तब. मत रक्खो तुम पास ॥३०७॥
अलादीन सू औलिया, फिरत चहूँ दिसि आनि ।
निबल सबल के बाद सों, किन सुख पायो जानि ॥३०८॥

मुक्तादाम[1] छंद

कहै तब दूत सुनो नृप बात ।
बड़ो तुव वंश प्रतापि सुहात[2] ॥
तजो[3] रतनागर को सर हेत ।
रतन्न अमूल्य तजो रज हेत ॥३०९॥
कहै। गुन कौन रखै इहि सेख ।
जरत्त जु बाल गहो[4] सुविशेष ॥
अजान असी जु करै नहिँ राव ।
सुनो तुम नीति जु राज स्वभाव ॥३१०॥
तजो अब इक्क[5] कुटुंब बचाय ।
तजो गृह एक सुग्राम सहाय ॥
तजो पुर इक्क सुदेश बचाय ।
तजो सब आतम हेत सुभाय ॥३११॥
महा यह नीच अधम्मिय सेख ।
टर्यो नहिं स्वामि-तिया गुन देख ॥

---

१ मोतीदाम । २ सुतात । ३ तजो सरनागत । ४ गही । ५ एक ।

बढ़ै पतिसाह[1] दिलीपति बैर।
लख्यो नहिं आनन प्रात सुफेर ॥३१२॥
प्रलै जिहिं[2] रोष तजै धर देह।
हम्मीर सु राव सुनो रस भेव ॥
बढ़ै निति नेह तुमैं पतिसाह।
अमीरस मैं विष घोरत काह ॥३१३॥
परौ[3] फिर आप नहीं दुख आय।
तजो यह जानि प्रथम्म सुभाय ॥
जथा वह रावन जित्ति[4] त्रिलोक[5]।
सुरन्नर नाग रहैं तिहिं ओक[6] ॥३१४॥
करयो तिन बै जबै रघुनाथ।
मिट्यो गढ़ लंक सुबंकम पाथ[7] ॥
कहौ सर[8] कोन करै पतिसाह।
करै तब जंग बचो नहिं ताहि[9] ॥३१५॥

छप्पय छंद

कह हमीर सुनि दूत बचन निज असत न भाख्यौ।
मों बिन[10] और न कोय सेख को सरनै राख्यौ ॥
गहूँ खग्ग[11] सनमुक्ख दुहूँ अति गर्व सुद्ध दृढ़।
लहै मुक्ति मग सत्य किधौं रणथंभ महागढ़ ॥

---

१ पुनि साह। २ इह। ३ परै। ४ जीते। ५ तिलोक। ६ वोक। ७ माथ। ८ सिर। ९ आहि। १० मुझ बिन। ११ तेग।

कहियो निशंक पतिसाह सों सेख सरनि हम्मीर किय ।
सामान युद्ध जेते कछू सो अनंत दुग्गह जु लिय ॥३१६॥

दातार छंद

सुनि हमीर के बचन, दूत दिल्लिय दिसि आयव ।
करि सलाम कर जोरि, साह को सीस नवायव ॥
पूरब दच्छिन देश और पच्छिम दिशि आयव ।
सबै शेख फिरि थक्कि, कहूँ काहू न रखायव ॥
तब शेख आय रणथंभ गढ़, दीन बचन इम भक्खियो[1] ।
सुनि हमीर करुणा सहित, सेख बचन दै रक्खियो[2] ॥३१७॥

बहरम खाँ वजीर बोले

समद पार गय शेख, बार हजरति वह नाहीं ।
राव शेख क्यों रखै, रहत हजरत घर माहीं ॥
फिर न कहौ यह बचन, वृथा[3] कबहूँ[4] अनजानै ।
दूत साह के बचन, सुनै सत्कार सुमानै ॥
महरम्म खान इम उच्चरै, खबरदार नहिं बेखबरि ।
कहिए जु बात निज दृगन लखि, असी बात नहिं कहो फिरि ॥३१८॥

दोहरा छंद

महरम खाँ उज्जीर सौं, कहै बैन पतिसाहि ।
इक फरमान हमीर को, लिखि भेजहु अब ताहि ॥३१९॥

---

१ भाखियो । २ राखियो । ३ व्यर्थ । ४ कबहुन ।

छप्पय छंद

लिखि हजरति फरमान उलटि एलची पठाए।
हठ मति करो हमीर चोर मति रखौ पराए॥
हम दिल्ली के ईश राव तुमहूँ जु कहावो।
बढ़ै अलसि जिय माहिं बैर में कहा जु पाओ॥
माल मुलक चाहो जितो, कहै शाह बहु लिज्जिए[1]।
फरमान बाँचि[2] जिय राव तुम, चोर हमारो दिज्जिए[3]॥३२०॥

दोहरा छंद

बाँचि राव फुरमान तब, दिएउ सेस तब अंग।
बचन दिए मैं शेख को, करों शाह सौं जंग॥३२१॥
दियउ[4] उलटि फरमान तब, राव साहि कौ ज्वाब।
रक्ख्यो महिमा साहि मैं, तजूँ न तिहि मैं आब॥३२२॥
यह फरमान जु बाँचि कै, करिव साह तब क्रोध।
खिज्यो देखि पतिसाह कौं, कियो उजीर सुबोध॥३२३॥

छप्पय छंद

कित्तौ गढ़ रणथंभ राव जिस पहँ गर्बाए।
दसो देश बसि किए जोति करि पाँव लगाए॥
ईश कहै अब कौन युद्ध जो हम सों मंडै।
देत दुनी तैं कढ़ूढि गर्ब ताते क्यों मंडै॥
साहिब्ब बचन इम उच्चरै अली औलिया पीर गन।
महिमा साह जु रक्खि तुव अजहूँ समुझि हमीर मन॥३२४॥

---

१ लीजिए। २ वंचि। ३ दीजिए। ४ दिओ।

दोहरा छंद

दूजा हजरति का लिखा, बाँचि राव फरमान।
बार बार क्यों लिखत है, तजूँ न हठ की बान ॥३२५॥
पच्छिम सूरज उग्गवै, उलटि गंग बह नीर।
कहो दूत पतिसाह सों, हठ न तजै हम्मीर[1] ॥३२६॥

छप्पय छंद

दियो पद्म ऋषिराज करौं जब लग मैं सोइय।
जो गढ़ आयो निमत साह रक्खै नहिं कोइय ॥
अनहोनी नहि होय होय होनी है सोइय।
रजक मोत हरि हथ्थ डर सु मानव क्यों कोइय ॥
नहिं तजूँ शेख कौ प्रण करिव सरन धरम क्षत्रिय तनों।
मन है विचित्र महिमा तनो सत्य बचन मुख तैं भनों ॥३२७॥

चले दूत मुरझाय, दिल्लि दिसि कियो पयानों।
गढ़ रणथंभ हमीर साह कैसे कम जानों ॥
हयदल पयदल सेन सूरवर बीर सवायो।
हठी राव चहुँवान वंश यहि हठ चलि आयो ॥
यह बिधि सु तुमहूँ धर लखै हरे सकल तुम बार बर।
अब पतिसाह जु एक भुव कै तुम कै जु हमीर बर ॥३२८॥

सुनत दूत के बचन साहि जब मन मुसकाए।
कितो राज हम्मीर करै हठ मोहि बुलाए ॥

---

१ तौ हठ तजै हमीर।

कितेक गढ़ इक ठौर किते उमराव महाबल।
किते बाजि गजराज किते भट बंक महाबल॥
तुम कहो सकल समझाय मुहि किहिं हेतु इतै गर्बहिं बढ़ैं।
हम्मीर राव चहुवान कै कितो नृपनि दल सँग चढ़ै॥३२६॥
हजरति राव हमीर बार बहुतैं समझायव।
सुनि महिमा को नाम रोष करि राव रिसायव॥
करो जुद्ध तिर सुद्ध साह दल खंडि बिहंडौं।
धरों सीस हर कंठ सुजस तिहिं लोकहिं मंडौं॥
हम्मीर राव इम उच्चरै गही टेक[1] छाँड़ौं नहीं।
तन जाय रहै जिय सोच[2] नहिं लाज धरम खंडों नहीं॥३३०॥

चौपाई छंद

कहे साहि सुनु दूत सु बैनं।
कहो राव को पन भ्रम एनं॥
कितोक दल बल सूर समाजं।
कित इक गढ़ सामाँ धर राजं॥ ३३१॥
रहनी करनी प्रजा प्रतापं।
बानी[3] बिरद[4] दान धन आपं॥
नीति अनीति ग्राम गढ़ कैसा।
सहर[5] सरोबर बाट जु जैसा॥ ३३२॥
सत्तरि सहस तुरंगम जानों।
दोय लक्ख पयदल भरमानों॥

---

१ तेग। २ लोभ। ३ बाना। ४ बिर्द। ५ सहस रोष बाग जु जैसा।

सत्तपंच गजराज अमानों[1] ।
होहि कीच मद बहत सुदानों[2] ॥ ३३३ ॥
रनथंभौर ग्वालियर बंका ।
नरवल[3] औ चित्तौड़ सु तंका ॥
रहै जखीरा गढ़ के जेता ।
अनगिन[4] वस्तु न जानत तेता ॥ ३३४ ॥
तुरी सहस इकतीस सु सज्जै ।
अरु गजराज असी मद गज्जै ॥
सूर वीर दस सहस अमानो ।
इते राव रणधीर के जानों ॥ ३३५ ॥

दोहरा छंद

मेटि मसीत जु सकल तहँ, कीनै मंदिर देस ।
बंग निवाज न होय जहँ, श्रवन कथा हरि वेस ॥३३६॥
नहिं कुरान कलमा नहीं, मुसलमान नहिं बीर ।
चारि वरण आश्रम सुखी, देस हमीर सु धीर ॥३३७॥
अपनै[5] अपनै धर्म्म में, रहैं सबै नर नारि ।
राजनीति पन तेज जुत, करैं राव[6] सुख कारि ॥३३८॥
कर काहू कै होय नहिं, दुखी न कोऊ दीन ।
आश्रम किते नवीन[7] हैं, ऊँचे मंदिर बीन ॥३३९॥

---

१ मानैं । २ दानैं । ३ नलवर मनु चीतोड़ सुतंका । ४ अगणित । ५ अप्पन । ६ राज । ७ अनूप ।

पद्धरी छंद

रणथंभ दुर्ग बहु बिधि सु जानि।
तिहिं दरा चारि मग सुगम मानि॥
घाटी सु चारि अस्सी सु और।
है गै न चलै अति कठिन ठौर॥३४०॥
सरवर सु पंच जल अगम सोय।
बहु रंग कमल फुल्ले सु जोय॥
चहुँ ओर नीर को नहिन छेह।
परबत अनूप जल झरैं एह॥३४१॥
सो इहै अगम पहुँचै न खग्ग।
गढ़ चढ़ै कवन जहँ इक्क मग्ग॥
अरु भरे दोय भंडार अन्न।
दस लक्ख कोटि दस सहस मन्न॥३४२॥
दस लक्ख सूत सन धरे संचि।
द्विप दोय लक्ख धरि धातु खंचि॥
घृत सहस बीस मन भरे हौद।
दोय लक्ख पैद चहुँ गढ़न कौद॥३४३॥
बिन तौल नोन[1] पर्वत सु तच्छ।
दस सहस अमल आफू समच्छ॥
मृग मद कपूर केसरि सुगंध।
भरि रहे भौन सौंधे सुबंध॥३४४॥

---

1 लवण।

नहिँ तौल तेल लोहा प्रमान।
बारूद सुद्ध नव लच्छ जान॥
अरु पतो जानि सीसो सु सुद्ध।
नव लक्ख धरयो संचय समुद्ध॥३४५॥
अरु इतौ राव कै नित्त दान।
पच तोलि पंच मुहरै सुमानि॥
दस दोय धेनु तरुणी सु बच्छ।
सोवरन्न श्रृंग श्रृंगार सुच्छ॥३४६॥
यह अधिक जानि दीजे सु विप्र।
उग्गंत सूर दिज्जे सु छिप्र॥
जीमंत विप्र सब राज द्वार।
लंगर सु अनगिनित बटत सार॥३४७॥
बहु अंध पंगु अरु बधिर कोय।
सो करै[1] भोज नृप के सजोय॥
दस दोय अन्न मन परै औार।
खग सकल चुगै तहँ ठौर ठौर॥३४८॥
गणनाथ आदि सब लसैं देव।
नृप आप करत करि नमत सेव॥
शिव बसैं नंदि भैरव समेत।
भव भवा सबै परिकर समेत॥३४९॥

---

१ सुइ करि भोजन।

दृढ़ महा बंक गन्नेस गढ़्ढ ।
बिन मग्ग सक्कै पच्छो न चढ़्ढ ॥
बड़ तोप सतरि गढ़ पै अचल्ल ।
तब छुटत शोर पर्वत सुहल्ल ॥३५०॥
छुट्टंत गर्भ सुक्कंत नीर[1] ।
मन वज्रपात सुक्कत समीर ॥
आसा सु नाम रानी सु एक ।
पतिवृत्त धम्मे देवी सु टेक ॥३५१॥
रणथंभ नाथ सुत इक्क पूर ।
चंड तेज मनूँ ऊगंत सूर[2] ॥
रतनेस नाम जग है विख्यात ।
चित्तौड़ द्रुग्ग पालै सु तात ॥३५२॥
सँग रहै सुभट थट विकट संग[3] ।
को करै तिनहिं तैं रणहिं रंग ॥
तप तेज राव वृषभान जेम ।
पर दुःख कटन विक्रम सु तेम ॥३५३॥
देखंत रूप मनु कामदेव ।
सुइ काछ बाछ निकलंक मेव ॥
अरु खेत जुरे नहिं देत पिट्ठि ।
अरि लखत देखि नहिं परत दिट्ठि ॥३५४॥

---

१ सूंकत नीर । २ चढ़ि तेज मनहुँ उग्गंत सूर । ३ विकट थट्ट रहें सुभट संग ।

बहु बाग चहूँ दिसि सघन हेरि।
गंभीर गहर उपवन सु भेरि॥
बहु अंब[1] वृच्छ फल झुकत भार।
दाड़िम समूह निंबू अपार॥३५५॥
बहु सेवराज जामुन समूह।
नारंग रंग महवा समूह॥
खिरनी सकेलि नारेल[2] वृंद।
खीरा कि चिरूंजी मधुर कंद[3]॥३५६॥
कटहल कदंब बड़हल अनेक।
महुवा अनंत कदलि विशोक॥
तहँ मोलसिरी सोहैं गँभीर।
माघी सफेत सोहंत धीर[4]॥३५७॥
फुलवारि गुंज अति भ्रमर होत[5]।
प्रफुलित[6] गुलाब चंपा उदोत॥
कहुँ[7] रही केतिकी वृंद फूलि।
अहि भ्रमर गंध सहि रहे फूलि॥३५८॥
कहुँ रहे केवरा जुही जाय।
संदुप्प[8] और संभो सु आय॥

---

१ आम। २ नरियल्ल। ३ कंज। ४ मधि किते सरयूं सोहंत कीर। ५ फुलवादि भौंर गुंजार होत। ६ फुल्लित। ७ बहु। ८ संदूप।

आचीन नगगस औ असोक।
पाटल[1] सचमोलिय बोलि कोक[2] ॥३५९॥
एला लबंग अंगूर बेलि।
माधुज्ज लता माधुरी झेलि ॥
तरु ताल तमाल रु ताल और।
ता मध्य कमल अरु कुमुद भौर ॥३६०॥
चहुँ ओर सघन पर्वत सुगंध।
जल जंत्र छूटै उच्चेस बंध ॥
पिक मोर हंस चकवा विहंग।
सुक चाक कोकिल रमत संग ॥३६१॥
चहुँ ओर बाग बारी अनूप।
तिहि मध्य दुर्ग रणथंभ भूप ॥३६२॥

यह दूत के बचन सुनि दरबार कियां।

छप्पय छंद

क्या हमीर मगरूर पलक मैं पाय लगाऊँ।
खूनी महिमा साह उसे गहि दिल्लिय लाऊँ ॥
जीति राव हम्मीर तोरि गढ़ धूरि मिलाऊँ।
इती जो न अब करूँ[3] तौ न पतसाह[4] कहाऊँ ॥

---

१ पाडल। २ सतवर्ग और श्रीखंड कुंद, किंसुक सुहालती सेवितिहि मंद। मधुवन वसंत सिंगार हार, मौलिया मदन सर फुले—र। ३ हरौं। ४ मैं साह।

केतेक राज रणथंभ को इतो कियो अभिमान तिहिं।
कोपि साह भेजे[२] जबै दसो देस फर्मान जिहिं ॥३६३॥
सुने दूत के बचन शाह जिय शंका आइय।
चढ़ो कोपि बिन समुझि वहां कैसी बनि जाइय॥
हार[३] जीति रव हाथि[४] आप संमत जग होई।
तातैं मंत्री मित्र मंत्र[५] द्रढ़ किज्जिय सोई॥
यह जानि साह दीबान किय खान बहत्तरि इक्क[६] हुव।
यह हठ हमीर को सुन्यों तब रक्खे शेख सरन्न भुव॥ ३६४॥
आम खास उमराव सबै पतिसाह बुलाए।
राजा राणा राव खान सुलतान सु आए॥
हठ हमीर मुझि करिव सेख सरनै निज रक्ख्यो।
दियो दूत को ज्वाब बचन बहु अनबन भक्ख्यो॥
सब तंत मंत जानों सु तुम देश काल बुधि इष्ट धुव।
जिहिं जाहु[७] जाहु जस बुद्धि ह्वै कहो[८] नीति उत्तम सु भुव॥३६५॥
कहैं सकल उमराव ईस तुम सम नहिं कोई।
तेज प्रताप रु बुद्धि और दूजो नहिं कोई[९]॥
फिर फिर जो फरमान राव को कहा जु लिक्खिय।
जो उपजै यहि बार सोइ प्रभु आपनु अक्खिय[१०]॥
चढ़िए सिकार गीदड़ तड़ी तऊ सिंह के बाँधि[११] सर।
फिरि लड़ो मरो[१२] संदेह नहिं तंत मंत यह ही सुबर ॥३६६॥

---

१ राव। २ पठए। ३ हारजित्ति। ४ हत्थ। ५ पूँछि। ६ एक। ७ जाहि जाहि। ८ कहा। ९ साहि तुम जानत साई। १० करिय प्रभु अप्पन अख्यिय। ११ बंधि। १२ मिलौ।

महरम खाँ उज्जीर साह सों ऐसैं भाषै।
चहुवानन की बात सबै अगली[1] मुख भाषै[2] ॥
पहिले हसन हुसैन सयद[3] चहुवान सुपेले[4]।
सात बेर पृथिराज गहे गवरी गहि मेले[5] ॥
बीसल दे अरु पित्थ ये जउ पीर करे अजमेर हनि[6]।
महरम खाँ इम उच्चरै असो वंश चहुवान गनि[7] ॥ ३६७ ॥

गीदड़ सिंह शिकार, साह[8] एको मति जानो।
रणतभँवर दिस फलि[9], आप मति करो पयानें ॥
वहाँ राव हम्मीर, और रणधीर अमानें।
अरु सामंत अनेक, अधिक तैं अधिक बखानों ॥
बहु दुग्ग[10] बंक रणथंभ गढ़[11], यह बिचारि जिय लिज्जिए।
तुम अलावदी पीर अति, आप मुहिम्म न किज्जिए ॥३६८॥

दोहरा छंद

दुग्ग बंक रणथंभ बड़, तुम अलावदी पीर।
दुहूँ करामाति सम गनों, आप और हम्मीर ॥ ३६९ ॥

छप्पय छंद

कालबूत का सेख, एक हजरति बनवावो।
ताहि मारि तजि रोष, कहा जिय क्रोध बढ़ावो ॥

---

१ अग्गली। २ अक्खै। ३ सैद। ४ पिल्लिय। ५ साह गोरी गह मिल्लिय। ६ वीसल दे अरु पित्थ बड़ पीर करिय अजमेर हनि। ७ पन। ८ सोई यह इक न जाना। ९ भुल्लि। १० दुर्ग। ११ बड़।

लगै प्राण धन देउ, तबै बाजी कोउ पावै।
तजै खेत जस जाय, बहुरि कछु हाथ न आवै॥
खूनी सरन हमीर के, रह्यो दीन जानै दोऊ।
किज्जे मुहिम्म नहिं राव पै, या में तो सुख है सोऊ॥३७०॥
मिश्र देश खंधार, खरे गज्जिनि दल आये।
अरु काबिल खुरसान, कोपि पतिसाह बुलाये॥
रूम स्याम कसमीर, और मुलतान सु सज्जे।
ईराँ तूराँ कटक, बलख आरब धर गज्जे[1]॥
सब[2] देस रुहंग फिरंग के, झष्षड़ के सज्जे सुबल।
अल्लावदीन पतिसाह के, चढ़े संग टिड्डी सु दल।३७१॥
चढ़े हिंद के देस, प्रथम सोरठ गिरनारी।
दच्छिण[3] पूरब देस, लए दल बद्दल[4] भारी॥
अरु पहार के भूप, और पच्छिम के जानों।
दसों दिसा के बीर, कहा कोउ नाम बखानों॥
ग्यारा सै अठतीस[5] थे, चैत्र मास द्वितिया प्रगट।
चढ्ढे सुसाह अल्लावदी, करि हमीर पर कटक भट॥३७२॥

भुजंगप्रयात छंद

चढ़े साहि कोपे[6] सु बज्जे निसानं।
चढ़े मीर गंभीर[7] सथ्थं सु जानं॥

---

१ ईरान त्वैर और बलख ठठा भष्ष रस गज्जे। कटक बलक आरब धर गज्जे। २ सब देस रुहेलरु फिरंगे झगड़ा के सज्जै सुबल। ३ दक्खिन। ४ बल। ५ अठसिए। ६ कोठ। ७ गम्भीर।

उड़ी रेणु आकाश सुज्झै[1] न भानं।
धरा मेरु डुल्लै सु भुल्लै दिशानं॥ ३७३॥
सहै सेस भारं न[2] पारं न पावै।
डगै कोल दिग्गज अग्गै सुध्यावै॥
मनों छाड़ि[3] वेला समुद्दं उमंडे।
किए[4] है दलं पयदलं रथ्थ तंडे॥ ३७४॥
चढ़े सत्त लक्खं सु हिंदू सयन्नं।
सबै बीस लक्खं मलेच्छं[5] अयन्नं॥
तहाँ डाक[6] एकं सहस्सं दुपंचं।
चले वेलदारे लखं च्यारि संचं॥ ३७५॥
चले एक[7] लक्खं सु अग्गं[8] सु सोलं।
अलीखान हिम्मत्ति दोऊ हरोलं॥
चले बानियाँ संग व्यापार भारी।
सु तो दोय लक्खं गिनै संग सारी॥ ३७६॥
चली लक्ख च्यारं सु संगं भिठारी।
पकावैं सुनानं सबै काम बारी॥
खरं गोखरं यो चले दोय लक्खं।
फिरैं चारि लक्खं गसत्तो[9] सु रक्खं॥ ३७७॥
दुआ गीर इक्कं सु लक्खं सु चल्ले।
सु तो लंगरं सो सदा खान मिल्ले॥

---

१ सूझै। २ सम्हार न पावे। ३ छंडि। ४ कियं। ५ मेच्छं। ६ तहाँपै कहाकं। ७ इक। ८ अग्रं। ९ गसती।

अरब्बी लखं दोइ चल्ले सु संगं।
रहै तोपखाने सदा जंग जंगं ॥ ३७८ ॥
भरे ऊँट बारूद डेरा सुभारी।
सु तो तीन लक्खं सजो संग सारी ॥
चले सहस पंचं मतंगं सु गज्जं।
मनो पावसं मेघमाला सु रज्जं ॥ ३७९ ॥
लसै बैरखं सो मनों बिज्ज[1] भारी।
वरै दान वर्षा मनों भुम्मि[2] कारी ॥
लसै उज्ज्वलं दंत वग पंक्ति मानों।
इती साह की सेन सज्जी सुजानों ॥ ३८० ॥
गर्जंत निसानं सु सज्जंत भानों।
मनूँ पावसं मेघ गज्जैं सु मानों[3] ॥
सबै सेन सज्जी चढ्यो साहि कोपं।
सबै पंच[4] चालीस लक्खं सु ओपं ॥ ३८१ ॥
तहाँ तीस[5] हज्जार निस्सान[6] बज्जैं।
सु तो घोर सोरं सुनैं मेघ लज्जैं ॥
सताईस लक्खं महाबीर बंके।
टरै नाहिँ जंगं भए ताम हंके ॥ ३८२ ॥
परै[7] जोजनं अट्ठ[8] औ दोय फौजं।
कटे बंक बन्नं हटे नाहिं रोजं ॥

---

१ बीज। २ भूमि। ३ भानों। ४ पाँच। ५ तीन।
६ नीसान। ७ परी। ८ आठ।

चढ़ं उब्बटं बाट थट्टे[1] सु चल्ले ।
मनो सागरं छंडि बेला उगल्ले ॥ ३८३ ॥
जले सुक्कियं[2] नीर नाना सु थानं ।
बहैं औघटं घाट दुट्टंत[3] मानं ॥
कियो कूच कूचं[4] चले मीर धीरं ।
परयो जोर हम्मीर के देस तीरं ॥ ३८४ ॥
भजे भुम्मियाँ भुम्मि चल्लं अपारं ।
गए पर्वतं[5] बंक मैवास भारं ॥
सबै राव हम्मीर के देस माहीं ।
भए बीर संधीर जुद्धं समाहीं ॥ ३८५ ॥
तिही[6] बिच्च मलहारणो इक्क गढ्ढं ।
लड़े राव के रावतं जोर दढ्ढं ॥
दिना तीन लौं सो कियो जुद्ध भारी ।
फते[7] पातसा की भई बैनकारी[8] ॥ ३८६ ॥
चले अग्ग[9] साहं सु सेना हकारी ।
सुनी राव हम्मीर कुप्पे[10] सु भारी ॥
किए रक्त नैनं सु भृकुटी करूरं ।
लख्यो रावतं जोर उट्ठे जरूरं ॥ ३८७ ॥

---

१ थाटे । २ साखियं । ३ टूटंत । ४ कुच्च कुच्चं ।
५ पव्वंत, पव्वंय । ६ तही विच्चि । ७ भते । ८ बनकारी ।
९ अग्र । १० कोपे ।

परी पक्खरं बाजि राजं सु सज्जे[1] ।
　　बजे नद्द निस्सान[2] आकाश लज्जे[3] ॥
तबै राव हम्मीर को सीस नाए ।
　　बिना आयुसं साह पै बीर धाए ॥ ३८८ ॥
जुरे आय जुद्धं न दीजो बनासं ।
　　चढ़े लक्ख चालीस औ पाँच तासं ॥
इतैं राव हम्मीर के पंच[4] सूरं ।
　　अभयसिंह पम्मार रट्ठौर भूरं ॥ ३८९ ॥
हरीसिंह बघ्घेल कूरम्म भीरं ।
　　चहूवान सद्दूल[5] अजमत्त सीमं ॥
त्रिभागै करी सेन बागैं उठाई ।
　　मिले बीर धीरं अमीरं हटाई ॥ ३९० ॥

दोहरा छंद

पंच सूर हम्मीर के, बीस सहस असवार[6] ।
उत सब दल पतिसाह को, बज्यो परस्पर सार ॥ ३९१ ॥
नदी बना सज उप्परै, रत्ति[7] बसिय पतिसाह ।
प्रात कुच्च[8] नहिं कर सके, आय जुटे नरनाह ॥ ३९२ ॥

पद्धरी छंद

चढ़ि चले[9] साह हरबल सभीर ।
　　तिहिं जुटे राव कूरम सबीर[10] ॥

---

१ साजे । २ नीसाण । ३ लाजे । ४ पांच । ५ साद्दूल । ६ अश्वार ।
७ रात । ८ कूच । ९ चलिय, चल्यव । १० तहँ जुट्टि राव कूरंभ बीर ।

बग्घेल हरीसिंह अनिय वंधि।
चंदेल पयादे भिरिव संधि ॥ ३९३ ॥
बिच गोल साह को जितो सुद्ध।
त्रिन सूर राव के करि[1] न जुद्ध ॥
यहि भाँति पंच रावत अभंग।
पतिसाह सेन सों जुटे जंग ॥ ३९४ ॥
कम्मान श्रवन लगि करि कसीस।
मनु प्रगट पथ्थ भारथ्थ सीस ॥
सर बरसत पावस मनों नीर।
बहु बेधि कवच धर परत धीर ॥ ३९५ ॥
लगि सेल अंग नहि पार होत।
ससि कोरि घटा मैं करि उदोत ॥
किरवान बहैं करि करित्र क्रोध।
धर परत सीस धर उठत[2] जोध ॥ ३९६ ॥
लगि होत कटारिय अंग पार।
प्रासाद उच्च के खुले द्वार ॥
बहु खंजर पंजर करत पार[3]।
ऊँची जु उठो सु तो रुहिर[4] धार ॥ ३९७ ॥
मनु पर्वत तैं गेरू पनार।
बहि[5] चली अंग तैं सोन[6] धार ॥

---

१ करे। २ पुठत। ३ फार। ४ रुधिर। ५ बहु। ६ रुधिर।

बहु घायल घुम्मत बहुत घाव।
मनु केसिव किंसुक तरु सुहाव ॥ ३९८ ॥
चल परी साह दल मैं अपार।
हा हंत सद्द[1] भो दल मँझार ॥ ३९९ ॥

दोहरा छंद

भगिय[2] सेन पतिसाह की, लुटी जु रिद्धि अपार।
तब महरम खाँ साह सों, अर्ज करी तिहिँ बार ॥४००॥
हजरति देश हमीर को, निपट अटपटो जानि।
भिल्ल कोल तस्कर सबै, और किरात सुमानि ॥४०१॥
सजग रहौ निसि द्यौस सब, गाफलि रहो न मूर।
हनिय सेन सब अप्पनिय[3], तीस हजार सपूर ॥४०२॥
घायल को लेखो नहीं, हथ्थिय[4] परे सु बीस।
परे बाजि सब ड्यौढ़[5] सत, सुनि जिय अचरिज दीस॥४०३॥
परे राव के बीर दस, घायल पंच पचीस।
अभय[6] सिंह पम्मार कै, भयो घाव दस सीस ॥४०४॥
जाय जुहारे राव कों, कही चमू की बात।
तब हमीर सब तैं कही, बाहर लरो न तात ॥४०५॥

छप्पय छंद

तब सु साह करि कुच्च[7], चले[8] रणथंभहि आए।
सकल सु संकित हियें[9], भीर उमराव सुभाए ॥

---

१ सब्द। २ भगी। ३ आपनी। ४ हाथी। ५ डेढ़ सौ। ६ अभयसिंह परमार इक। ७ कुंच। ८ दुग्ग। ९ हीय।

जल थल पाधरि सैन ऐन[1] चहुँ ओर सु दिक्खिव।
चढि अगार इक उच्च[2] राव बहु भाँति न लक्खिव॥
चहुवान राव हड़ हड़[3] हस्यो[4] हेरि सैन इम उच्चरयो[5]।
पतसाह किधौं सोहा जु गर मानो एक टांडो परयो[6] ॥४०६॥

दोहरा छंद

फिरि पतिसाह हमीर को, लिखि पठए[7] फरमान।
अजहूँ हिंदू समुझि तुव, मिलि तजि सब अभिमान॥४०७॥

छप्पय छंद

मैं मक्के[8] को पीर दिली पतिसाह कहाऊँ।
हिंदू तुरक दुराह[9] सबै इक सार चलाऊँ॥
बीर चारि अरु पीर रहै मुझ पर चौरासी।
महिमा साहि न रक्खि राव मति करै जु हाँसी॥
तुम समुझि सोच[10] जिय अप्पनै[11] कहा तोहि फल ऊपजै।
परचंड लाभ उट्ठै जु सिर इक[12] सेख को नहिं तजै॥४०८॥
फिर हमीर फरमान साहि को उलटि पठायो।
हजरति छत्री धर्म्म सुन्यो नहिं श्रवनन गायो॥
तुम मक्के के पीर सूर सुरलोक कहाऊँ।
तुम सरभर नहिं हसम साहि पल मैं[13] जु नसाऊँ॥

---

१ एन। २ ऊँच। ३ हर, हर। ४ हसिय। ५ उच्चरिव। ६ परिव। ७ भेजिय। ८ मक्का का। ९ दोउ राह। १० देखि। ११ आपनै। १२ एक। १३ मांझ।

नहिं तजौं टेक छंडूँ[१] न पन यह विचार निहचै[२] धरयो[३] ।
छिन भंग अंग लालच कहा सुजस खोय जीवन करयो[४] ॥४०९॥

दोहरा छंद

जैत छाडि जोगी कहा, सत छंडै[५] रजपूत ।
सेख न सोंपौं साह को, जब लग सिर साबूत ॥४१०॥

छप्पय छंद

हजरति नई न करूँ करूँ जैसी[६] चलि आई ।
मुसलमान चहुवान सदा तैसी[७] बनि आई ॥
ख्वाजै मीराँ पीर खेत अजमेरि खिसाए ।
असी सहस इक लक्ख बहुरि मक्का न दिखाए ॥
बीसल दे अजमेर गढ़ सो नगरा साको कियव ।
नन बरिय सुंदरी कँवरि सो साह बहुत[८] लालच दियव ॥४११॥
प्रथीराज बर सात साहि गवरी गहि छंड्यौ ।
कर चूरी पहिराय[९] दंड करि कछुव न मंड्यौ ॥
ता पिच्छै गढ़ दिली साहि गौरी चढ़ि[१०] आयव[११] ।
रेण कुमार अपार जुद्ध करि सुर पुर धायव[१२] ॥
चहुवान वंश अवतंस जो खग्ग[१३] त्यागि नाहिन मुरयो[१४] ।
छंडूँ[१५] न टेक यह विरद मम सेख रक्खि[१६] जंगहि करयो ॥४१२॥

---

१ त्यागूँ । २ निश्चय । ३ धरिव । ४ करिव । ५ छांड़ै । ६ ऐसी । ७ तैसे । ८ बहु । ९ पहिराव । १० चलि । ११ आए । १२ धाए । १३ खाग । १४ मुरयव । १५ छाडू । १६ राखि ।

तजै सेस जो भुम्मि मेरु चल्लै धर उप्पर।
उलटि गंग बह नीर सूर उगै[1] पच्छिम भर॥
ध्रुव चल्लै आकास समद मर्जाद सुछंडै।
सतीसंग पति कढै बहुरि घर आयसु[2] मंडै॥
थिर रह्यो न यह संसार कोइ सुनो साहि साखी सु ध्रुव।
दसकंध धरणि अज्जुन जिसा स्वप्नहि[3] मम दिक्खंत[4] भुव॥४१३॥

दोहरा छंद

कलि मैं अमर जु कोइ[5] नहिँ, हँसम देखि नहिं भूल।
तुम से किते अलावदी, या धरती[6] पर धूलि[7]॥४१४॥
अपने को सूर न गिनै, कायर गिनै न और।
अपनी कीरत आप[8] मुख, यह कहबो नहिं जोर॥४१५॥
लिखे लेख करतार के, हजरति मेट न कोय।
को जानै रणथंभ गढ़, अब यह कैसो होय॥४१६॥

चौपाई छंद

लिखे हमीर साहि सब बंचे।
करि मन कोप जंग को नंचे॥
तीन सहस नीसान सु बज्जे।
धर अंबर मग सोर सु गज्जे॥ ४१७॥
रणतभँवर चहुँ ओर सु घेरिव।
दल न समात पुहमि सब हेरिव॥

---

१ उग्गहि। २ आपुस। ३ सुपन। ४ दीखंत। ५ को।
६ धरनी। ७ धूरि। ८ अप्प।

किन्न[1] निरोध क्रोध करि बुल्लिव।
देखो कुबुधि हमीर सु भुल्लिव ॥ ४१८ ॥
जब हमीर हर मंदिर आए।
बहु बिधि पूजि सु बचन सुनाए ॥
धूप दीप आरती उतारी।
शंकर की अस्तुति उच्चारी ॥ ४१९ ॥

नाराच छंद

नमामि ईश शंकरं, जटी पिनाकयं हरं।
शिवं त्रिशूलपाणियं, विभुं प्रभुं सुजानियं ॥ ४२० ॥
त्रिनैन अग्गि[2] भालयं, गलै[3] सु मुंडमालयं।
भवानि[4] बाम भागयं, ललाट चंद्र लागयं ॥ ४२१ ॥
धरै[5] सु सीस गंगयं, कपूर गौर अंगयं।
भुवंग[6] संग फुंकरैं, सु नीलकंठ हुँकरैं ॥ ४२२ ॥
गणं गणेस सांबुयं, कि बीरभद्र जांबुयं।
प्रसीद नाथ बेगयं, करो कृपा सु मे जयं ॥ ४२३ ॥
सहाय नाथ किज्जिए, अभय सुदान दिज्जिए।
अलावदीन आइयं, मलेच्छ[7] संग ल्याइयं॥ ४२४ ॥
सुलक्ख बीस सातयं, चढ़े सु कुप्पि[8] गातयं।
प्रताप तेज आपके, मिटे कुकर्म्म पाप के ॥ ४२५ ॥
सरन्न शेख आययं, करो सहाय पापयं।

---

१ कीन। २ अग्नि। ३ गरै। ४ भवा सुभाव भागयं। ५ ढरैं। ६ भवंग। ७ मलेच्छ वंश भाइयं। ८ कोपि।

उमा सु नाथ नाथयं, गहो सुमोर हाथयं।
छुटंत लाज गढ्ढयं, सरन्नपन्न द्रढ्ढयं ॥ ४२६ ॥

दोहरा छंद

शिव स्वरूप उर धारि कैं, मूँदि[1] नयन धरि ध्यान।
यह अस्तुति नृप की सुनी, भय प्रसन्न बरदान ॥ ४२७ ॥
कहै संभु हम्मीर सुन, कीरति जुग जुग तोर।
चौदह वर्ष जु साहि सौं, लरत विघ्न नहि श्रोर ॥ ४२८ ॥
बारै अरु[2] द्वै बरष परि, सुदि असाढ़ सुनि सोइ।
एकादसी जु पुष्य कौ, साकौ पूरण होइ ॥ ४२९ ॥
यह साको अरु जस अमर, फबै तोहि कलि माँहि।
छत्रो को जुग जुग धरम, यह समान कछु नाहिं ॥ ४३० ॥
हरष सहित[3] हम्मीर तब ईश चरण दिय सीस।
तब मंदिर तैं निकसि कै, करी जुद्ध कौं रीस ॥ ४३१ ॥
शंकर कह्यौ हमीर सों, सुनहु राव धुव साषि।
सहस सूर तेरे जहाँ, परें मलेच्छ सु लाष ॥ ४३२ ॥

चौपाई छंद

राव हमीर दिवान कराए।
मंत्री मित्र बंधु सब आए॥
सूर वीर रावत भट[4] वंके।
स्वामि धर्म्म तन मन तिन हंके ॥ ४३३ ॥

---

१ मुदि। २ सै। ३ सहीत, सहित्त। ४ भड़।

काछ बाछ दृढ़ बज्र सरीरं।
माया मोह न लोभ अधीरं[1] ॥
अमृत बचन सबन तैं भष्षे[2]।
जाचत आपुन प्रान न रष्षे[3] ॥ ४३४ ॥
नाना[4] बिरद बंदि बिरदावै।
लक्ख लक्ख के पटा जु पावै ॥
काको बीर राव रणधीरह।
करयौ जुहारे राव हमीरह ॥ ४३५ ॥
आयस होय करों मैं सोई।
देखो राव हाथ[5] मम जोई ॥
काकै कन्ह करी जस आगै।
कनवज कमध्वज सों रँग पागै[6] ॥ ४३६ ॥
कहै हमीर धीर सुनि बानी।
तुम जु कहो सो मोहि न छानी ॥
अब गढ कोट हसम पुर जेते।
तुम रच्छक हम जानत तेते ॥ ४३७ ॥

दोहरा छंद

मैं पहलै पतिसाह सों, करी बात[7] अब टेक।
सो अब चौरै[8] साहि सो, करो जंग अब एक ॥ ४३८ ॥

---

१ अभीरं। २ भाषे। ३ राषे। ४ बाना। ५ हत्थ। ६ सिर पागै। ७ बत्त। ८ चौरह।

त्रोटक छंद

चढ़िए करि कोप हमीर मनं।
करि दिढ्ढ सगढ्ढ सम्हारि पनं॥
बहु तोप सुसिद्ध सँवारि[1] धरी।
बुरजैं बुरजैं धर धूम परी॥ ४३९॥
बहु कंगुर कंगुर बीर अरे।
सब द्वारन द्वारन धीर[2] परे॥
सब ठौरन ठौरन राखि[3] भरं।
चढ़िए गजपै चहुवान नरं॥ ४४०॥
बहु बीर हमीर सु संग चढ़े।
गजराजन उप्पर दूंद बढ़े॥
करि डंबर अंबर सीस लगे।
मनु सोवत धीर सबीर जगे[4]॥ ४४१॥
बहु चंचल बाजि करत्त खुरी।
तिन उप्पर पष्षर सोंज परी॥
नर जान जवान लसैं दल मैं।
रन मैं उनमत्त लसैं बल मैं[5]॥ ४४२॥
बहु दुंदुभि बज्जत[6] घोर घनं।
निकसे तब राव करन्न रनं॥

---

१ सँभार। २ बीर धरे। ३ रक्खि। ४ गजे। ५ नर धीर मनां दरसैं बल में। ६ बाजत।

बहु बारन बारन बीर कढ़े।
गज बाजि सु सिंदन जान चढ़े॥ ४४३॥
लखि साह सनम्मुख कोप कियं।
रणथंभ चहूँ दिसि घेरि लियं॥
मिलि राव हमीर सु साहि दलं।
बिफरे बर बीर करंत हलं॥ ४४४॥
सर छुट्टत फुट्टत पार गजं।
सु मनो अहि पच्छय मध्य रजं॥
तरवार बहैं कर पानि बलं।
धर मध्य धरैं धर हक्क[1] खलं॥ ४४५॥
मुख अग्ग[2] बढ़ै रणधीर लरैं।
तिनसों पतिसाह के बीर अरैं॥
अजमंत महुम्मद इक्क अली।
तिन संग असीसु सहस्स चली॥ ४४६॥
तिहिं द्वंद अमंद बिलंद कियो।
रणधीर महा रण झेलि लियो॥
करि कोप तबै रणधीर मनं।
बर बैन कहै पन धारि घनं॥ ४४७॥
महिमंद[3] अली मुख आय जुरयो।
दुहुँ बोर तहाँ तब जुद्ध करयो॥

---

१ हांक। २ अग्र। ३ महमद।

अजमंत कमान लई कर मैं।
रणधीर कै तीर कढ्यौ उर मैं ॥ ४४८ ॥
रणधीर सुकोपि कै साँगि लई।
अजमंत कै फूटि कै[1] पार गई ॥
परियो अजमंत सु खेत जबै।
महमंद अली फिरि आय[2] तबै ॥ ४४९ ॥
रणधीर सु कोपि के बैन कहै।
कर देखि अबै मति भुल्लि[3] रहै ॥
किरवान सु धीर के अंग दई।
कटि टोप कछू सिर माँझ[4] भई ॥ ४५० ॥
तब कोप कियो रणधीर मनं।
किरवान दई महमंद तनं ॥
परियो महमंद अमंद बली।
तब साहि कि सैन सबै जु हली ॥ ४५१ ॥
लुथि[5] लुत्थिय परै बहु बीर अरै।
बहु खंजर पंजर पार करै ॥
धर सीस परै करि रीस मनं।
कर पाँव कटै बहु कीन पनं ॥ ४५२ ॥
यहि भाँति भिरे चहुवान बली।
मुरि साह की सेनि सु भग्गि चली[6] ॥

---

१ रु। २ आयें। ३ भूलि। ४ माँहि। ५ जुथि। ६ हली।

बलखी जु परे जु हजार असी ।
लखि[1] कालिय अट्ट सु हास हँसी ॥ ४५३ ॥
चहुवान परे इक जो सहसं ।
सुरलोक सबै बर बीर बसं ॥ ४५४ ॥

दोहरा छंद

असी सहस[2] बलखी परे, महमद अजमत खान ।
तहाँ राव रणधीर के, परे सहस इक ज्वान ॥ ४५५ ॥
भजी[3] फौज सब[4] साह की, परे मीर दोइ बीर ।
करे याद पतिसाह तब, गज्जनि गढ़ के पीर ॥ ४५६ ॥

चौपाई छंद

भज्जिय[5] फौज साह की जबही ।
फिरो फिरो बानी कह सबही ॥
तहाँ साह करि कोप सु बुल्लिव[6] ।
समर भुम्मि अब छंडि सुचल्लिव ॥ ४५७ ॥
सरवसु[7] खाय भोग करि नाना ।
अबै परम प्रिय लागत[8] प्राना ॥
समर विमुख तैं जानब जोई ।
हनूँ आप कर तजों न सोई ॥ ४५८ ॥
सुने साह के कोपि[9] सु बैनं ।
फिरी सैन इम मन्त्र सु एनं[10] ॥

---

१ ललि । २ हजार । ३ भगी । ४ जब । ५ भागी । ६ बुल्लिय । ७ सर्बस्व । ८ लग्गत । ९ कोप । १० फिरी सैन इक मत्त सु एनं ।

बखतर पक्खर टोप सु सज्जिय।
जुरे जंग बहु मीर सु गज्जिय॥ ४५९॥

दोहरा छंद

बाँदित[1] खाँ पतिस्याह सों, करी सलाम सु आय।
हजरत देखहु[2] हाथ[3] मम, कैसी करूँ[4] बनाय॥ ४६०॥

पद्धरी छंद

करि[5] कोप बादित खाँ जुरे[6] जंग।
मनो प्रलै पावक उठे अंग॥
गुंजत निसान फहरात धुज्ज।
जुटि जिरह टोप तन नैन सज्ज॥ ४६१॥
किए हुक्म साह तन मैं रिसाइ।
किन्हों सु जंग फिर बीर आइ॥
छूटंत तोप मनु बज्रपात।
जल सुक्कि धरा छुटि गर्भ जात॥ ४६२॥
बहु बान चलत[7] दोउ ओर घोर।
अररात[8] अमित मच्यो सु सोर॥
भए अंध धुंध सुज्झै न हत्थ।
बीर चहुवान तहँ करि अकथ्थ॥ ४६३॥

---

१ वदितषां। २ पिक्खहु। ३ हथ्य। ४ करो। ५ करि कोप जुरे बादित्य जंग। ६ जुरंयो, जुरिग, जुरिव। ७ छुट्टि। ८ अररंट अमित मचि महासोर।

रणधीर उतै बाघत्ति खान।
बजरंग अंग जुट्टे सु पान॥
हज्जार बीस बादित्य साथ[1] ।
सब जुरे आय रणधीर हाथ[2] ॥ ४६४॥
बज्जंत सार गज्जंत अब्भ।
रणधीर सथ्थ आये स सब्भ[3] ॥
करि क्रोध जोध बाहंत सार।
टूटंत अंग फूटंत[4] पार॥ ४६५॥
करि खेल सेल दोउ[5] ओर बीर।
बाहंत बीर किरवान धार॥
हज्जार बीस बद्धत साह[6] ।
धर परे बीर करि अकथ गाह॥ ४६६॥
रणधीर मीर दोउ भिरे आइ।
बाधत्त गाहि तब रोस बाइ॥
लग्गी सुढाल भू टूटि[7] ताम।
फिर दई सीस किरवान जाम॥ ४६७॥
लग्गी सु सीस धर परयौ जाय।
दुई टुक[8] होय भुमि अद्ध काय॥ ४६८॥

---

१ सत्थ। २ हत्थ। ३ सब्ब। ४ टुट्टंत, फुट्टंत। ५ दोऊ, दुहुँ। ६ साथं। ७ तुट्टि, टुट्टि। ८ टूकि, टुक्कि।

दोहरा छंद

भयो सोच जिय साह कै, जीतिय[1] जंग हमीर।
बादित खाँ से रन परे, बीस हजार सु बीर ॥ ४६९ ॥
महरम खाँ कर जोरि कै, करै अर्ज तिहिं बार।
लै कर शेख हमीर अब, किमि मिल्यो यहिं बार ॥ ४७० ॥
गही तेग तुम सों अबै, हठ नहिं तजै हमीर।
सेख देय मिल्लै नहीं, पन सच्चो[2] बर बीर ॥ ४७१ ॥

छप्पय छंद

कर कुरान गहि साह सीस साहिब को नायो[3]।
गढ़ दिस[4] दल चहुँ ओर घेरि रज अंबर छायो॥
देखि अलावदि साह कहै दल बद्दल भारी।
अब हमीर की अद्दलि आय पहुँचीह सुमारी॥
महरम्म खान इम उच्चरै अद्दलि हाथ[5] साहिब तनै।
का होनहार ह्वै है अबै को जानै कैसी बनै ॥४७२॥

दोहरा छंद

हजरति अपने इष्ट पर, पावक जरत पतंग।
यह हमीर कबहुँ न तजै, सेख टेक रणथंभ[6] ॥ ४७३ ॥
साह दसों दिसि जित्ति कै, अब आए[7] रणथंभ।
कहै राव[8] रणधीर सों, जुरो सूर रण रंग ॥ ४७४ ॥

---

१ जित्यो, जित्यउ, जीत्यो। २ साँचौ। ३ नाये। ४ देसल। ५ हत्थ। ६ गद जंग। ७ आइय। ८ हम्मीर।

अप्पन धर्म्म न छंडिए, कहै बात रणधीर।
निसि बासर अब साह सौं, किज्जिय जंग हमीर॥ ४७५ ॥

छप्पय छंद

को कायर को सूर द्यौस[1] बिन दृष्टि न आवै।
बिन सूरज की साखि सार छत्री न समावै॥
बीर गिद्ध[2] अरु संभु सकल फलहारी जेते।
धर पर धरैं न पाँव रैन मैं दिनचर जेते[3]॥
इम कहै राव रणधीर सौं मैं अधर्म्म नाहिन[4] कहूँ।
अब अलावदी साह सौं रैन सार कबहूँ न गहूँ॥४७६॥

दोहरा छंद

घाटी घाटी साह के, मारा मिलत अमीर।
राव जंग दिन मैं करै, राति लड़ै रनधीर॥ ४७७ ॥
तारागढ़ के पीर को, करै याद पतसाह।
रणतभँवर की फते[5] दे, कदमृ आऊँ चाह॥ ४७८ ॥

छप्पय छंद

जबहीं मीरा सयद साह की मदत पठाए।
सिर उतारि कर लिए राव परि सम्मुख धाए॥
जब हमीर की भीर च्यारि सुर सुद्ध सु आए।
... ... ॥
गणनाथ शंभु दिन कर अबर छेत्रपाल मन रज्जिए।
रणथंभ खेत दुहुँ ओर सौं बीर पीर दुव सज्जिए॥४७९॥

१ दिवस। २ गृद्ध। ३ तेते। ४ नहीन। ५ विजय।

छंद भुजंगप्रयात

लरै नो सयदं रणथंभ[1] देवा।
करै क्रोध भारी पिलै हर्ष भेवा॥
गरज्जंत[2] घोरंत आतंक भारी।
घनै घोर[3] वर्षंत वर्षा कगारी॥ ४८० ॥
कभू हल्लवै भुम्मि गज्जंत वीरं।
कभू घोर अंधार बर्षंत पीरं॥
गणन्नाथ हत्थं लिए तिच्छि फर्सी[4]।
पिनाकी पिनाकं किए आप दर्सी॥ ४८१ ॥
धरै मुद्गरं हत्थ[5] भैरव अमानो।
इसे दैव जुट्टे सु कट्टे अमानो॥
इतैं पीर हजरत्त के सत्थ पिल्ले।
अबद्दल्ल एकं[6] हुसैनं सुमिल्ले॥ ४८२ ॥
रहीमं सयद्दं सुलत्तान जक्को।
अहमद्द कानीर सूलं सु मक्को॥
इतै बीर जुट्टे सु कट्टे पुरानं।
भयो जुद्ध भारी सु भूले[7] कुरानं॥ ४८३ ॥
परे खेत नो सैद[8] दट्टे धरन्नी।
हँसे शंकरं भैरवं की करन्नी॥

---

१ रणथम्भ। २ मर्जंत, गज्जंत। ३ घाय। ४ पर्सी।
५ हाथ। ६ इक्कं। ७ भुल्ले। ८ सयद, सद्द।

परे पीर यूं नौ रसूलं सु अल्लो।
परयौ पीर दूजो कुतब्बं सु चल्लौ ॥ ४८४ ॥
परयौ जो हुसैनं करयौ जुज्झ[1] भारी।
परे हेरि हिम्मत्ति अल्लो सुधारी ॥
सयद्द सुलत्तान आयो जु मक्का।
अदल्लौ परे और तुक्की सु बंका ॥ ४८५ ॥
परयौ दूसरो जो रसूलं सु खेतं।
तबै बादस्याहू भयो सो अचेतं ॥
परे मीर नौ सैद जानंत साहं।
लरे अट्ठ बीरं हटै बैन काहं ॥ ४८६ ॥
अजंमत्त भारी हमीरं सु जानी।
तबै कुच्च किन्नो दरै छाड़ि कानी ॥
उलट्टे परं जाय किन्नो दिवानं।
जुरे खान जेते सु तेते अमानं ॥ ४८७ ॥
वजीरं अमीरं सबै खान बुल्ले।
सबै बात मंत्रं सु मंत्री सु खुल्ले ॥ ४८८ ॥

दोहरा छंद

महरम खाँ उज्जोर तब, अरज करी सब खोलि[2]।
लख बलखी उमराव तो, सदकै भए हरोल ॥ ४८९ ॥
अरु बकसी के बचन सुनि, साह कियो[3] अति सोच।
निबही राव हमीर की, गिनो हमैं सब पोच[4] ॥ ४९० ॥

---

१ जुद्ध। २ खुल्लि। ३ कियत्र। ४ सोच।

महिमा साह हमीर गढ़, ये तीनो[1] साबूत ।
बाजी रही हमीर की, मैं कायर जु कपूत ।। ४९१ ।।

छप्पय छंद

महरम खाँ कर जोरि साह[2] कोँ ऐसैं भाख्यौ ।
इक हिकमत तुम करो नीक जानो तो राख्यौ[3] ।।
महल[4] छाड़ि करि फते बहुरि गढ़ सोँ जुध[5] किज्जिय ।
तोरि छाड़ि रणधीर मारि कैं पकरि सु लिज्जिय[6] ।।
आतंक संक गढ़ मैं परै मिलै राव हठ छंडि[7] कै ।
गहि सेख देय मिलि सुत्तवै करौं कुच्च जब उलटि कै ।।४९२।।

चौपाई छंद

कहै साह महरम खाँ सुनियौ ।
यह मत खूब किया तुम गुनियौ ।।
छाँणि दरा को प्रथम दिली[8] जे ।
चंद रोज महँ फतह जु कीजे[9] ।। ४९३ ।।

दोहरा छंद

महरम खाँ पतसाह कोँ, हुकम पाय तिहिं बार ।
सकल सेन तजबीज करि, घेरी छाड़ि हकारि ।। ४९४ ।।

छंद बियक्खरी

कोप पतिसाह गढ़ छाड़ि लग्गै ।
सहस[10] सत्र तीन नीसान बग्गै ।।

---

१ दोऊ । २ तबै हजरति सों भाख्यौ । ३ रक्खौ । ४ पहलै । ५ जंग कीजे । ६ लीजे । ७ छाड़ि । ८ दिलिज्जे, दिलिज्जिय । ९ किज्जिय । १० तीन सहस नीसान दल माहि वग्गे ।

सहस[1] दस सात आरब्ब छुट्टै ।
गरज गिरि मेरु पाषाण फुट्टै ॥ ४९५ ॥
उठत गुब्बार महि तोप लग्गै ।
गए बन छंडि[2] मृग सिंह भग्गै ॥
लक्ख[3] पच्चीस दल ओर फेरयौ ।
यह भाँति पतिसाह गढ़ छाड़ि घेरयौ ॥ ४९६ ॥
कहै पतिसाह नहिं बिलम[4] किज्जे ।
चंद दिन[5] बीचि गढ़ छाड़ि लिज्जे ॥
कहै रणधीर मन धीर धरिए ।
आय चहुवाँन[6] सफजंग[7] करिए ॥ ४९७ ॥
निस्सान[8] सों सद्द[9] सुंदर सुबज्जै ।
राव रणधीर आयुद्ध[10] सज्जै ॥
बीर रस राग सिंधूर बज्जै ।
सहस इकतीस दल संग लिज्जै[11] ॥ ४९८ ॥
सहस दस सूर कुल तेग खेलैं[12] ।
अप्प जिय रुषिपरमाल[13] पिल्लैं ॥
यही[14] भाँति रणधीर चौगान आए ।
उड़ि जमीं गर्द असमान छाए ॥ ४९९ ॥

---

१ दो सहस आरबौ तेज छुट्टे । २ छाड़ि । ३ लाख । ४ विलवम, विलंब । ५ रोज । ६ चौगान । ७ सफरजंग । ८ नीसान सो साज सुर सद्द गज्जै । ९ शब्द । १० आयद्ध । ११ सज्जै । १२ खिल्लै । १३ परमार । १४ इस ।

अबदल्ल[1] कीरम्म[2] पतिसाह पंल्ले[3] ।
मीर रणधीर चौगान खिल्लें ॥
बहै वान किरवान[4] औ चक्क[5] चल्लैं ।
रणधीर कह सूर तुम होहु भल्लै ॥ ५०० ॥
साह सों सूर संमुक्ख जुरिए ।
हवस के मीर दस सहस परिए ॥
टुट्टि सिर मीर धड़ पहुमि लष्षै ।
पंच सत सूर उड़ि गिद्ध[6] भष्षै ॥ ५०१ ॥
राव रणधोर अप्पन[7] सिधारे ।
अबदुल्ल करम खाँ पहुमि पारे ॥
साहि रणधीर सफजंग[8] जुरिए ।
साह दल उलटि दो कोस परिए ॥ ५०२ ॥
कहै रणधार नहिं विलंम किज्जै[9] ।
वीति चंद रोज गढ़ छाड़ि लिज्जै[10] ॥
गढ़ कोट हू भाँति नहि हथ्थ[11] आवै ।
यूं ही पतिसाह दल क्यों खिसावै ॥ ५०३ ॥

दोहरा छंद

वर्ष पंच[12] गढ़ छाड़ि को, नहिं संवत् पतिसाह ।
द्वादस वरष रणथंभ सों, निधरक लरि अब साह ॥ ५०४ ॥

---

१ अबदुल, अबदुल्ल । २ कीरम, करीम, करीम । ३ पिल्लै । ४ कैयार । ५ चक्क । ६ गिर्जे । ७ आपन । ८ सफरजंग । ९ कीजे । १० लीजे । ११ हाथ । १२ पाँच ।

छप्पय छंद

धनि सु राव रणधीर साह मुख आप सराहै ।
मुझ दिसि सम्मुख आय कोप करि सार समाहै ॥
साह बचन इम कहै मीर महरम खाँ सुनिजे[१] ।
जीति[२] जंग रणधीर धन्य वह राव सुभनिजै ॥
पतसाह राडि सफजंग[३] की मनै करिय आपन[४] सबै ।
चहुँ ओर जोर उमराव सब किए मोरचा दृढ़ अबै[५] ॥५०५॥

जबै[६] राव रणधीर कहै हम्मीर सुनिज्जै[७] ।
सबै[८] हिंद को साथ बोलि रणथंभ[९] सु लिज्जै ॥
लिखि फर्मानह[१०] राव बंश छत्तीस बुलाए ।
जुरे जंग चौगान उमंग दल बद्दल छाए ॥
कर जोरि सबै हाजिर भए[११] राव बचन विधि या[१२] कहै ।
मैं गही तेग पतिसाह[१३] सों घरि जाहु जौन जीवो चहै ॥५०६॥

कह काको रणधोर राव सुन बचन हमारे ।
अबै छंडि[१४] कित जाहिं[१५] खाय करि निमक तिहारे ॥
अलीदीन सोँ जुद्ध छंडि गढ़ चौरे मंडौ
जिती साहि की सेन मारि खग खंड विहंडौ ॥
चाहूँ[१६] सुनीर या वंश को अकथ गथ्थ[१७] ऐसी करूँ ।
रवि लोक भेदि भेटूँ सुभट अप्प[१८] सीस हर हिय धरूँ ॥५०७॥

---

१ सुनिए । २ जित्ति । ३ सफरजंग । ४ अप्पन । ५ सबै । ६ जव सुराव । ७ सुणीजै । ८ सभै । ९ राणिरणथंभ । १० फुरमाना । ११ अहै । १२ हम । १३ हजरत्ति । १४ छाड़ि । १५ जाय । १६ चाहूँ । १७ गाथ । १८ आप ।

दोहरा छंद

कहै राव हम्मीर सों, मंत्र एक रणधीर।
जमीति गढ़ चित्तौर की, अजहुँ न आइय थीर ॥ ५०८ ॥
लिखि फर्मान हमीर तब, पठए गढ़ चित्तौर।
बंचि[1] खान बल्हन[2] कुँवर, हर्ष कीन नहिं थोर ॥ ५०९ ॥

चौपाई छंद

हर्षे उभय कुँवर चहुआनं।
चतुरँग के तुरंग[3] सजि आनं ॥
सोला सहस चमूँ सजि सारी।
सजे खाँन बल्हन[4] सी भारी ॥ ५१० ॥
सहस तीन[5] कमधज्ज सु जानों।
सहस अट्ठ[6] चहुवान बखानों ॥
सहस पंच पम्मार[7] अमानैं।
सोला सहस सजे करिवानैं[8] ॥ ५११ ॥

मोतीदाम छंद

मिलें तब आय कुमार सु दोय।
हमीर सुचाव कियो बहु जोय ॥
बढ़्यो हिय हर्ष दुहूँ[9] उर सोय।
कहै[10] तब बैन सु राव सु होय ॥ ५१२ ॥

---

१ बाँचि। २ वाल्हन। ३ चतुरंग। ४ वाल्हन। ५ तीस। ६ आठ। ७ पव्वार पै आनो। ८ किरवाना। ९ दहूँ। १० किया सु जुहार मिले वर दोय।

किये सनमान सुराव अपार।
मिलंत कुँवार[१] दयो सिर भार॥
रख्यै तुम सेख भए जग धन्य।
रहै नहिं कोय सदा जग अन्य॥ ५१३॥
रहै जग कित्तिय[२] नित्ति अभंग।
सदा यह देह कहै[३] छिनभंग॥
जिते हम सेवक ज्यों अब ठढ्ढ।
रहो निहचित्त अभै यह गढ्ढ॥ ५१४॥
करैं हम जंग लखो अब हथ्थ[४]।
उठे दुहुँ बीर कही यह गथ्थ॥
चढ़े चतुरंग कियो तन कोप।
मनो अरुनोदय भान सु ओप॥ ५१५॥
बजे रणतूर सु भेरि सबद्द।
भए पद गोमुख बीर सु सद्द॥
चढ़े कुँवरेस तबै चतुरंग।
बढ्यो हिय हर्ष करै रणरंग॥ ५१६।
कहै तब खान सु बाल्हन सीह।
करे सफजंग अबैदल[५] वीह॥
रतन्न कुमार रखो गढ़ ओर।
नरब्बल[६] ग्वालिर ओर चितोर॥ ५१७॥

---

१ कुमार। २ कीरति। ३ नहीं। ४ हाथ। ५ अबदल्ल।
६ नरवर, नरब्बर।

नठै तब अन्न करो सफजंग।
तजो मति टेक लरो[1] अनभंग॥
असी सुनि बैन हमीर सुभाय।
भरे[2] जल नयन रहे मुरझाय॥ ५१८॥
कही[3] तब कौर नहीं थिर कोय।
चलै गिर मेरु नहीं थिर सोय॥
मिले सुरलोक ससोक सकौन।
सुनी यह राव रहे गहि मौन॥ ५१९॥
गए रनबास जहाँ दोउ[4] बीर।
कियो परनाम जुहार सुधीर॥
सबै रनबास भरे जल नैन।
कही[5] तदि आसमती यह बैन॥ ५२०॥
करो तुम उच्छह है यह[6] वार।
कहे तदि[7] बैन हँसे जु कुमार॥
धरो तुम सीस हमारे जु[8] मोर।
लरै सिर सेहर बाँधि[9] सजोर[10]॥ ५२१॥
बँध्यौ तब मौर कुमारन सीस।
दई बहु भाँतिन आसु असीस॥
कियो बहु हर्ष कुमार अपार।
गए हर मंदिर सो तिहिं बार॥ ५२२॥

---

१ लरो जु अभंग। २ डरे। ३ कहे। ४ दुव। ५ कहे। ६ वुह। ७ तब। ८ सो। ९ बंधि। १० मोर।

गनेसुर शंकर पूजि[१] सुभाय।
करै बहु ध्यान गहे जब[२] पाय॥
चढे बरबीर बढ्यो हिय चाव।
बजे बहु बाजि[३] निसानन घाव[४] ॥ ५२३॥
गजे असमान धरा बहु भाय।
गजे घनघोर घटा मनु छाय॥
तुरंग अनेक सुफेरत सूर।
बनी तिन उप्पर पष्षर पूर॥ ५२४॥
झलक्कत नूर चमक्कत सेल।
चढ़े मुख ओप[५] बढ़े मुख मेल॥
उड़ै[६] रज अंबर सुज्झ न भान।
हँसे हर देखत[७] छुट्टिय ध्यान॥ ५२५॥
चली सँग अच्छरि जुग्गनि ताम।
मिली बहु पंखनि[८] गिद्धनि जाम॥
मिले बहु भूचर खेचर हूर।
चले पल चारिय भूत सुभूर॥ ५२६॥
करे सु जुहार हमीरहिं ध्याय[९]।
करो यह बात परस्सि[१०] सुपाय॥

१ पुज्जि। २ तव। ३ वाद्य। ४ हात्र। ५ नूर। ६ उठी। ७ पेखत, पिख्खत, दिष्षत। ८ पक्खनि। ९ धाय। १० पस्सि, परस्सिय, परसिय।

मिले भव आनि[1] सुनो चहुवान।
करै कल रीति तजै नहिं बान ॥ ५२७ ॥
तजौ[2] धन धाम रु लोभ सु मोह।
धरौ मनु टेक सरन्न सुजोह ॥
इती कहि सीस नवाय हमीर।
कियो रणथंभहि बंदन[3] धीर ॥ ५२८ ॥
चले सनम्मुख उभै कुमरेस।
सजे चतुरंग तनय करि रेस ॥
जहाँ पतिसाह अलावदि ओर।
चली[4] बर बीरति[5] बाँधि सुमौर ॥ ५२९ ॥

दोहरा छंद

करि असवारी कुमर दोउ, उतरे पौलि सु छाँन।
डेरा करे उछाह जुत, बजि नोबति नीसान[6] ॥ ५३० ॥
सुनि नोबति के नाद[7] तब, बहु उछाह गढ़ जान।
तब अलावदी हसम दिसि, चाहत भयो[8] निदान ॥ ५३१ ॥
बोलि खान सुलतान तब[9], मसलति करी जु[10] साहि।
गढ़ में कहा उछाह अति, कहा सबब यह आहि ॥ ५३२ ॥
है यह राव हम्मीर के, लघु भय्या[11] के पूत।
लरन[12] काज[13] इन सेहरो, सिर बांध्यो मजबूत ॥ ५३३ ॥

---

१ मिलै भव आनि। २ तजै। ३ चंदन। ४ चले, चढ़े। ५ वीरसु। ६ अप्रमाण। ७ नद्द। ८ भषो। ९ सब। १० सु। ११ भ्राता। १२ कौन। १३ कज्ज।

भइय संक पतिसाह उर, कीनो बहुत विचार।
जौ न सिंह के मुख चढ़ै, सो झिल्लै इन सार॥ ५३४॥

चौपाई छंद

कहै वजीर साह सुनि बत्तं।
मीर अरब्बिय[1] जॉनि सु तत्तं॥
मर्कट बदन[2] सूकर सम[3] कानं।
द्रग मंजार बेस खल[4] जानं॥ ५३५॥
तुम[5] सोँ मत प्रथ्विराज सु अग्गैं।
गढ़ गज्जनि आए[6] गहि खग्गैं॥
तुमहिं ढिल्ली के तख्त बसाए[7]।
गोरीसा के भए सहाए॥ ५३६॥
बे[8] दोउ कुमर पकरि अब लावै।
सन्मुख होइ तो मारि गिरावै[9]॥
सुनि वजीर के बचन सुहाए।
मीर जमालखान बुलवाए॥ ५३७॥
कहै साह सुनि मीर जमालं।
है यह काम तुम्हारै हालं॥
आगै तुम गहियो प्रथिराजं।
त्यों[10] तुम गहो कुँवर दोउ आजं॥ ५३८॥

---

१ आरबी। २ बदंत, मुख। ३ इव। ४ बपुख। ५ तिहि सामत। ६ लाये। ७ बैसाये, बैठाये। ८ वै दुइ कुमर पकरि गहि ल्याऊँ। ९ गिराऊँ। १० तिम

छप्पय छंद

सुनि जमाल खाँ मीर हथ्थ धरि मुच्छ सँवारिय ।
पाँव परसि कर जोरि कवन बड़ काज निहारिय[1] ॥
जों आयुस अनुसरों सकल हिंदू गहि लाऊँ ।
सम्मुख गहै[2] जु सार मारि तिहिँ धूरि मिलाऊँ ॥
इम[3] कहि सलाम कीनी[4] तुरत सज्जि सथ्थ सब[5] अप्पबल ।
सजि[6] कवच टोप कर खग्ग गहि उभै ओर किन्निय सुहल[7] ॥ ५३९ ॥

भुजंगप्रयात छंद

इतैं कुमर[8] चित्रंग[9] के जंग जुट्टे ।
उतैं मीर आरब्ब के बीर छुट्टे ॥
दुहूँ ओर घोरं निसानं सु बज्जं ।
मनो पावसं मेघ घोरं सु गज्जं ॥ ५४० ॥
दुहूँ ओर खंडं प्रचंडं सुभारी ।
छुटे नाल गोला बँदूकं सुभारी ॥
भयो सोर घोरं धुँवा घोर घोरं ।
गई सुद्धि सुज्झै नहीं[10] नैन ओरं ॥ ५४१ ॥
करैं सेल खेलं महाबीर बंके ।
फुटै अंग अंगं करै दोय हंके ॥

---

१ निकारिय । २ गहइँ । ३ यह । ४ किन्नी । ५ सह । ६ सज्जे । ७ बज्जे सुबीर सिंदूर, (सिंधुर) बदन उभै ओर किन्निय सुलह । ८ कौर । ९ चतुरंग । १० मही ।

बहैं तेग अंगं करैं टुक दोई।
हँसी कालिका देखि[1] कौतुक सोई॥ ५४२॥
बहैं[2] जम्म दंडं करैं बाहु जोरं।
कढै[3] अंत अंतं कहूँ सीस तोरं॥
कहूँ हथ्थ मथ्थं परे बार बंके[4]।
उठे रुंड मुंडं करैं जोर हंके[5]॥ ५४३॥
उतैं मीर जामील ध्यायो हँकारं।
इतैं खान धायो भिरयौ इक बारं॥
उतैं मीर तीरं चलायो हँकारी।
लग्यो बाजि कै सो भयो बारि पारो॥ ५४४॥
परयौ खॉन को बाजि फुट्टौ सु अंगं।
चढ़े और बाजी करयौ फेरि जंगं॥
दई खाँन जम्मील[6] कै अंग बच्छी।
परयौ भुम्मि मीरं सुतो आय मुच्छी॥ ५४५॥
दोउ सैन देखैं भिरं बीर दोई।
भए लथ्थ वथ्थं कुमारं सु सोई॥
परयौ जोर भारो कुमार सु जान्यौ।
तबै राव हम्मीर उप्पर सुठान्यौ॥ ५४६॥
लियो बोलि संखोदरं सूर सोऊ।
करो ऊपरं[7] जाय कुम्मार दोऊ॥

१ दिक्ख पिक्ख। २ चहै। ३ गहै। ४ बक्के। ५ हक्के। ६ जम्माल। ७ उप्परं।

महाबीर[1] अज्जान बालग्घु सूरं ।
महायुद्ध जानैं इतो बै करूरं ॥ ५४७ ॥
चले सूर संखोदरं खेत आए ।
उतै आरबीसेन द्वै[2] लक्ख धाए ॥
उडै बान गोला गजं बाजि फुट्टै[3] ।
बहै बान कम्मान ज्यों मेघ उट्टै ॥ ५४८ ॥
धरैं आयुधं[4] बीर सौं बीर बुल्लैं ।
परैं सीस भू मैं[5] किती सीस झल्लैं ॥
कहै खाँन कुम्मार बैनं हँकारी ।
सुनो सर्व सथ्थं[6] करे जुद्ध भारी ॥ ५४९ ॥
रहै नाम लोकं महा मुक्ति मिल्लै ।
रहै नाहिं कोई सदा आय[7] भिल्लै ॥
चलाए गजं कोपि[8] कुम्मार सोई ।
उतं आरबी मीर जम्माल[9] होई ॥ ५५० ॥
तबै बीर बालन्नसी कोप किन्नां ।
महा[10] तेग जम्माल कै मथ्थ दिन्नों ॥
कस्यौ टोप ओपं लगी जाय मथ्थं ।
तबै मीर बालन्न भय लुथ्थ वथ्थं ॥ ५५१ ॥

१ महावीर अज्जान बाइ लघु सुसूरं । २ दोउ । ३ झरें । ४ आवर्त्त । ५ भुम्मी । ६ सत्थम् । ७ आप । ८ कार्य्य । ९ जम्मीर । १० तबै तेग जम्मील के अंग दीनो ।

कटारं कुमारं चलायो[1] सु भारी ।

परयौ मीर जम्मील भू मै सु थारी[2] ॥

सबै सथ्थ जम्माल की कोपि धायो ।

तहाँ बालन्न मारि धरनी गिरायो[3] ॥ ५५२ ॥

तबै खान कुम्मार धायो[4] रिसाई ।

घनी सेन आरब्ब धरनी मिलाई[5] ॥

तबै बीर संखोदरं जंग[6] कीनो ।

किते आरबो खेत पारयौ नवीनो ॥ ५५३ ॥

किते सेल खेलं करैं वार पारं ।

भभक्कैं घटैं घाव छुट्टैं पनारं ॥

बहैं तेग वेगं परं[7] सीस भारी ।

उड़ें घोर रुंडं परैं मुंड कारी ॥ ५५४ ॥

परे दोय कुम्मार किन्नो अकथ्थं ।

बरी अच्छरी सूर लोकं सु मथ्थं ॥

परे मीर आरब्ब के पोन लक्खं ।

तहाँ हिंद की भीर सैारा सुभक्खं[8] ॥ ५५५ ॥

परे दो कुमारं महावीर बंके ।

परे एक संखोदरं कीन हंके ॥

तहाँ आठ[9] हज्जार चहुवान जानं[10] ।

परे तीन हज्जार कमधज्ज मानं ॥ ५५६ ॥

---

१ लगायो । २ धारी । ३ मिलायो । ४ धाये । ५ गिराई । ६ जुद्ध । ७ परी । ८ सुमत्थं ९ अट्ट ।। १० ज्वानं ।

पँमारं परे पाँच हज्जार सोई।
परे बीर सोला सहस्रं सुजोई॥
परे स्वामि के कज्ज[1] कुम्मार दोई।
सुनी राव हम्मीर जीते सु सोई॥
भजे आरबी ज्यों बचे[2] जंग तेयं।
कहै साह देखो सु हिंदू अजेयं॥ ५५७॥

दोहरा छंद

परे सहस सत्तरि तहाँ, मीर अरब्बिय[3] संग।
हय गय पाँच हजार परि, सत जमाल से अंग[4] ॥ ५५८॥

छप्पय छंद

तब सु राव रणधीर साहि पै[5] तेग समाही।
समो[6] सु पहोंच्यो आय सु तो मिट्टै नहिं काही॥
चढ़े खेत रणधीर साहि दोनूँ[7] बतराए।
तजै न हठ हम्मीर कहा जो तुम सत[8] आए॥
रणधीर राव इम उच्चरै समुझि साहि चित लिज्जिए।
गढ़ रणथंभ हमीर को हजरति हट्ठ न किज्जिए॥ ५५९॥

---

१ काम। २ रहे। ३ अरबी। ४ तहाँ परे सोरह सहस दुहूँ कुँवर के संग। ५ साहि सौं। ६ संमत। ७ दोऊ। ८ बतराए।

कहै साहि रणधीर राव को किन समझावो।
करो राज रणथंभ सेख[1] को कदमौं लावो॥
होनहार सो भई मिटे मेटो न मिटाई।
घटै हटै हठ राव तबै हमरी पतिसाई॥
नहिं तजै राव हठ मैं तजौं कौन साह मो सौं कहै।
यह प्रगट बत्त[2] संसार[3] महि भिरै दोय एकै[4] रहै॥५६०॥

कहै राव पतिसाह सुनौं रणधीर अमानौं।
इतो राज तुम करो जितो हम सों नहिं छानौं॥
ये[5] गढ़ चार सु धीर हुकुम किसके तुम पाए।
कबहुक[6] फिरे रकेब सीस कबहू नहिं[7] नाए॥
गिरि सूरज पलटै पहुमि कोटि बचन कह कोय किन।
सेख छाड़ि उलटौ फिरै यह कबहुँक सु होयहि न॥५६१॥

दोहरा छंद

चढ़े साहि दल विपुल जब, छंकिव[8] गढ़ रणधीर।
तब चहुवान रिसाय कै, सन्मुख जुड़े[9] सु बीर॥५६२॥

छंद त्रोटक

रणधीर चढ़े करि कोप मनं।
सब सामत सूर सजे अपनं॥
गजराजन उप्पर डंबरयं।
उछले[10] लगि बीर सु अंबरयं॥५६३॥

---

१ सेख गहि कदमु लाओ। २ बात। ३ सारी मही। ४ इकै। ५ यह। ६ कबहुन। ७ बनवाए। ८ छिक्किव। ९ जुट्टिग, जुट्टिय। १० उससे।

बहु चंचल बाजि सु बग्ग[1] लियं।
किय अग्ग[2] सु पैदल लाग कियं ॥
गढ़ तैं बहु भाँति[3] सु तोप चली।
पतिसाह समेत सु कोप चली ॥ ५६४ ॥
रणधोर सु बंधन दुग्ग[4] कियं।
करि मंगल विप्रन दान दियं ॥
रबि को परनाम सु कीन तबै।
कर जोरि सु आयसु मागि[5] जबै ॥ ५६५ ॥
अरु राव हमीर जुहार कियं।
हर्षे[6] चहुवान सु मोद हियं[7] ॥
बहु दुंदुभि ढोल सुभेरि बजे।
कसि आयुध सायुध बीर सजे ॥ ५६६ ॥
हलका करि बीर चढ़े दल पैं।
मनु राघव कोपि कियो खल पैं ॥
उत साहि हुकम्म कियो रिस मैं।
सब सेन जु आय जुरयो छिन मैं ॥ ५६७ ॥
विफरे सब बीर सुधीर मनं।
सब स्वामि सु धर्म्म सु कीन पनं ॥
दुहुँ ओर सु तोप सु कोप[8] छुटे।
गढ़ कोट न रूँधत[9] पार फुटे ॥ ५६८ ॥

१ बाग। २ अग्र। ३ भांतिन। ४ दुर्ग। ५ मंगि। ६ बरषे। ७ दियं। ८ कोपि। ९ रुक्कत।

बरषै धर आगि[1] सु धूम उठा।
झर अंबर भुम्मि कराल बुठो॥
बहु गोलन गोलन गोल परे।
गजराजन सों गजराज जुरे[2]॥ ५६९॥
हय सों हय पयदल पयदल सों।
जुरिए बहु जोध महाबल सों॥
बहु[3] बान दुहूँ दल माँझ परै।
धर सीस कहूँ कर पाँव झरै॥ ५७०॥
बहु शोर अँधार सु घोर भयो।
निसि वासर काहु न जानि[4] लयो॥
कर कुंडिय[5] बोर कमाँन कसैं।
गज बाजिन फुट्टत पार लसैं॥ ५७१॥
बरषै मनु पावस बुंद अयं।
बहु फुट्टत पक्खर[6] कंगलयं॥
तहँ लागत[7] सेल सु पार हियं।
मनु श्रोन पनारन तैं बहियं॥ ५७२॥
लगि तेग करैं दुव टुक[8] तनं।
जिमि[9] सीस परैं तरबूज धनं॥
तहँ साह सु सेन मुरक्कि चली।
चहुँवान तबै करि कोप बली॥ ५७३॥

---

१ अग्गि। २ भिरे। ३ चहुँवान। ४ ज्ञान। ५ कुंगिल।
६ पाखर। ७ लगात। ८ टूक। ९ गिन।

रणधीर कटार सूँ पार कियो ।
बलखान सु तेग जु कंध दियो ।। ५७८ ।।
सिर टुट्टत धीर उठ्यो धडयं ।
बलखानहि आय गह्यो करयं ।।
भरि बथ्थ सु हथ्थ पछारि बलं ।
हिय पार कटार किए सु खलं ।। ५७९ ।।
लख एक सरूमिय खेत परे ।
रणधीर सुरुंड भरे खपरे ।। ५८० ।।

चौपाई छंद

परयो खेत बकसी बड़ भारी ।
और संग दल बीस हजारी ।।
मीर पचास संग तेहि सूते ।
इक लख रूमि बिहस्त[1] पहूँचे[2] ।। ५८१ ।।
तीस सहस रणधीर सु[3] संगी ।
परे खेत वर वीर उमंगी ।।
धीर[4] रुंड द्वै पहर सु नच्च्यौ ।
एक सहस हनि गज जस संच्यौ ।। ५८२ ।।
टूट्यो गढ़ सु छाड़ि कौ सोई ।
सुनी श्रवण हम्मीर सु जोई ।।
तब आपन तन मन पन जान्यौ ।
छत्री मंगल मरन बखान्यौ ।। ५८३ ।।

---

१ भिस्ते । २ पहुच्चे । ३ के । ४ धीर युद्ध कर रुंड न चंच्यौ ।

दोहरा छंद

पक्ख ऊजरो चैत्र सुदि, तिथि नौमी शनिवार।
बीस सहस छत्री परे, अबला जरीं हजार॥ ५८४॥
जो कनवज काकै करी, करी छाड़ि रणधीर।
हरष सोच सम करि दोऊ, चक्रत भए[1] जु मीर॥ ५८५॥
गज इकसठि दो लष तुरी, छप्परि बीस अमीर।
जो कहता सोई करी, धन्य राव रणधीर॥ ५८६॥

छप्पय छंद

इतं मीर रण परे साहि षट मास सम्हारे।
तबै दूत इक आय साहि सौं बचन उचारे॥
जिते देव हिंदवान डिगत को धीर बँधावै।
जिनको पूजन करै राव निस दिन मन लावै॥
बर दियो राव हम्मीर कों आपन मुख शंकर सरिस।
टूटै न गढ्ढ रणथम्भ सुनि अभै किए चौदह बरस॥५८७॥

दोहरा छंद

दल लख सत्ताइस तहाँ, धरनि समावत मीर।
सूखत[2] सर सरिता बिमल, कूप बावरी नीर॥ ५८८॥
तिथि नौमी आसौज सुदि, कर गहि तेग रिसाइ।
सुरमंदिर करि कोप सब, चढ्ढि[3] अलावदि साइ॥ ५८९॥
हाथ जोरि गन्नेश कूँ, कहै राव हम्मीर।
करो मदति चाहत जवन, अलादीन दलभीर॥ ५९०॥

---

१ भयउ। २ सुकृत। ३ चढ़यो।

चौपाई छंद

सुनत[1] बचन हम्मीर के सोई।
कोपे[2] जुद्ध देव को जोई॥
जब शंकर काशी हरषानी।
निज[3] समाज बोले मृदु बानी॥ ५९१॥
चौसठि जोगनि भैरव नच्चै।
कर धरि चक्र त्रिशूल सु रच्चै॥
बाजे[4] डिमरू बोर चढ़ि[5] आए।
तबै साहि सों जंग रचाए॥ ५९२॥
चल्लै चक्र त्रिशूल सु नेजा।
शक्ति पाश धनु बान धरेजा॥
हल मूसल अंकुल मुद्गरवर।
परिघ सेल लै धाए परिकर॥ ५९३॥
कीनो जुद्ध बीर सब सज्जे।
शंकर सरस कतूहल[6] सज्जे॥
सबै साहि की सैन सुभाई।
सबै परस्पर करैं लराई॥ ५९४॥
बजि बाजंत्र अनेक स बोरं।
डौरुव शंख भेरि पट हीरं॥

---

१ सुन तब वत्त राव की सोई। २ कुप्पिय। ३ निज मुक्ख सुवुल्लिय मृदु बानी। ४ वाज्जिय, बजिव्व। ५ जुरि। ६ कुतूहल।

मार मार चहुँ दिस सुनि बानी।
कटे लाख[1] आल्हन पुर जानी ॥ ५९५ ॥

छप्पय छंद

तब सब देव गणेश विघ्न बड़ दल में किन्नव।
कितै म्लेच्छ कौ संग शस्त्र अप अप्प सु किन्नव ॥
उठे सकल ललकारि कीन्ह घमसान सुभारिय।
रुंड मुंड परि दंड सेन दो लक्ख सँघारिय ॥
देखंत नयन पतसाह तब अति अद्भुत कौतुक भयउ।
हिम्मत्त बहादुर अली पर उभय लक्ख सेनह हयउ ॥५९६
यह चरित्र लखि साहि कूँच[2] आल्हन पुर[3] ते करि।
तब फिर पलटे आय घेरि रणथम्भ सरिस भरि ॥
करि देवन से दोष कहो कौन सुख पाए।
आगे[4] लख दल किते मारि हरि असुर खिपाए।
अब लरैं मनुष मानुषन सौं देव दैत्य आगे[5] किते।
यह जानि साहि सिर नाय करि आय[6] किए[7] डेरा उते ॥५९७॥

दोहरा छंद

हठ[8] हमीर छाड़ै नहीं, हजरति तजै[9] न टेक।
सात मीर पतसाह के, गए बिसरि करि तेक ॥ ५९८ ॥

---

१ लक्ख अल्हन। २ कुच्च। ३ अल्लनपुर। ४ अग्गैं। ५ अग्गैं। ६ आनि। ७ किन्न, कियउ, किते। ८ हठ हम्मीर न छंडही। ९ तजी।

महरम खाँ तब इम कही, अब पिछतावति साहि।
हम बरजत रणथम्भ गढ़, चढ़ि आए तुम चाहि[1] ॥ ५९९ ॥
हजरति हिमति न छाड़िए, धरिए मन में धीर।
गढ़ नरगह चहुँ दिसि करो, कब लग लरै हमीर ॥ ६०० ॥

पद्धरी छंद

महरम्म आपनों[2] तजि सुसाहि।
ध्याए सुदेव हिँदवान जाहि॥
बहु बोलि विप्र पूजा कराहिं।
करि धूप दीप आरति बनाहिं ॥ ६०१ ॥
पद परसे दरसे सकल देव।
नैवेद्य पुज्य नाना सु भेव॥
कर जोरि साहि बंदन सुकीन[3]।
यह भाति गवन डेरा सु लीन[4] ॥ ६०२ ॥
करि आल्हण[5] पुर तैं कूच ध्याय।
रण के पहार डेरा कराय॥
गढ़ की निगाह कीनी[6] सु साहि।
आसंग नाहि कीनी सनाहि ॥ ६०३ ॥
करि मंत्र एलची दिय पठाय।
तुम को सुकहत समुझाव[7] राय।

---

१ साहि। २ अप्पनां। ३ किन्न। ४ दीन। ५ आल्हण।
६ किन्नी। ७ समुभाव।

दै सेख छाँड़ि हठ मिलि सुराव।
परसो सुआय पतसाह पाँव ॥ ६०४ ॥
इम सुनत राव प्रजरयो सु अंग।
व्रत टरै कंमि छत्री अभंग ॥
तुव कहा कहूँ दूतै सुजानि।
नन टरै बैन छत्री सुबानि ॥ ६०५ ॥
नहि देहु सेष घन[1] करै कंमि।
पशु पंछी जे तजि सरण जेमि ॥
रणधीर कुँवर होउ अति उदार।
वालणसी तीजो षान सार ॥ ६०६ ॥
ते परे खेत रावत अभंग।
अब कोन मिलि[2] राख्यो प्रसंग ॥
तब दूत द्रव्य लै जाहु ओर।
कहँ रही बात[3] फरमान तोर ॥ ६०७ ॥
मति आव फेरि भेजे सुसाहि।
अवार्वना जुद्ध नहिं उचित ताहि ॥
लै चल्यौ दूत ये खबरि ऐन।
जा कहे शाहि सौं सकल बैन ॥ ६०८ ॥
सुनि बचन बाँचि फरमान सोइ।
कहि साहि राव समुझै न कोइ ॥

१ प्रण। २ मिलि। ३ बत्त।

उज्जीर देखि तजबीज कीन।
रण को पहार अपनाय लीन॥ ६०९॥
चढ़ाय तोप तिहि पर प्रचंड।
कीनी तयार गढ़ को अखंड॥
पतसाह कहै महरम सुबत्त।
तुम सुनो एक हम करी[1] चित्त॥ ६१०॥
हम्मीर राव की तोप देखि।
दग्गो सु आपनी तोप लेखि॥
यह तोप फुटे गढ़ फते होय।
संदेह कौन या में न सोय॥ ६११॥
गोलम्मदाज तब करि सलाम।
दागी[2] सुतोप लखि ताव ताम॥
लग्गे सुतोप के गोल जाय।
नुकसान भए तिहिं कछुक जाय[3]॥ ६१२॥
यह सुनी श्रवण हम्मीर राय[4]।
ततकाल तोप पै गयो धाय॥
देषी सुतोप साबूत जानि।
तब कह्यौ राव तुम सुनो कानि॥ ६१३॥
पतसाह तोप खंडै सुकोय।
हौं करौं बड़ो ताको सुसोय[5]॥

१ घरी। २ दग्गी। ३ लाय। ४ राव। ५ सजोय।

गोलन्नदाज कीनो[1] जुहार।
पतसाह तोप फूटी सुपार ॥ ६१४ ॥
तब कही शाह महरम सुदेखि।
गढ़ विषम बीर छंडै न टेक[2] ॥
अब करो[3] क्यों न तजबीज और।
किहि भाँति हाथि आवै सुजोर ॥ ६१५ ॥
कर जोर कही महरम्म खान।
पुल बाँधि[4] तोरि गढ़ करो आन ॥
तब महरम्म खाँ तजवीज कीन।
इक राह बाँधि गढ़ को जु लीन ॥ ६१६ ॥
पुल[5] बाँधि कीन गढ़ की जु राह।
सुनि राव चित्त चिंता सु आह ॥
नहि रह्यौ मरम[6] गढ़ को सकोइ।
बहु फिक्कर राव कीनों सु जोइ ॥ ६१७ ॥
तिहिँ रैन पदम सागर सुआय।
दीनो सुसुप्न हम्मीर धाय ॥
नहिं करो कोन चिंता हमीर।
सब नदी समुद्दन को सुसीर ॥ ६१८ ॥
तुम रहो अभै गढ़ अभै[7] आय।
इक छिन्न माहिं पुल द्यों बहाय ॥

१ किन्नउ। २ पेखि। ३ करै। ४ बंधि। ५ पुल बंधि किहूँ गढ़ को सराहि। ६ मगज। ७ अजै।

तब प्रात राव जग्गे हम्मीर ।
फूटि गयो सकल बंध्यो सुनीर ॥ ६१९ ॥
सुनि साह बात[1] अचरिज्ज मानि ।
टूटै न गढ़ जिय विषम जानि ॥
पुच्छिउ[2] तबै उजीर सुबोलि ।
कीजे इलाज किम कहो खोलि ॥ ६२० ॥
रण[3] के पहार कहा कीन आय ।
डेरा सुकीन्ह उज्जीर थाय ॥
मजबूत मोरचा तहाँ कीन्ह ।
बहु परी रारि दुहुँ ओर चीन्ह ॥ ६२१ ॥
हम्मीर राव ऊपरि प्रसाद ।
तहाँ करयो अखारो इंद्रबादि ॥
तहाँ चंद्रकला पातुर प्रवीन ।
सो नृत्य करै सुंदर नवीन ॥ ६२२ ॥
बाजत मृदंग बीना सितार ।
कट तार तार सहनाइ सार ॥
महुवरी सुंख जरि तास संग ।
झीमंडल सुर औ जल तरंग ॥ ६२३ ॥
षट तीस राग रागिनि सुसुद्ध ।
सो सुनै नृपति चहुआन उद्ध ।

---

१ बत्त । २ पुच्छी सुतवै उज्जीर बोलि । ३ रण कौ पहार परि साह आय ।

गंधार देव भैरव सुजान ।
अरू राम कली विम्भा समान ॥ ६२४ ॥
वजि ललित विलावल गिरी देव ।
सुर आसा टोडी सकल भेव ॥
हिंडोल और सारँग अनूप ।
नट और श्रीयुत राग भूप ॥ ६२५ ॥
करि गौरी कौ अलाप आनि ।
तब दीपग अरू सगरे कल्यान ॥
सुर गावत पंचम अति प्रवीन ।
सुनि केदारो मारो सुभीन ॥ ६२६ ॥
खंभाच रू मारू परज पाइ ।
सुभ सोर उडैसी जैत गाइ ॥
प्रड्याणी कन्हर बहु सुभेव ।
बंगाल गौड़ मालव सुदेव ॥ ६२७ ॥
सिंधुव बिहाग षट राग पेषि ।
काफी अनूप सुर मधुर लेखि ॥
सब कला जीति संगीति रीति ।
नृतंत बाल गावंत गीति ॥ ६२८ ॥
सुर सप्त ग्राम तीनूं सु भेव ।
इक्कीस मूर्छिना करत[1] एव ॥

---

१ धरत ।

बहु लाग डाक[1] गावत प्रबंध ।
तिहिँ सुनै होत आनंद फंद ॥ ६२९ ॥
हम्मीर राव राजत मसंद ।
दुहुँ ओर चौर ढारैं[2] अमंद ॥
यहि[3] देखि साहि गरि गयो गब्ब ।
हम्मीर इंद्र पदवी सु सब्ब ॥ ६३० ॥
अभिमान तजत नहिं[4] मिल्यौ मोहि ।
नहिं शेख देय संका न कोहि ॥
यह चंद्रकला पातुर सुभेव ।
बरु हाव भाव हस्तक सुदेव[5] ॥ ६३१ ॥
वर्षत कटाच्छ ऊपरि सुराव ।
मोहि गिनत नाहिं कछु रहत चाव ॥
तब तान गान गावंत मानि[6] ।
एड़िय सुबाल मोहिं फिरत[7] बानि ॥ ६३२ ॥
अपमान बाल कीन्हो[8] अनंत ।
एड़ी दिखाय मुझ[9] को हसंत ॥
करि कोपि कहै पतिसाह एम ।
मैं करौं बड़ो[10] जेहि को सुप्रेम ॥ ६३३ ॥
जो हनै बाल कहि तीर पाहि ।
रसभंग करै मैं गिनो ताहि ॥

---

१ डाठ । २ ठौरैं । ३ तिहिं । ४ मिल्यौ न मोहि । ५ सुभेद । ६ जानि । ७ करत । ८ किन्हौ । ९ महि सों । १० बड़ा ।

सुनि बचन मीर गभरू सुशेख।
कर जोरि कीन्ह बानी विशेख ॥ ६३४ ॥
यह धर्म्म पुरुष को कितहु[1] नाहिं।
तिय ऊपर ऊचो करत[2] बाँहि ॥
तब कहत साहि इम सजो बान।
नुकसान होय अरु बचै ज्यान ॥ ६३५ ॥
सुनि बचन श्रवन कम्मान लीन।
सो ऐंचि श्रवन तिय चरन दीन ॥
तब परी बाल ह्वै बिकल भूमि।
रसभंग भयो सब लखत पूमि ॥ ६३६ ॥
लगि तीर सभा में परी[3] जाव।
तब बढ्यो सोच हम्मीर राव ॥
अब लों न तीर दुग्गहि पहुँच्चि।
यह कौन औलिया आय सच्चि[4] ॥ ६३७ ॥

दोहरा छंद

देखि तीर अचिरज हुए,[5] गढ़ में आवत सीर।
चक्रत चहुँ दिसि चाहि कै, रह्यौ[6] राव हम्मीर ॥ ६३८ ॥
मुरझि तिरिय[7] धरनी परी, भए राव चित भंग।
राव कहै[8] ऐसे बली, किते साह के संग ॥ ६३९ ॥

---

१ कहत । २ कर बसांहि । ३ परयौ । ४ उँचि ।
५ भए। ६ रहे। ७ त्रिया। ८ कहह।

महिमा साहि हमीर सै, कही बात कर जोर।
सकल साह के हसम में, है लघु भैया मोर॥ ६४० ॥
नहिं दूजो कोउ साह कै, सबरे[1] दल में और।
मीर गभरू अनुज मम, जामें इतनो जोर॥ ६४१ ॥

छप्पय छंद

नाहिं जती बिन जोग सूर बिन तेग[2] न होई।
इते साह के संग मीर सरभर नहिं कोई॥
करो हुकम मोहि राव साह को हनौं ततच्छिन।
मिटै सकल उतपात भाज सब सेन जाय बिन[3]॥
हँसि कही राव हम्मीर तब यह खुदाय दूजो दुनी।
सिर बचै साह छत्र जु उडै यह कौतुक कीजे गुनी॥६४२॥

करि[4] साहिब को याद सीस हम्मीरहिं नायो।
कियो हुकम तब[5] राव कोपि के बान[6] चलायो॥
अनल[7] पंष जनु परिय टूटि[8] आकास धरन्निय[9]।
भयो सोर बर शब्द पर्यौ महि छत्र बरन्निय[10]॥
मुरझाय साह भू में परे[11] उड्यो छत्र आकाश दिस।
तब कह उजीर पतसाह सौं तजी ज्यान परिहरि सु रिस॥६४३॥

---

१ सिगरे। २ तेज। ३ घन। ४ कर जगदीसहि याद इष्ट-देव निज सुमिरि। ५ हम्मीर। ६ बरसु। ७ अनिल। ८ टुट्टि। ९ बरन्निय। १० धरन्निय। ११ भुम्मी गिरउ।

दोहरा छंद

पिछल निमक[1] की दोस्तो, करी जान बकसीस ।
जो दूजो सर छंडिहै, हनिहै बिश्वा बीस ॥ ६४४ ॥
जा गढ मैं महिमा रहै, किम आवै वह हथ्थ ।
अहि ज्यूँ गहि छछूँदरी, यों हजरत की गथ्थ ॥ ६४५ ॥

छप्पय छंद

कह महरम षाँ बात इसी[2] हजरति सुनि आवै ।
वह महिमा बर बीर राव का हुकम जु पावै ॥
गहै तुम्हैं ततकाल पाँव लंगर गहि मेलै ।
उसै दिली बैठाय जोर मरजाद सु पेलै ॥
हठ छाँड़ि साहि रणथंभ का करो कूच चलिए दिली ।
जै रही राव हम्मीर की पतिसाही सारी गिली ॥६४६॥
तब[3] सु साह हठ छाड़ि उलटि दिल्ली दिस आए ।
पिता बैर कर याद साह सुरजन पछिताए ॥
रतन पंच लै संग[4] साह के पाँव सु लग्ग्यौ ।
तात बैर हिय जानि कोप उर मैं अति जग्ग्यौ ॥
कर जोरि साह सुरजन कहै सुगम दुग्ग मो हथ्थ गनि ।
यह जित्यो राज[5] रणधीर को मोहि दैन की बाच भनि ॥६४७॥

---

१ निमष । २ इती । ३ तब अलावदी छंडि हठ दिल्ली दिस आए । ४ भेंट । ५ राव हम्मीर कौ ।

दोहरा छंद

हँसि हजरत ऐसो कह्यो[1], सुरजन आगं[2] आव।
दियो राज रणधीर को, करूँ बडा उमराव ॥ ६४८ ॥
करि सलाम सुरजन तबै, बीरा खायो कोपि।
आप भवन हिकमति रची, स्वामि धर्म्म सब लोपि ॥ ६४९ ॥
जौरा भौरा खास मो[3], भरे जु कोरे चाम।
फजरि आनि हाजिरि भयो, सुरजन करी[4] सलाम ॥ ६५० ॥
हाथ[5] जोरि हम्मीर सों, सुरजन कह्यो सुजान।
मिलो राव पतिसाह सौं, गढ़ बीत्यो[6] सामान ॥ ६५१ ॥
बिनती सुनत हमीर तब, कियो कोपि रत नैन।
छंडि टेक छत्री तनी, रे कपूत गनि ऐन[7] ॥ ६५२ ॥

चौपाई छंद

कहै राव हँसि सुरजन सुनिजै।
मिलो छाड़ि[8] पन[9] यह न गुनिजै ॥
सुनि कापुरुष कपूत अयानै।
छाड़ि टेक को[10] छत्री जानै ॥ ६५३ ॥
फिर हमीर सुज्जन सों पूछी[11]।
तेरी बात लगत मोहि छूछी[12] ॥
जौंरा भौंरा खास सु दोई।
कैसे निबरै जानत सोई ॥ ६५४ ॥

---

१ कहै। २ अग्गु। ३ द्रु। ४ किन्न। ५ हथ्थ। ६ बित्यौ। ७ गति ऐन। ८ छंडि। ९ प्रण। १० नहिं। ११ पुच्छी। १२ छुच्छी।

कहै साह यह तो है[1] छानी।
प्रगट देखि निज नैनन जानी॥
पाथर[2] डारि खास मैं जोई।
सुनिए श्रवन सद्द[3] सब कोई॥ ६५५॥

दोहरा छंद

पाथर डार्‌यो खास महँ, खुड़क्यो चाम[4] अपार[5]।
जिस सब्ब[6] नीचै रही, राव यहै[7] निरधार॥ ६५६॥
खुड़क्यो[8] सुनि दुव[9] खास को, चढ़्यौ सोच उर राव।
महिमा तब हम्मीर सों, कहै बचन गहि पाँव॥ ६५७॥

छप्पय छंद

कहै जु महिमा संष राव मुहि हुकुम सु दीजै[10]।
मिलो साह को जाय फिकर इतनो नहिं कीजै[11]॥
अब[12] दिल्ली को कूँच साहि को तुरत कराऊँ।
तुम राजो रणथंभ जुद्ध मैं सकल सिराऊँ॥
हम्मीर राव हँसि यों[13] कहै[14] सदा कौन जग थिरि रहै।
छिन[15] भंग अंग लालच कहा सुजस एक[16] जुग जुग रहै॥६५८॥

---

१ तहिं। २ पत्थर। ३ शब्द। ४ चर्म्म। ५ आधार। ६ सबै। ७ येह। ८ खुड़को। ९ दोउ। १० दिज्जै, दिज्जिय। ११ किज्जै, किज्जिय। १२ अबै दिली। १३ इमि। १४ कह्यो। १५ खण। १६ इक्क।

दोहरा छंद

अलादीन पतिसाह सों, गही[1] खग्ग[2] करि टेक।
दुख मैं बिरले मित्त[3] हैं, सुख मैं मित्त अनेक॥ ६५९॥
हठ तौ राव हमीर कौ, औ[4] रावण की टेक।
सत राजा हरिचंद को, अर्जुन बाण अनेक॥ ६६०॥
गह्यो टेक छाड़ै नहीं, जीभ चौंच करि जाय।
मीठो[5] कहा अँगार कौ, ताहि चकोर चुगाय[6]॥ ६६१॥

छप्पय छंद

राव[7] बात यह कही शेख अपने घर आयो।
भई राति सुरजन्न निकट हजरति कै आयो[8]॥
हाथ[9] जोरि सिर नाय कहै छल राव भुलायो।
द्वादस के सामान रक्खि गढ़ तोरि हलायो॥
ये[10] कहिय बात[11] सुर्जन सकल रणतभँवर टूट्यो अबै।
हजरति प्रताप महा बंक गढ़ सहल भयो सदकै सबै॥६६२॥

दोहरा छंद

चंदकला देवलि कुँवरि[12], पारसि महिमाँ साह।
माँगत साह अलावदी, अब लै मिलयो आय[13]॥ ६६३॥

छप्पय छंद

सुनि हजरति कै बचन राव हम्मीर रिसाए।
कहा अलावदी साहि गर्व्व के बचन सुनाए॥

---

१ गहिय। २ तेग। ३ मीत जुग। ४ अरु। ५ मिठौ। ६ जु खाय। ७ सबै बत्त ए कहिय शेख अप्पन घर आयो। ८ धायौ। ९ हत्थ। १० यह। ११ बत्त। १२ कुँमरि। १३ आहि।

मैं हमीर चहुवान साह सों हम कछु चाहैं।
चिमना बेगम एक और चिंतामणि साहैं॥
पाइक्क च्यारि पीराँ[1] सहित कहै[2] साह ये दिज्जिए।
छुट्टै न हट्ट हम्मीर कौ कुच्च दिल्ली को किज्जिए॥६६४॥
ये हमीर के बचन[3] बाँचि पतिसाह रिसानो।
रे हराम कमबख्त किसो गढ़ फते करानो[4]॥
सुरजन झूठो कहै राव हम्मीर न मानै[5]।
नहिं महिमा को देइ मिलै नहिं हठी अमानै॥
यह कह्यो साहि सुरजन्न[6] तब देखिय अब कैसी बनै।
रणथंभ राव् हम्मीर जुत मिटै होहि कौतुक घनै॥ ६६५॥
तब करि बदन मलीन राव रनवासहिं आए।
उठि रानी कर जोरि राव को सीस नवाए॥
गढ़ बीत्यो[7] सामान भयो भंडार सु रीतो।
टेक छाड़ि[8] करि सेख देहु अब मांगु न बीत्यो[9]॥
बिलखाय बदन रानी कहै द्वादस वर्ष जु तुम लरे।
बिप्रीति बुद्धि कौने दई हीन बचन[10] मुख निक्करे॥ ६६६॥

चौपाई छंद

रानी कहै सुनो महरावं।
ऐसे बचन उचित नहि भावं॥

---

१ पीरन। २ कहत राव। ३ ज्वाब। ४ करि जानां। ५ मन्नै। ६ सुरजन तबै। ७ बित्यौ। ८ छंडि। ९ बीत्यौ, रीतौ, वित्यौ। १० वत्त।

या तन बचन सार श्रुति भाषै[1] ।
तन मन धन दै वचन जु राखै[2] ॥ ६६७ ॥
तन धन भ्रात पुत्र अरु नारी ।
हरि विधु त्यागि बचन प्रतिपारी ॥
राज पाट अनित्य[3] सु जानो ।
रहैं नित्य इक सुजस बखानो ॥ ६६८ ॥
केकइ ध्वज अधविग्रह दीनों ।
विद्या भवन जीति जस लीनों ॥
अब जो कही सत्य वह जानो ।
और न होय कोटि बुधि ठानो ॥ ६६९ ॥

दोहरा छंद

कब हठ करै अलावदी, रणतभँवर गढ़ आहि ।
कबै सेख सरनौ रहै, बहुरौ[4] महिमा साहि ॥ ६७० ॥
सूर सोच मन में करो[5] , पदवी[6] लहौ न फेरि ।
जो हठ छंडो राव तुम, उतन लजै अजमेरि ॥ ६७१ ॥
सरन राखि सेख न तजो, तजो सीस गढ़ देश ।
रानी राव हमीर को, यह दीन्हो उपदेश ॥ ६७२ ॥

छप्पय छंद

कहाँ पँवार जगदेव सीस आपन कर कट्यौ ।
कहाँ भोज विक्रम सु राव जिन पर दुख मिट्यौ ॥

---

१ भवषै । २ रक्षै । ३ अन्नित । ४ बहुरयौ । ५ करै ।
६ पदई ।

सवाभार नित करन कनक विप्रन को दीनो[1] ।
रह्यो न रहिए कोय देव नर नाग सुचीनो ॥
यह बात[2] राव हम्मीर सूँ रानी इम आसा कही ।
जो भए चक्कवै मंडली सुनो[3] राव दीखै नहीं[4] ॥ ६७३ ॥

दोहरा छंद

धन जोवन नर की दसा, सदा न एक विहाय ।
पाष[5] पाँच शशि की कला, घटत घटत[6] बढ़ि जाय ॥ ६७४ ॥
राखि सरन शेख न तजो, तजो सीस गढ़ बेगि ।
हठ न तजो पतसाह सोँ, गहि कर तजो न तेगि ॥ ६७५ ॥
जितो ईश तुम्ह वर दियो, अब फिर चाहत काय ।
करो जंग पतसाह सोँ, सनमुख सार समाय ॥ ६७६ ॥
जीवन[7] मरन सँजोग जग[8], कौन मिटावै ताहि ।
जो जन्मै संसार में, अमर[9] रहै नहिं आहि ॥ ६७७ ॥
कोउ सदा नहिँ थिर रहै, नर तरु गिरवर ग्राम ।
करगो राज रणथंभ को, अपना[10] तन परमान ॥ ६७८ ॥
कहाँ जैत कहँ सूर कहँ, कहँ सोमेश्वर राण ।
कहाँ गए प्रथिराज जे, जीति साह दल आण ॥ ६७९ ॥
कहा जैत कहँ सूर पृथि, जिन गह गौरी शाह ।
होतब जग में प्रबल है, चिंता किज्जिय काह ॥ ६८० ॥

---

१ दिन्नव । २ बत्त । ३ कहा । ४ कही । ५ पख, पष्ष, पाषि । ६ बढ़त । ७ जामन । ८ जे । ९ अमर न कोई आए । १० हम अपने तप नाम ।

होतब मिटै न जगत में, कीजे चिंता कोहि।
आसा कहै हमीर सों, अब चूको मति सोहि ॥ ६८१ ॥
बिछुरन मिलन सँजोग जग, सब में यह विधि सोह।
आसा कहै हमीर सँह, हम तुम भया बिछोह ॥ ६८२ ॥
धन्य वंश जिहि जन्म तव, राव सराहत ताहि।
और कौन तुम बिन त्रिया, बचन कहै समुझाय ॥ ६८३ ॥
धन्यं पतिब्रता नारि तू, राव सराहत आय।
अवर कौन तुझ बिन त्रिया, कहै बचन बिन पाय ॥ ६८४ ॥
राखि शेख शरनौं तजों, कुल लाजै चहुवाण।
तुम साकौ गढ़[1] कीजिए[2], निरखि साह नीसाँण ॥ ६८५ ॥
लीन[3] परिच्छा बहुत मैं, तू छत्री कुलबाल।
तुव मत मैं देख्यौ[4] सुदृढ़, यही बात[5] यहि काल ॥ ६८६ ॥
सुने राव के बचन तब, परी धरनि मुरझाय।
निठुर बचन मुख ते जु कहि, तजि रनवासि रिसाय ॥ ६८७ ॥
हम पतिभरता पुरुष बिन, कौन दिसा चित को धरैं।
आसा कहै हमीर सौं, तुम पहला साको करैं ॥ ६८८ ॥

छप्पय छंद

खोलि सकल भंडार तुरत[6] जाचिक सु बुलाए[7]।
विप्र भली बिधि पूजि[8] दिए बंदी मन भाए॥

---

१ गढ़ मैं करौ। २ किज्जियै। ३ लिन्न। ४ दिख्यौ। ५ वत्त। ६ सबै। ७ बुल्लाए। ८ पज्य।

भवन त्रिया गढ़ ग्राम तजे हम्मीर मोह बिन।
मन क्रम वचन सु त्यागि भए निज धर्म्म लीन खिन ।।
तत्तकाल रनवास तजि सभा आप दरबार किय।
आय जु मित्र मंत्री सु बुध सूर बीर आदर सुदिय ।। ६८९ ।।
कहै राव हम्मीर सुनों चतुरंग महा वर।
तुम्है रतन की लाज जुद्ध[1] हम करैं नियम करि ।।
तुम सब बात समत्थ[2] करौ जैसी तुम भावै।
रणतभँवर[3] को लोग तहाँ कुछ दुःख न पावै ।।
गढ़ सजो जाय चित्तौड़[4] को प्रजापालि सुख दिज्जिए।
सब साम दाम दंडह सहित भेद नित्य[5] सब किज्जिए। ६९०।।
कहै तबै चतुरंग उचित[6] यह हम कों नाहीं।
आप[7] रहो हम[8] रहैं लरैं हम जस के ताहीं ।।
कहे राव यह प्रजा सकल चित्तौड़[9] समावै।
यह परिकर सब जितो राखि[10] आपन[11] जु सुहावै ।।
चतुरंग राव ले रतन कों गढ़ चित्तौड़ सुचल्लिए।
प्रथम जाय अलहणपुरह करुणा जुत डेरा किए।। ६९१ ।।

दोहरा छंद

पंच सहस चतुरंग लै, चले[12] रतन के साथ।
सकल मीर दर्बार किय, कहा सबन यह गाथ[13] ।।६९२।।

---

१ बुद्ध। २ समर्थ। ३ यह परिकर सब जितौ, राख आपन जु सुहावै। ४ चीतौड़। ५ नीति। ६ उदित। ७ अप्प। ८ सब। ९ चीतौड़। १० रक्खि। ११ अप्पन। १२ चलिय, चल्यउ। १३ सत्थ गत्थ।

जीवै सो धर भुग्गिवै[१], जुझ्झे[२] सुरपुर वास।
दोऊ जस कित्तो[३] अमर, तजौ मोह जग आस॥ ६९३।
जीवन चाहत जो कोऊ, ते सुखैन घर जाहु।
कहै राव सबके सुनत, हम सँग मरन उछाह॥ ६९४।

छप्पय छंद

सुनत वचन ये सेख भवन अपने को आए[४]।
कुटम सेख करि खेस करद लै अद्दल पठाए॥
कहै राव सों वचन नैन जल सोँ भरि आए।
सुख संपत रणथंभ त्यागि करिए मन भाए॥
सुर नर कायर[५] सूरमाँ कहै सेख थिर नहिं कोई।
हम्मीर राव चहुवान अब करै साहि सोँ जँग सोई॥ ६९५।

दोहरा छंद

जीवन को सब कोउ कहै, मरन कहै नहिं कोय।
सती सूरमा पुरुष को[६], मरतहिं मंगल होय॥ ६९६॥

छप्पय छंद

केसर सौँधे वसन सकल उमरावन सज्जे।
अलादीन पतिस्याह फेरि कहि कब कब गज्जे॥
सहस गऊ करि दान राव सिर मौर सु बंध्यौ।
करग्गव[७] जुद्ध को साज छत्र कुल सुजस सु संध्यौ॥

---

१ भोगिवै। २ जूझे। ३ कीरत। ४ कै धाये। ५ कातर। ६ कै। ७ करिव।

निस्सान[1] पान बज्जे सु घन हर्ष बोर बानै पढ़े।
चहुवान राव हम्मीर तब जुद्ध काज चौरै चढ़े[2] ॥ ६९७ ॥

दोहरा छंद

पंच सहस रतनेस सँग, गढ़ चीतोड़[3] पठाय।
पंच सहस रणथंभ गढ़, द्रढ़ रावत रह आय ॥ ६९८ ॥
असी सहस सेना सकल, चढ़ी राव के संग।
माया मोह विरक्त मन, जुरन साह सौं जंग ॥ ६९९ ॥

छप्पय छंद

कमध्वज कूरम गौड़ तँवर परिहार[4] अमानो।
पैरच वैस पुँडीर वीर चहुवान सु जानो ॥
जद्दव[5] गोहिल धीर चढ़े गहिलोत गरूरं।
सैंगर और पंवार भिल्ल[6] इक भोज मरूरं ॥
छत्तीस वंश छत्री चढ़े जिम पावस बद्दल बढ़े।
हम्मीर[7] राव चहुवान तब जंग कज्ज[8] चौरै कढ़े ॥ ७०० ॥
जेठ मास बुध वार सप्तमिय पक्ख[9] अँध्यारी।
करि सूरज को नमन राव कर खग्ग[10] सम्हारी ॥
हर्षे सुर तेंतीस और हर्षे जु कपाली।
नारद सारद हर्षि बीर बावन जुत काली ॥

---

१ नीसान। २ कढ़े। ३ चितौड़। ४ पड़िहार। ५ जाहम। ६ भील। ७ दल हरषि राव हम्मीर के साह जीव अचरिज बढ़े। ८ काज। ९ पाख। १० तेग।

हर्षी जु हरषि अच्छर[1] हरषि जुग्गिनि वृंद सु नच्चियव।
जंबुक कराल गिद्धनि हरषि सूर हरषि हिय रच्चियव ॥७०१॥

हनूफाल छंद

सजि सूर राव हमीर। विरदाय[2] वीर सु धीर॥
जनु छत्र कुलं की लाज। रन सिंधु की मनु पाज॥ ७०२॥
दातार सूर सु अंग। निस द्यौस जुट्टत जंग॥
धरि स्वामि धर्म्म सुरंग। बढ़ि[3] रहे तिल तिल अंग॥ ७०३॥
गढ़ कोट ओटत एक। तोरंत करि करि टेक॥
सिर खौरि चंदन सोह। रबि बंदि बंदि सुलोह॥ ७०४॥
गति उद्ध[4] कुद्दत भट्ट। ज्यौं खेलन उत्तो[5] नट्ट॥
अँग वर्म्म चर्म्म सु कीन। सिर टोप ओप सु दीन[6]॥ ७०५॥
दस्तान रच्चि सु हथ्थ। करि चहै गथ्थ[7] अकथ्थ[8]॥
बहु न्हान दान सु कीन। गो स्वर्ण विप्रन दीन[9]॥ ७०६॥
रवि शंभु विष्णु सुपुज्जि[10]। मन साह सैं करि दुज्जि[11]॥
आचार भार फबंत। दोउ पच्छ सुद्ध सुभंत॥ ७०७॥
बहु बंदि विरदत जाय। बढ़ि दूंद हर्ष सु आय॥
असमान लग्गि[12] सु शीश। झलहलैं तेज सु दीश॥ ७०८॥
सँग चढ्यव[13] वंश छतीस। संग्राम अचल सु दीस॥ ७०९॥

---

१ अच्छरि। २ विरदार। ३ रहिब। ४ उर्ध। ५ उतरेउ। ६ किन्न, दिन्न। ७ गरथ। ८ अगथ्थ। ९ दिन्न, किन्न। १० पूजि। ११ दूजि। १२ लग्गिय। १३ चढ़े।

दोहरा छंद

स्वामि धर्म्म धारैं[1] सदा, माया मोह विरक्त ॥
होन कृपान उदार मति, अचल अद्रि हरिभक्त ॥ ७१० ॥
साखत साज सुवाजि सजि, कीन बनाव सु ऐन ॥
चंचल चपल विचित्र गति, राग बाग लखि सैन ॥ ७११ ॥

छंद हनूफाल

तब[2] साहनी नृप बोलि । हय सहस सोलह खोलि ॥
सब वंश उच्च सु बाज[3] । लखि[4] रूप मोहत राज[5] ॥ ७१२ ॥
मनु उच्चश्रव के बंधु । आवर्त्त चक्र सु कंधु ॥
तुरकी हजार सु पाँच । मग चलत करत सु नाच[6] ॥ ७१३ ॥
ताजी हजार सु रुद्ध । गुन सील रूप समुद्ध ॥
सब बीर ताजि[7] कुलीन । नृप बंटि[8] बाजि सु दीन ॥ ७१४ ॥
बनि जीन जटित जराव । नग हीर पन्न सु हाव ॥
सिर बनिय कलगिय ऐन । मनु सजे बाजि सु मैन ॥ ७१५ ॥
गज गाह बाह अथाह । जो करै[9] जल पर राह ॥
नग मुक्त माल सुमाल । गुम्फी[10] सु रुचि बहु काल ॥ ७१६ ॥
मखमलिय सिगरे साज । मनु सबै रवि के बाजि ॥
जिन परिय पष्षरि अंग । लख भ्रमत दिट्ठि[11] अभंग ॥ ७१७ ॥
बहु सिरी सीसन सोहि । उड़ि चलैं भरि जो कोहि ॥

---

१ धारहिं । २ तब साह लिय नृप बुल्लि । ३ बजि । ४ लख । ५ राजि । ६ पंच । नच्च । ७ धीर । ८ बाँटि । ९ करहि । १० गूँथी । ११ दिठि ।

गति चलैं[1] चंचल एमि । जिनि पवन पहुँचै केमि ॥७१८॥
धर धरत सुम यौं मानि । मनु जरत अग्गि[2] सु जानि ॥
जल चलैं थल जिमि बट्ट[3] । लखि उड़ैं औघट घट्ट[4]॥७१९॥
मृग गहत डार कमान । नहिं पच्छि पावहिं[5] जान ॥
गति पवन देखि लजात । जनु मुकुर कांति सगात ॥७२०॥
दोउ वंश शुद्ध प्रकाश । बड़ि डील पील सु जास ॥
यह बिधि सु लिन्ने[6] मौलि । नग हेम सर भर तौलि ॥७२१॥
कोउ बने कच्छिय ऐन । सब[7] उड़ै पच्छिय गैन ॥
ऐराक बंश सुशील । गुन भरे झलकत डील ॥७२२॥
खंधार उपजि स सुद्ध । जनु लखत रूप सु उद्ध ॥
कावलिय डील अनूप । तिहिँ देखि[8]मोहत भूप ॥७२३॥
अरू चीन के जु नवीन । ताजी सगुन गन लीन ॥
बर बीर अनक जु डील । जो लिए साटै[9] पील ॥७२४॥
रँग रंग अंग बनाव । सो लिये पंकति[10] दाव ॥
सिरगा सुरंग समंद । संजाफ सुरख अमंद ॥७२५॥
कुम्मैत कुमुद कल्यान । मोती सु मगसी आन ॥
सब्जारू सब रँग भौंर । चंपा सु चीनियू चौंर ॥७२६॥
अवलख सु गरड़ा रंग । लक्खी जु उपजिहि मंग ॥
हंसा हरेई बाजि । तीतुरिय ताँबो साजि ॥७२७॥

---

१ चलहिं । २ अग्नि । ३ बाट । ४ घाट । ५ पावै । ६ लीने ।
७ संग । ८ दिक्ख, पिक्ख । ९ सट्टैं । १० लगे पंकज ।

भिन भिन्न टुकड़ो साजि । चढ़ि चलिय रावत गाजि ॥
चहुवान राव हमीर । रँग रँग सु रच्चन धीर ॥७२८॥

छंद त्रोटक

गजराज सबै सत पंच सजे ।
गिरगात[1] मनो घन भट्ट गजे ॥
सु महावत जंत्रन मंत्र रजे ।
करि बंधन[2] पीर सुधीर कजे ॥७२६॥
परि पांय सजाय निकट्ट षरे ।
पग खोलि जंजीर सुबीर अरे ॥
बिरदाय भज़े मन हथ्थ[3] कियं ।
असनान कराय सिंगार लियं ॥७३०॥
तन तेल सिंदूरन चित्त कियं ।
सिर चंद अमंद सुरंग लियं ॥
जनु कज्जल बद्दल पावसयं ।
तड़िता घन[4] चंद की मावसयं ॥७३१॥
सजि डंबर अंबर सो लगियं ।
घन घोर घटा सु पटा गिनियं[5] ॥
कसियं हवदा ध्वज धार वली ।
मनु पंगति पब्बय की जु चली ॥७३२॥
वर्षा घन घोर सु जानि परै ।
कवि रूप स्वरूप समान करै ॥

---

१. गिरगात, गिरिराज । २. बंदन । ३ हत्थ । ४ धनु । ५ गजिया ।

बहु बद्दल बारन वृंद बढ़े[1] ।
ध्वज वैरष लाल निसान कढ़ें ॥७३३॥
तड़िता घन मैं दमकंत मनों ।
बगपंत सुई गजदंत भनों ॥
गरजै बहु गाज सु गाज मनं ।
मिलियो शशि सूरज गोन भनं ॥७३४॥
बर्षै हद मद्द सुभद्द सदा ।
सु बहैं बहु भाँति सुभद्द[2] मुदा ॥
सिर ढाल ढलक्कत एमि लसै ।
शशि जीव धरासुत एक बसें ॥७३५॥
अधधुंध चलै मग उम्मगयं ।
मनु काल कराल उठे जगयं ॥
चरषी बहु बान जु नेज लियं ।
धरि सेन सु अग्र[3] सुभाय कियं ॥७३६॥
पद लंगर और जंजीर जुटे ।
नहिं खुल्लत आदुव न्याय लुटे[4] ॥
बल राशि अमान[5] सुकोह भरे ।
नन चालत मग्ग अमग्ग अरे ॥७३७॥
बहु दुंदुभि घोर सुनै अमनं[6] ।
विरदाय सुनंत करै गमनं ॥

---

१ चढ़े । २ नद्ध । ३ अग्ग । ४ लुटे । ५ अमावन ।
६ अवनं ।

सिर चौंर दुरंत इसे दरसैं।
तम दाबि दिनेश मरीचि लसै ॥७३८॥
चतुरंगनि राव हमीर तनी।
सब भाँतिन सोभ अनंत बनी॥
सब रावत आय जुहार कियं।
चहुवान सबै सिर भार दियं ॥७३९॥
धरि अग्र सु पिल्लन डिल्ल पिले।
बहु चंचल बाजिन लाज[1] षिले॥
बहु दुंदभि बाजत[2] घोर घनं।
पट गोमुख भेरि सु चंग मनं[3] ॥७४०॥
सहनाइय सिंधुर राग हरं।
विरदावत विंद कविंद तरं॥
उमगे चहुवान विकट्ट दलं।
अप अप्प सु वीर कराय हलं ॥७४१॥
चहुँ ओर कितेक सु पुंगल के।
करिहा[4] सजि संग चले बलके॥
तिनकी सज मानव चित्र रचे।
धर दूर नजीक करै सु नचै ॥७४२॥
असवारिय सज्ज बनी तिनतैं।
खबरैं बहु लेत घने बन तैं॥

---

१ साज़। २ बज्जत। ३ हनं। ४ करहा (ऊँट)।

बहु तोप जलेबिन[1] अग्र बनी ।
सब सिंदुर लेप करी जु घनी ॥७४३॥
तिन ऊपर बैरख वृंद सजी ।
जम की मनु जीभ अनेक गजी ॥
बलि देत चलै अरिवृंद भषै ।
मद बक्कर भष्षर[2] कोप धषै ॥७४४॥
हथनारि जंबूर सु चद्दरयं ।
छुटिया तुबकै बहु अद्दरियं ॥
धरि अग्र सबै चहुवान चढ़े ।
बहु बंदि कबिंद सुछंद पढ़े ॥७४५॥
इहि भाँति उभै दल कोप कियं ।
हरषे बर बीर सुधीर हियं ॥७४६॥

दोहरा छंद

श्रवन सुनै बर वीर रस, सिंधव राग अपार ।
हरषि उठे दोउ तिहिं समै, मिलन बीर शृंगार ॥७४७॥

छंद हनूफाल

मिलनै सुवीर शृंगार । दुहु हरष हिए अपार ॥
बर वीर हरषेउ अंग । उत अच्छरी सु उमंग ॥७४८॥
तन उभै मज्जन कीन । भए दान मानस लीन ॥
तहाँ कौच बीर नबीन । रचि बाल वसन प्रवीन ॥७४९॥

---

१ जलेवय, अग्ग । २ भष्षत ।

इत टोप बीरन सीस। कसि कंचुकी तिय रीस ॥
बहु अस्त्र बंधि सु वीर। अच्छरि सु भूषण हीर ॥७५०॥
इत सूर खड्ग सु लीन। उत बाल अंजन दीन ॥
इत ढाल बीरन बंधि। ताटंक श्रवननि संधि ॥७५१॥
सामंत बंधि कटार। अच्छरी तिलक सुढार ॥
मुख पान ज्वान सुभाव। तिय चंप दंत जराव ॥७५२॥
इत कसी सूर कमान। दृग वाम चमक निदान ॥
धरि बीर कर दस्तान। अच्छरिय महदी पान ॥७५३॥
बरच्छो सु लीनिय सूर। बर माल कीनिय हूर ॥
सिरपेच सूर जराव। तिय सीस फूल सुहाव ॥७५४॥
इत तबल तौरा नेत। तिय हाव भाव समेत ॥
रचि सूर सेलिय अंग। अच्छरिय हार उमंग ॥७५५॥
कसि तून वीर स जंग। अच्छरिय नैन अपंग ॥
कर केहरी नख सूर। उत पानि पानि सहूर ॥७५६॥
लिय वीर तुलसिय माल। वर माल लीन स बाल ॥
कसि सूर मोजा पाँय। नुपुर सु बाल सुहाय ॥७५७॥
कसि सूर वाजि सु तंग। विम्मान बाल उमंग ॥
इहि भाँति सूर सवाल। उतकंठ मिलन तिकाल ॥७५८॥

दोहरा छंद

उमगि उमगि हम्मीर भट, चले सकल करि चाव।
च्यारि अनी चतुरंग की, चढ़े संभरी राव ॥७५९॥

उतै साह के मीर भर, खान और उमराव।
रणतभँवर छिक्किय हरषि, नाना करिव बनाव ॥७६०॥
चारि दरा घाटी जिता, कीने घाटा रोह।
काल रूप कोपे तुरक, बान विकट जंसोह ॥७६१॥

भुजंगप्रयात छंद

चढ़े बीर कोपे दुहूँ ओर धाए।
मनों काल के दूत अद्भुत्त आए॥
इतै राव हम्मीर के बीर छुट्टे।
उतै भीर धीरं गहीरं सु जुट्टे ॥७६२॥
उड़ी रैन सैनं न दीखंत भानं।
दुहूँ ओर घोरं सु बज्जे निसानं॥
छुटै[1] तोप बानं दुहूँ ओर जोरं।
धरा अंमरं बीच मच्चे सु शोरं ॥७६३॥
उठी ज्वाल माला धरा वै उपट्टे।
धुवाँ घोर घोरं सु जोरं प्रगट्टे॥
मनो छाय सिंधू तजैं आय बेला।
प्रलैकाल के काल कीनो समेला ॥७६४॥
दुहूँ ओर घोरं सु गोलं बरष्षैं।
मनो मोघ ओला अतोलं करष्षैं॥
उड़ै अग्रपव्वय डहैं गढ्ढ कोटं।
परै गज्ज बाजं धरा धूरि लोटं ॥७६५॥

1 तुटै।

प्रलै पावकं जानि उट्टो लपट्टैं ।
बरं उभकरं सूभरं यों भपट्टैं ॥
लगै गोल में गोल गोला सु गज्जै ।
भए वार पारं उपम्मा सु रज्जै ॥७६६॥
मनो स्याम कै वास ह्वै वारपारं ।
चहूँ ओर राजंत है चारू वारं ॥
रहे गिद्ध तामें घने बैठि अद्धं[1] ।
करै ध्यान बैठे गुफा में मुनिद्धं ॥७६७॥
उड़े साथि गोलान के बोर ऐसैं ।
मनों फाटिका तैं उड़े नट्ट जैसैं ॥
चलै तोप जोरं करैं सोर भारी ।
परै बिज्जुरी सी घने[2] एकबारी ॥७६८॥
छुटै एक वारै[3] घनी चादरं यों ।
मनो भार भूजै बनै यों घनै यों ॥
बँदूकै हजारं चलैं एमि राजै ।
मनो मेघ गोला परै भूमि गाजै ॥७६९॥
चलै बान बेगं मचै सोर भारी ।
मनो आतसंबाज खेलंत कारी ॥
छुटैं बान कम्मान ज्यों मेघ धारा ।
लगै बाज गज्जं हुवै वार पारा ॥७७०॥

---

१ अद्रं । २ घनी । ३ वारं ।

मनो नाग छोना उडैं होड मंडो ।
उसै अंग अंगं करै सेन खंडी ॥
बहै तोमरं सेल औ सक्ति ऐनं ।
करै वार पारं वहै उच्च वैनं ॥७७१॥
बहै खड्ग बेहद्द देखंत सूरं ।
करै दोय टूकं सडुक्कै समूरं ॥
बहै तेग कंधं परै गज्जराजं ।
लगै आयुधं यों डरं सर्ब साजं ॥७७२॥
कटै कंगलं अंग आजीन बाजी ।
तबै सूर रीझै करे मालसाजी ॥
कटारी बहै वार पारं निहारै ।
मनो स्याम उर माँझ कौस्तुभ सम्हारै ॥७७३॥
कहूँ पंजरं पिंजरं बेगि फारं ।
मनो हाथ वाला अहारी निकारं ॥
छुरी हत्थ जोरं करै सूर हाँकैं ।
कहूँ मल्ल युद्धं करैं वीर खाँकैं[1] ॥७७४॥
परै सीस भूमैं[2] उठै रुंड[3] घोरं ।
दुँहू सेन देखंत कौतुक्क जोरं ॥
किती अंत उरझंत लटकंत[4] भूमै ।
किते घायलं घाव लग्गे सु झूमैं[5] ॥७७५॥

---

१ फाँकैं । २ भुम्मी । ३ सीस । ४ लरकंत । ५ घूमैं ।

भरे योगनी[1] पत्र पीवंत पूरं।
परैं ज्यों मलेच्छं बरैं आय हूरं॥
किलक्कै जु काली हँसैं बार बारं।
करैं भैरवं घोर सोरं अपारं॥७७६॥
भगी साह की सेन देखंत दोई।
कहै बैन कोपं वकं सीस सोई॥
किते भागि जैहो अरे मूढ़ आजं।
जिते[2] वीर चहुवान हम्मीर गाजं॥७७७॥
भ्रम्यो साह संगं तज्यो जंग भारी।
कहै साह उज्जीर सों जो हँकारी॥७७८॥

दोहरा छंद

कहा राव हम्मीर के, सूर बीर बलवान।
सबै[3] सु खाय हमारिए, जंग समै प्रिय प्रान॥७७९॥

छप्पय छंद

कहै साह उज्जीर सुनो आपन मन लाई।
जिते राव के बीर सबै[4] छत्री प्रन[5] पाई॥
लरत भिरत नहिं टरत करत अद्भुत रस सीतो[6]।
करत जंग अनभंग अंग छिन भंग है नीतो[7]॥
नहिं सहत सार ओपन[8] सपन[9] सबै मीर उमराव भर।
किज्जे सु कौन मत तंत अब कहो बुद्धि आपन समर॥७८०॥

---

१ जुग्गनी। २ जिनें चाहुआनं हमीरं सुगानं। ३ सर्वस्व।
४ धर्म। ५ पन। ६ जीते। ७ नित्ते। ८ आपन। ९ सयन।

कहि उजीर[१] कर जोरि सुनो हजरत यह किज्जे।
च्यारि सेन चतुरंग संग नामी कर[२] दिज्जे॥
एक सेन दिवान्न[३] एक बकसी भड़ बंके।
एक गोल मोहि जानि आप एक्कन कर हंके॥
यह भाँति सेन चतुरंग के अनी च्यारि करि जुट्टिए[४]।
हम्मीर राव चहुवान ते फते आप लहि हट्टिए॥७८१॥

दोहरा छंद

करि करि मंत्र उजीर तब, चढ़े संग ले मीर।
च्यारि अनी करि साहि दल, जुरे जंग सब[५] बीर॥७८२॥

त्रिभंगी छंद

करि मंत्र असेसं सूर सु देसं, बंके वेसं सज्जायं।
हय गय चढ़ि वीरं फिरे सु मीरं, धरि धरि धीरं लज्जायं॥
गजराजन सज्जै अग्गों रज्जै, वीरं गज्जै लखि लज्जै।
नीसान[६] फरक्कै धीर धरक्कै, हर हर बक्कै गलगज्जै॥७८३॥
दोउ ओर उमग्गै[७] समर सु रड्डै[८], बढ़ि बढ़ि तड्डै नख खड्डै।
बहु तोपन छुट्टैं वीर अहुट्टैं, फिरि फिरि जुट्टैं बल चड्डैं॥
बाजे बहु बज्जैं जनु घनु गज्जैं, सूर समज्जैं बल रज्जैं।
पद रुथ्थ पतालं अरि उर सालं, उट्टत भालं रण सज्जैं॥७८४॥
छुट्टैं वहु वानं संधि कमानं, अरि उर प्रानं बहु कड्ढैं।
लग्गैं उर सेलं अरि दल पेलं, विग्रह झेलं बल ठड्ढैं॥

---

१ वजीर। २ नर। ३ दीवान। ४ खुट्टिए। ५ फिर।
६ निस्सान। ७ उमड्डैं। ८ डट्टैं।

किरवान दुधारं हय गय पारं, सूर सहारं उर फारं ।
करि जोर कुठारं बहुत करारं, भिरत जुझारं रनभारं ॥७८५॥
गिद्धय पल भष्षैं रत बल चष्षैं, जंबू अष्षैं हिय हर्षैं ।

... ...

बहु पत्र भरावैं मिलि मिलि गावैं, धरि धरि धावैं मन भावैं ।
पल अस्ति चचोरैं बसन निचोरैं, लुथ्थि टटोरैं गुन गावैं ॥७८६॥

दोहरा छंद

यहि विधि दुहुँ दल आहुरे, भिरे[1] दोउ दल एंन ।
रहे अहल चहुवान हू, खान सकल हठि सैन ॥७८७॥
अबदल मीर जु साहि के, परे खेत मैं[2] धाय ।
पकरै राव हमीर का, पकरै[3] अस पति पाय ॥७८८॥
ल्याऊँ गहि हम्मीर को, रीझ दिज्जिए मोहि ।
जितनो हिंदू को वतन, पाऊँ अब कर जोहि ॥७८९॥
बीस सहस अबदल पिले, इत हमीर के बीर ।
आप आप जय स्वामि की, चाहत मंगल धीर ॥७९०॥

छंद रसावल

नीर पिल्ले तवै, बीर अबदुल जबै ।
कहै बैन बाहं, सुनो आप साहं ॥७९१॥
गहूँ राव ल्याऊँ, रणत्थंभ पाऊँ ।
कमानस्सुग्रोवं, गरै डारि जीवं ॥७९२॥

---

1 भिरग, भिरिऊ । 2 पै । 3 पसरै ।

लगं साह पग्गै, उठै कोपि जग्गै।
हजूरं सु बीसं, नमाए सु सीसं ॥७९३॥
गजं साज[1] तीसं, करै जीव रीसं।
उतैं राव कोपे, पिले बीर ओपे ॥७९४॥
उठी बंक मुच्छं, लगी जाय चच्छं।
मनों बीर मग्गै, अकासं सु लग्गै ॥७९५॥
मिले बीर दोऊ, करें जोर सोऊ।
भिरे गज्जि गज्जं, बजे बीर बज्जं ॥७९६॥
तुरंगं तुरंगं, मचै जोर जंगं।
पयद्दं पयद्दं, बकै कोप वद्दं ॥७९७॥
भभक्कंत बानं, उड़ै लग्गि ज्वानं।
लगै तेग सीसं, उभै फांक दीसं ॥७९८॥
लगै जम्म दड्ढं, करै पान गड्ढं।
परी लुत्थि जुत्थं, करी जो अकत्थं ॥७९९॥
करी जूह लोटैं, पबै जानि कोटैं[2]।
तुरंगं धरन्नी, सु लड्ढै बरन्नी ॥८००॥
नचै रुंड[3] बीरं, धरन्नी सरीरं[4]।
सिरं हक्क मारै, धरैं अत्र धारैं ॥८०१॥
उरभ्भंत अंतं, मनों ग्राह तंतं।
गहैं अंत चिल्लो[5], अकासं समिल्लो ॥८०२॥

---

१ सज्ज। २ लुट्टै, कुट्टै। ३ रुद्र। ४ सुधीरं। ५ चिल्ही मिल्ही।

मनों बाल मंडो, उड़ावंत गुड्डी[1] ।
उड़ैं[2] श्रोण छिच्छं, फुँवारे[3]सु मच्छं ॥८०३॥
बहैं श्रोण नद्दं, मना नीर भद्दं ।
झरैं पग्ग हथ्थं, तरब्बूज मथ्थं ॥८०४॥
पलक्की चमच्चो, उठै वीर नच्ची ।
कियो अट्टहासं, सुकालो प्रकासं ॥८०५॥
जहाँ चेत्रपालं, गुहै शंभु मालं ।
भपै गिद्ध बोटी, फटै तासु पोटी ॥८०६॥
षटं सहस सूरं, परे जाय दूरं ।
गजं तीस पारे, पहारं करारे ॥८०७॥
सतं दोय बाजी, परे खेत ताजी ।
तहाँ पद्म सैनं, रहे देखि[4] नैनं ॥८०८॥
तबै सेख सीसं, नवाए सरीसं ।
हमीरं सुरावं, कहै बैन चावं ॥८०९॥
दुहूँ सेन मध्ये, महिम्मा सु वध्ये ।
कहै उच्च वाचं, सुनो राव साचं ॥८१०॥
लखो हथ्थ मेरे, बदे बैन टेरे ।
सुनो साहि बैनं, लखो अप्प नैनं ॥८११॥
खरो मैं जु खूनी, रहे क्यों जमूनी ।
गहो क्यों न अब्बं, कहै बैन तब्बं ॥८१२॥

---

१ उड्डी । २ उठे । ३ फवारे, फुहारे । ४ दिक्ख, पिष्ष ।

यहाँ सेस सीसं, रह्यो मैं जु दीसं।
करो सत्य बाचं, ततो आप साचं ॥८१३॥
तबै पातसाहं, खुरासान नाहं।
करे[1] कोप पिल्लं, तहाँ सेख मिल्लं ॥८१४॥
कहै साह बैनं, सुनो सर्व सैनं[2]।
गहै सेख ल्यावै, इतो हश्म पावै ॥८१५॥
जु बारा हजारं, मनं[3]सब्ब भारं।
नोबति निसानं, अरु तेग मानं ॥८१६॥
सुने बैन ऐसे, खुरासान रैसे।
हजारं सतीसं, निवाए[4] सु सीसं ॥८१७॥
सदक्कीज बानं, पिले सेख पानं।
तबै सेख धाए, राव कों सीस नाए ॥८१८॥

दोहरा छंद

करि सलाम हम्मीर कों, सेख लई बड़ बग्ग।
दुहूँ[5] सेन देखत[6] नयन, रिस करि कढ्ढे[7] खग्ग ॥८१९॥

चैापाई छंद

कहे साहि सुनि सदकी बैनं।
यह कुट्टन[8] कों गहो सु ऐनं॥
जीवत पकरि याहि अब लीजै[9]।
मनसब द्वादस सहस करीजै[10] ॥८२०॥

---

१ करी कुप्पि। २ एनं। ३ मनां। ४ नमाए। ५ दोऊ। ६ दिष्षत, पिक्खत। ७ काढ़े, कढ्ढे। ८ कुट्टम। ९ लिज्जिय। १० करिज्जिय, जुकिज्जिय।

मद्दकि[1] संग मीर खुरसानी।
तीस सहस चढ़ि चले अमानी॥
गहन सेख महिमा के काजै।
कुप्पिय[2] मीर खेत चढ़ि बाजै॥८२१॥
इतै सुसेख राव पद बंदे।
गहै तेग मन मांहि अनंदे॥
इतै सेख सदकी उत आए।
आप आप जय सद्द सुनाए॥८२२॥
कहै सदकि[3] सुनि साह सुजानं।
ठठा भषर वसि करिए पानं॥
कहा सेख हम्मीर सु रावं।
उठे युद्ध कों करि जिय चावं॥८२३॥

छप्पय छंद

जुटे वीर दुहु जंग अंग अनभंग महाबल।
चढ़े जान अम्मान बढ़े निस्सान[4] बरद्दल।
करि कमान करि पान कान लों करिखह रष्षे।
धरि नराच गुन राखि धाव करि बेगि बरष्षे॥
निज संग बीर सत पंच जुत सेख भेखरौ यह धरिव।
उत खुरासान षट सहस लै सदकी सद हांकी करिव॥८२४॥
तेग बेग बहु कढ़ी मनो पावक्क लपट्टी।
करी बाज रन जुट्ट कटे सिर पाव डपट्टी॥

---

१ सद्की। २ कोपे। ३ सदुक्की सहस। ४ नीसान।

परै धरनि धर नचै उदर कटि अंत भभक्कै ।
चली रक्त धर धार लुत्थ परि लुत्थ धधक्कै ॥
षट सहस खिसे पुरसान दल लिय निसान बानै सुबर ।
किए नजर राव हम्मीर के फवी फते महिमा समर ॥८२५॥
आइ सेख सिर नाय राव कू बचन सुनाए ।
धनि छत्री चहुवान सरन पन जग जस छाए ॥
तेज राज धन धाम तात तिय हठ नहिं छंडै ।
राखि धर्म्म द्रढ़ सत्य कीर्ति जस जुग जुग मंडै ॥
भरि नीर नैन महिमा कहै अब जननी कब जन्म दे ।
जब मिलो राव हम्मीर तुम बहुरि समैं ह्वैहै कबै ॥८२६॥
कहै राव हम्मीर धीर नहि हीन उचारो ।
सूर न करैं सनेह देह छिन भंग विचारो ॥
बिछुरन मिलन सँजोग आदि ऐसी चलि आई ।
ज्यों जीवन[1] ज्यों मरन सकल[2] बेदन यह गाई ॥
कीजे न भर्म अनभंग चित मिलैं सूर के लोक सब ।
हम तुम जु साह बहुरों[3] तिया ह्वैहि एक[4] तन तजि सुअब ॥८२७॥
तजिय स्वारथ लोभ मोह काहू नहिं करिए ।
देह धरे पर वान[5] स्वामि को कारज करिए ॥
को इतसौं लै जात कहा उत सौं लै आयौ ।
रहै अमर कीरत्ति पाप नरदेह सु गायो ॥

---

१ ज़ामन । २ चऊ । ३ गवरू । ४ इक्क । ५ मान ।

सुनि सेख देखि थिर नाहिं कछु तन मिट्टी मिलि जाइए ।
का सोच मरन जीवन तणो यह लाभ सुजस सौं पाइए ॥८२८॥
सुनि हमीर के वचन साह पर सनमुख धाए ।
मीर गाभरू बीर आनि तिन[1] सीस नवाए ॥
अलादीन पतिसाह इते सिर ऊपरि राजै ।
तुम सिर राव हमीर स्वामि आपन कुल लाजै ॥
नन तजौं नोन की सरत दोउ यह तन तिल तिल खंडिए ।
मिलिए जु भिस्त[2] में जाय अब धर्म न अपनौ छंडिए ॥८२९॥
हँसि अलावदी साह शेख कौं बचन सुनाए ।
दिली छाड़ि करि सीस बहुरि मुझको नहिं नाए ॥
मिलो मुझे तजि रोस हुरम मैं तुमको दीनी ।
अरु गौरखपुर देश देंहु तुम कौं सत चीन्ही[3] ॥
मुसकाय साहि महिमा कहै बचन यादि वे किज्जिए ।
जननी न जन्म फिर आनि भुव जबै मिलन गन लिज्जिए॥८३०॥

दोहरा छंद

जब[4] जननी जनमै बहुरि, धरूँ देह कहुँ आनि ।
तऊ न तजौं हमीर सँग, सत्य बचन मम जानि ॥८३१॥
तब सु राव हम्मीर सुनि, कीनी मदति सु सेख ।
हजरति महिमा साह को, बात लगावत देखि ॥८३२॥
कह हमीर यह बचन पर, गही साह सौं तेग[5] ।
लोभ न करिए जीव का, गहौ[6] साह सों बेग ॥८३३॥

---

१ रिस । २ विहस्त । ३ चीनी । ४ अब । ५ तेक । ६ सो रहै हमारी टेक ।

चौपाई छंद

कहै मीर गभरू ये बातैं ।
गहै[1] सार नहिं करिए घातैं ॥
हुकम धनी के कौ प्रतिपालौ ।
आई अदलि सीस पर चालौ ॥८३४॥
सुनि गभरू के बचन सुभाए ।
महिमा फूल खेत में आए ॥
सनमुख सार सम्हाय सु बढ्ढै ।
माया मोह त्यागि खग कढ्ढै ॥८३५॥

दोहरा छंद

दोऊ बंधु रिसाय कैं, लई बाग इमि संग ।
उतरि खेत में मिलि उभै, कीनौं हरष उमंग ॥८३६॥
मीर गाभरू पाँय परि, हुकुम माँगि कर जोरि ।
स्वामि काज तन खंडिए, लग्गौ[2] तनक न खोरि ॥८३७॥

हनूफाल छंद

मिले बंधु दोउ धाय । बहु हरष कीन[3] सुभाय ॥
अब स्वामि धर्म सुधारि । दोउ उठे बीर हँकारि ॥८३८॥
असमान[4] लग्गिय सीस । मनौं उभै काल सदीस ॥
इत कोप महिमा कीन्ह । हम्मीर नौन सु चीन्ह ॥८३९॥
उत मीर गभरू आय । मिलि सेख के परि पाँय ॥

---

१ गहो सार नर कौ रच यातें । २ लपकत कबहूँ पोरि । ३ कियउ । ४ असमान सीस सुलग्ग ।

कर तेग बेग समाहि। रहि दुहूँ सेन सचाहि ॥८४०॥
कम्मान लीन सु हत्थ। जनु[1] सार कार सुपत्थ॥
धरि स्वामि[2] काज समत्थ। दोउ[3] उभै जुद्ध सपत्थ॥८४१॥
दुहुँ द्वंद जुद्ध सुकीन। मनु जुटे मल्ल नवीन॥
तरवारि बज्जिय ताय। मनु लगी ग्रीषम लाय॥८४२॥
कटि चरण सीसरु हत्थ। परि लुत्थ जुत्थ सु तत्थ॥
घमसान थान सु धीर। धर धरनि खेलत बीर॥८४३॥
गजराज लुट्टत भुम्मि। बहु तुरँग परत सु झुम्मि॥
बिय वीर बज्जिय सार। तरवारि बरसहु धार॥८४४॥
दोउ भ्रात स्वामि सकाम। जग में किए अति नाम॥
दोहुँ बीर देखत हूर। चढ़ि गए मुख अति नूर॥
दल दोय दिष्षत बीर। पहुँचे विहस्त गहीर॥८४५॥

दोहरा छंद

तिल तिल भे अँग दुहुन के, हनै बाजि गजराज।
हजरत राव हमीर के, सबै सँवारे काज॥८४६॥
मुसलमान हिंदवान[4] को, चले सेख सिर नाय।
चढ़ि विमान दोऊ तहाँ, भिस्तहि पहुँचे जाय॥८४७॥

छप्पय छंद

कहै साह मुख बचन[5] सुनौ हम्मीर महाबल।
अब न गहो तुम सार फिरैं हम सकल दिली दल॥

---

१ वर मार धार सुपत्थ। २ धर्म्म। ३ मनु। ४ हितवान।
५ वच्च, वैन।

तुम्हैं माफ तकसीर राज रणथंभ करो थिर।
हम तुम बीच कुरान मुहिम नहिं करो दिलीसुर ॥
परगनें पाँच दीनें अवर रणतभँवर भुगतो सदा।
जब लग सुराज हमरौ रहै तुम सु राज राजौ तदा ॥८४८॥

चौपाई छंद

कहै राव हम्मीर सु बानी।
सुनि दिल्लोस सत्य जिय जानी ॥
जाको अदलि होय किमि मिट्टै।
नर तैं होनहार किमि घट्टै ॥ ८४९ ॥
तुम्हरौ दयो राज किन पायौ।
तुम्ह को राज कहो किन छायो ॥
बेर बेर कह मुखै[1] उचारौ।
कोटि स्यानपन क्यों न विचारौ ॥ ८५० ॥
कीरति अमर अमर नहिं कोई।
दुर्जोधन दसकंध सु जोई ॥
काको गढ़ काकी यह दिल्ली।
हरि की दई हमैं तुम मिल्ली ॥ ८५१ ॥
हम तुम अंस एक उपजाए।
आदि पदम रिषि अंग उपाए ॥
देव दोष उर धर भए न्यारे।
हम हिंदू तुम यवन हँकारे ॥ ८५२ ॥

---

१ मुक्ख।

तजिए भोग भूमि के सबही ।
चलिए सुरपुर बसिए अबही ॥
संग हमारो पहुँच्यौ जाई ।
हम तुम रहै सबहिं पहुँचाई ॥ ८५३ ॥
गहो हथ्थ्यार राज सब छंडौ ।
राषो जस तन षंडि विहंडौ ॥
अबै चालि सुरपुर सुष मंडौ ।
मृत्यु लोक के भोग सु छंडौ ॥ ८५४ ॥

छंद त्रोटक

यह बात कही चहुवान तबै ।
सुनि साह सबै भर पेलि जबै ॥
करि साज सबै रण मंडि महा ।
तिन भारथ पारथ जुद्ध सुहा ॥ ८५५ ॥
दल संग चढ़े सब सूर असी ।
सब तोप सु बान कमान कसी ॥
गजराज अनेक बनाय घनै ।
मनौ पावस बद्दल मेघ तनै ॥ ८५६ ॥
हय कंद अमंद सु पौन मनौ ।
बहु दामनि सार चमंकि भनौ ॥
घन गौर[1] सदायन देखतयं ।
ध्वज वैरष मंडल लूरतयं ॥ ८५७ ॥

---

१ घन घोर ।

बिरदावत वृंद कविंद घनै ।
मनौ चत्रक मोर अनंद बनै ॥
बगपंति सुदंति अनंत रजे ।
धुरवा किर सुंड छुने भरजे ॥ ८५८ ॥
वह[1] धार अपार जुधार वही ।
घन घोर सु नौवति नाद वही[2] ॥
कर सोर समोर नकीब चलै ।
यहि भाँति दोउ दिसि[3] वीर[4] मिलै ॥ ८५९ ॥
करिए हंकार सुवीर चलै ।
... ...॥
कहि मीर सिकंदर नेम कियं ।
सिर नाय सुभाय हुकुम्म लियं ॥ ८६० ॥
पह लैं पुर जाय सु वीर भगं ।
रणथंभ कहा हजरत्ति अगं ॥
तुम सेर करयो वह आप जथा ।
अब देखहु मोर सुहाथ जथा ॥ ८६१ ॥
सु जमीति षधार लई सबही ।
अरु मीर सिकंदर आय[5] सही ॥
करि कोप सिकंदर मीर चढ़े ।
तब राव हमीर के भील कढ़े ॥ ८६२ ॥

---

१ वह सार अपार सु धार हुई । २ जुई । ३ दल । ४ बीर ।
५ पठई ।

तब भोज कही अब मोहि कहौ।
इतने अब हत्थ हमार लहौ ॥
तब राव कही रणथम्भ अगै।
दुइ जैत अगैं सिर भील तगै ॥ ८६३ ॥
अर जैत सरन्नि सुराखि तबै।
करि कौन करै तुम्हरी जु अबै ।,
तुम संग रतन्न चीतोर गढ़ं।
चढ़ि जाहु हमार जु काज बढ़ं ॥ ८६४ ॥
सुनि भोज इसे कहि बैन तबै।
यह सीस तुम्हार निमित्त[1] अबै ॥
रणथंभहि हेत जु सीस दिवै।
अब और कहा बिन राव जिवै ॥ ८६५ ॥
यह औसर फेरि बनै कबही।
हजरत्ति हमीर मिले जबही ॥
कहि बत्त इती जु सलाम करी।
अपनी सब लीन जमीन खरी ॥ ८६६ ॥
सब भील कसे हथियार जबै।
निकसे कढ़ि भोज अमान तबै ॥
कमठा कर तीर सम्हार उठे।
उत मीर सिकंदर आय जुटे[2] ॥ ८६७ ॥

---

१ निभंत। २ उटे।

बजि घोर निसान प्रमान[1] मिले ।
दल कोप करे बहु तोप चले ॥
घमसान जुबान कियो तबहीं ।
दुहु सैन सुऐन बनैं जबहीं ॥ ८६८ ॥
गजराज हरौल करे वलयं ।
उत सार अपार कढ़े दलयं ॥
ससि भील अनी सुघनी हलकौ ।
कसि गातिय[2] कोप कियो बलकैा ॥ ८६९ ॥
कमठा कर धार अपार बलं ।
तइ भोज मिल्यो तहँ साह दलं ॥
नट कूदत जानि सु ढोल सुरं ।
बहै तीर अमीर सुजानि छुरं ॥ ८७० ॥
करि कोप तबै गजदंत कढ़े ।
मुरि मूरिय धूरि उपारि बढ़े ॥
सब भीलन मत्त सुकोप कियं ।
जनु भाल बली मुख लंक लियं ॥ ८७१ ॥
जनु मार अपार कटार चलैं ।
बहु मीर अमीर रु भील मिलैं ॥
हज्जरत्ति सराहत भोज बलं ।
जनु मानव रिच्छ भिरत्त दलं ॥ ८७२ ॥

---

१ अमान । २ कागति ।

दोउ भोज सिकंदर भील जुटे ।
मुख बानिय मीर अमीर रटे ॥
जब भोज कहै करि वार तुहीं ।
कहै मीर सिकंदर बूढ़ तुहीं ॥ ८७३ ॥
अब तोपर वार कहा करिए ।
सब लोक अलोक महा भरिए ॥
तब भोज सकोप कियो रण में ।
करि कोप कटार दियो तन में ॥ ८७४ ॥
तन कंगल भेदि धरन्नि परयो ।
किरबान चलाय समीर हरयो ॥
सिर भोज परयो धरनी[1] तल में ।
धर धावत[2] रुंड लरै बल में ॥ ८७५ ॥
उत मीर सिकंदर भूमि परे[3] ।
बर हूर[4] सुदूर सुआनि परे ॥
परि खेत सधार अपार सबै ।
बिन सीस पराक्रम भोज अबै ॥ ८७६ ॥
भजि साह अनी तजि खेत तबै ।
परि भोज समाज सबीर सबै ॥
कसमीर अमीर सहस्त्र पचो ।
सुमिली[5] धर धार सचो सु अचो ॥८७७॥

---

१ धरनिथ्थल । २ भुम्मि लरै चल में । ३ गिरे । ४ हूरन ।
५ उलटी भरै सेन दिलीस बची ।

तहाँ भोज ससाथि हजार भले ।
वरि बाल सबै सुर लोक चले ॥८७८॥

दोहरा छंद

परे भोज सँग भील भर, सहस दोइ इक ठौर ।
सहस पचीस कसमीर के, अरषँधार भर मौर[1] ॥८७६॥
सहस तीस पंधार के, और सिकंदर मीर ।
अली सयद के संग भट, परे मीर दस भीर ॥८८०॥
भजी फौज पतसाह की, विकल सकल उमराव ।
दोय सहस भट भोज संग, रहे खेत करि चाव ॥८८१॥

चौपाई छंद

राव हमीर भोज ढिग आए ।
देखि[2] सु भोज नैन जल छाए ॥
तुम सब अमर भए कलि माहीं ।
स्वामि काम सब देह सराही ॥८८२॥
जो न सिकंदर साह जु आए ।
राव हमीर के सनमुख धाए ॥
देखि साह आपन दल भज्जै ।
हजरति देखि हमीरह लज्जै ॥८८३॥
राव हमीर खेत महिँ ठाढ़े ।
हजरति अंग कोप अति बाढ़े ॥

---

१ और । २ देख भोज भरि दृग जल छाए ।

कहै साह तब कोप सु बैनं ।
फिरे सकल नीचे कर नैनं ॥८८४॥
सर्वसु भूमि भोग कर नीके ।
जंग समय लालच कर जीके ॥
भगे जात जीवत मोहि अबहीं ।
गई बात[1] बीरन की सबहीं ॥८८५॥
सुन ये बैन वीर खिसयाने ।
राव हमीर सुद्ध हिय ठाने ॥
जैन . सिकंदर साह अमानौ ।
अरु षंधार भीरु सब जानौ ॥८८६॥
यह हम्मीर राव चहुआनं ।
जुरे जुद्ध मनु काल समानं ॥
तुपक तोप चद्दर सब दग्गिय ।
कर कृपान चहुवान सु जग्गिय ॥८८७॥

भुजंगप्रयात छंद

परे दोय हज्जार भीलं समत्थं ।
तहाँ च्यारि ओरं गिरे खेत सत्थं ॥
परे कासमीरं सहस्त्रं पचीसं ।
अली सेर मीरं परे संग दीसं ॥८८८॥
तबै साह कोपं किए बैन रीसं ।
फिरे वीर लज्जा समेतं सुदीसं ॥

---

१ बूड़ि ।

तबै राव हम्मीर कोपे सुजानं ।
चले[1] संग चहुवान बलवान रानं ।।८८९।।
लिए सेन षंधार दो लक्ख जामी ।
जबै जैन साहं सिकंदर सु नामी ।।
इतै राव हम्मीर कम्मान लीनी ।
मनौं पत्थ भारत्थ सारत्थ कीनी ।।८९०।।
लगैं तीर अंगं हुवै पार गज्जैं ।
परैं पील भुम्मी[2] सु घुम्मैं गरज्जैं ।।
कहूँ पक्खरं बाजि फूटैं सरीरं ।
छुटै प्राणवानं सु लागंत तीरं ।।८९१।।
जुरे जंग मीरं अमीरं सु चौजं ।
इतै राव हम्मीर उत साह फौजं ।।
चढ़े[3] राव के रावतं जो अमानै ।
बनै कंगलं अंग जंगं सु ठानै ।।८९२।।
करैं रंग के अंग बानै अनेकं ।
घनै केसरं साज लीनैं सु तेकं ।।
किते बीर तोरा तवल्लं बनाए ।
घनै नेत बंधं गजं गाह लाए ।।८९३।।
किते मौर बंधं सजे केसरानं ।
किते वीर बाँके चढ़े चाहुवानं ।।

१ चढ़े । २ भूमै सु चक्कार भज्जै । ३ बढ़े ।

पढ़ैं पाहि[1] बंदी जनं वृंद भारे।
मनौ राति जोरंत टूटंत तारे ॥ ८६४ ॥
उतै साह कीनै घनै गज्ज अग्गैं।
मनौ पाय चल्लै पहारं सु मग्गैं ॥
तिन्हैं उप्परै साह के बीर धाए।
गही तेग हथ्थं उरं कोप छाए ॥ ८६५ ॥
इतै राव चहुवान के बीर कोपे।
मनो आजही साह के बीर लोपे ॥
गजै सो हमीरं लखें खेत राजैं।
सबै सूर बीरं निसानं सु बाजैं ॥ ८६६ ॥
किते चाहुवानं पिलै डील पीलं।
उठावंत मारंत पारंत डीलं ॥
कहूँ सुंडि पै तेग बाहंत ऐसी।
मनो रंभ थंभं कढै तेग जैसी ॥ ८६७ ॥
कटैं दंत मातंग भाजंत[2] जेते।
गहैं पुच्छ सुड्डं पटक्कंत केते ॥
परैं पील पब्बय मनौ खेत भारी।
बहैं रक्त घावं मनो घाव कारी ॥ ८६८ ॥
तिहाँ काल कविराज उप्पम विचारी।
बहैं स्याम पब्बै सु गेरू पनारी ॥

१ लाहि। २ मज्जंत।

किते बाजि राजं पटक्कंत भूमैं।
भए अंग भंगं खरे घाव घूमैं ॥ ८९९ ॥
कढ़ो तेग बेगं लपट्टं सु जानौ।
मनौ ग्रीषमं लाय लग्गी सुमानौ ॥
जुटे बीस बीरं गहीरं सु गज्जैं।
भजे कायरं[1] खेत छंडे सु लज्जैं ॥ ९०० ॥
कटे सीस बाहू कहूँ पाव ऐसे।
बहैं तेग बेगं मनौ डार जैसैं ॥
लगै कंध ग्रीवा तबै सीस टूटै[2]।
परैं सीस धरनी तबै रुंड भूटै[3] ॥ ९०१ ॥
घने सीस तर्बूज से भुम्मि डारैं।
लरैं रुंड खेतं सिरं हक्क[4] मारैं ॥
बहैं बान किरवान[5] बज्जन्त सारैं।
मनों काठ काटंत[6] कट्टे कुहारैं ॥ ९०२ ॥
बहैं सील अंगं परैं पार होई।
मनौ रुंड मैं नाग लपटंत सोई ॥
कटारी लगैं अंग दीसंत पारं।
मनौ नारि मुग्धा कढ्यौ पानि वारं ॥ ९०३ ॥
छुरी वार सूरं करैं जोर ऐसैं।
मनो सर्पनी पुच्छ दीखंत जैसैं ॥

---

१ कातरं। २ टुट्टै। ३ झुट्टै। ४ हांक। ५ कम्मान।
६ कट्ट, कट्टंत।

लगै जोर सों यों विषाणं जवानं ।
हुवै अंग पारं जुटै जोर वानं ॥ ६०४ ॥
भए लष्थ बथ्थं दुहूँ सेन ऐसें ।
मनो यौं अषारे भिरं मल्ल जैमें ॥
पछारैं उखारैं भुजा सीस सूरं ।
उछारैं[1] हँकारैं उठै बीर नूरं ॥ ६०५ ॥
मची मास मेदं धरा कीच भारी ।
चली भ्रुट्टि खेतं नदी मैं[2] अकारी ॥
बनैं कूल पीलं सुढीलं सु बज्जी ।
बहै बीचि[3] लोहू जलं धार गज्जी ॥ ६०६ ॥
रथं चक्र आवर्त्त सौ भौंर मानों ।
घनं षंस बेला कुलं रूप मानौं ॥
नरौ ग्राह पावं करं सर्प जैसे ।
बनी अंगुरी मीन भींगा सु तैसे ॥ ६०७ ॥
बहैं सीस इंदीवरं जानि फूलै[4] ।
खुले नैन यौ चंचरीकं सु भूलै ॥
सिवालं सु केसं सुवेसं विराजैं ।
बनै घाट बासों खरे सूर गाजैं ॥ ६०८ ॥
भरैं जुग्गनी खप्परं सूर लोही ।
मनौं ग्राम बामा पनीहार सोही ॥

---

१ उछल्लै, हकल्लै । २ वह । ३ बिच्चि । ४ फुल्लै ।

करै कलि भैरव हरं संग काली।
मनौं न्हात बैसाष कार्त्तिक्क वाली ॥ ९०९ ॥
इसे घाट ओघाट[1] किन्ने हमीरं।
डरैं कायरं[2] साह के मीर पीरं ॥
भजी साह सैना सबै लाज डारी।
भिरे खेत चहुवान गज्जंत भारी ॥ ९१० ॥
किते गिद्ध जंबू करालं सु चिल्ली।
वगं[3] हंस केते विहंगं सु मिल्ली ॥
परे खेत साहं सिकंदर सु नामी।
सवा लक्ख खंधार के मीर बामी ॥ ९११ ॥
गिरे खेत हथ्थी सतं पैन ऐसे।
मनौ पर्वतं[4] अंग दीखंत जैसे ॥
कसे साठि[5] हौदा परे खेत माहीं।
जरावं जरं कंचनं के सुमाही ॥९१२॥
परे डंबरं सौ कई गज्जराजं।
कई प्राण हीनं कई मो[6] समाजं ॥
परे सत्त पंचं निसानन्न वारे।
किते गज्जराजं परे खेत भारे ॥९१३॥
सवा लक्ख वाजी परे जे अमानं।
परे खेत साहो सिकंदर सुजानं ॥

---

१ ओघट्ट। २ कातरं। ३ वकं। ४ पव्वयं। ५ साठ
६ मोजमाजं।

तिनै साह लक्खं षँधारं सवायं ।
परे एक लक्खं दिलीसं सुपायं ॥६१४॥
इदं इक्क मीरं परे खेत नामी ।
कहूँ नाम ताके परे खेत वामी ॥
परे दूसरे मीर सिर खान भारी ।
रहे खेत महरम्म खानं सुधारी ॥६१५॥
परे जौमजादेन से मीर नामी ।
मोहोबत मुदफ्फर परे इक्क ठामी ॥
परे नूर मीरं अफरैस धीरं ।
बलो इक्क निज्जाम दीनं सु पीरं ॥६१६॥
परे मीर एते दुहूँ खेत सूरं ।
वहैं नीर ज्यों रत्त वाहंत कूरं[1] ॥
नची जुग्गनी और भैरव सु नच्चैं ।
भखैं गिद्ध आमिष्ष जंबू सु रच्चैं ॥६१७॥
थके सूर रथ्थं सु जामं सवायं ।
महावीर घायं स घूमंत तायं ॥
बरैं अच्छरी सूर[2] बीरं सु अच्छे ।
खुले मोक्ष[3] द्वारं प्रवेसंत गच्छे ॥६१८॥
भयो मंडलं कुंडलं भान नद्दं ।
कढ़े सूर वीरं सु धीरं उपद्दं ॥

---

१ सूरं, चूरं । २ आय । ३ मोच्छि ।

महा रौद्र भौ खेत देखंत जानौ।
किये अद्भुतं देव सो जुद्ध मानौ[1] ॥९१९॥
परे खेत खंधार मीरं सु राते।
इकं लक्ख हज्जार पंचास जाते॥
इतै सूर हम्मीर के सहस चारं।
सु तौ वीर धीरं खुले मोच्छ द्वारं॥९२०॥

दोहरा छंद

तब हमीर हर ध्यान करि, हर हर हर उच्चारि।
गज निज सनमुख[2] पेलि कैं, जुरे[3] साह सों रारि॥९२१॥

त्रोटक छंद

गजराज हमीर सु पेलि वरं।
मुख तैं उचरंत सु भाव हरं॥
किरवान[4] कढ़ो बलवान हथं।
सनमुक्ख सु साहि सु बोलि[5] जथं॥९२२॥
सुनिए सु अलावदि बैन अयं।
करि द्वंद सु उद्ध सु जुद्ध धयं॥
सब सेन कहा करिहै सु सुधं।
हम आपन[6] इक्क[7] करैं सु जुधं॥९२३॥
दुहुँ ओर उछाह अथाह सजे।
हजरत्ति सु कोप अकथ्थ[8] रजे॥

---

१ जानों। २ सम्मुख पिल्लि कैं। ३ जुरिग, जुरउ। ४ कम्मान चढ़ी। ५ बुल्लि गथं। ६ अप्पन। ७ एक। ८ अगत्थ।

सनमुक्ख हमीर सु आय[1] जुटे ।
सब सत्थ जथारथ बेग[2] हटे ॥९२४॥
तिहिं खेत[3] खरे[4] चहुवान नरं ।
पतिसाह सबै दल भज्जि[5] भरं ॥
रहि मीर उजीर कछूक तबै ।
चहुवानन के दल देखि जबै ॥९२५॥
पतिसाह कही यह कौन बनी ।
सब सैन बड़ी चहुवान तनी ॥
तब मंत्र वजीर सु एमि कह्या ।
तुम मित्र सदा गुन जानि लह्यो ॥९२६॥
अब विग्रह छाड़ि सु संधि करा ।
चहुवानन सों हित जानि डरो ॥
अपराध हमैं सब दूरि करौ ।
तुम होहु अभै हम कूच धरौ ॥९२७॥
नृप सों चर जाय कही तबहों[6] ।
सुनि राव यहै मुख बत्त कहो ॥
अब खेत चढ़े कछु संधि नहीं ।
यह बत्त हमारि सुजानि सही ॥९२८॥
रिपु तैं विनती सुइ कातरता ।
अब वृत्त कहै छल चातुरता ॥

---

१ आनि । २ रेख, देख । ३ अत्त, अत्थ, अर्थ ४ अरे
५ भाजि । ६ अबहीं ।

अब जाहु यहाँ हम सेन सजी।
बिन साह को जुद्ध करंत लजी ॥६२६॥

वचनिका

अब राव हम्मीर दूत को नीति सहित उत्तर दियो अरु युद्ध को उच्छाह कियो आपणां उमरावों सौं कही आयुध[1] छतीस सों च्यारि आवधां सूं युद्ध कीजे अर जग मैं अमर जस लीजै॥ तोप, बाण, चादरि, हथनावि, जंबूर, बंदूक, तमंचा, कमान, सेल इन नै त्यागौ। अरु आयुध चार लीजै। तरवारि, छुरी, कटारी, विषाण, मल्ल युद्ध करि हजरति नै हाथ दिखाश्रो तौ सायुज्य मुक्ति पावो॥ पातसाह की जान बखसीस करो और अप्छरी बरौ यह हम्मीर की आज्ञा माथै धरि राव हम्मीर के उमराव केसरिया साज बनाय अरू सेहरा बाँधि पातसाह की फौज परि हाँकौ[2] कियो॥

त्रोटक छंद

कछु जंत्र न तोप न कंत[3] नहीं।
तजि चापन चक्रन बान जिहीं॥
किरवान[4] लई करि बाजि चढ़े।
चहुवान अमान सुखेत चढ़े॥६३०॥
उत मीर बजीर रू साहि निजं।
करि कोप तबै पतिसाह सजं॥

१ आवुध। २ हल्लौ। ३ ककंत। ४ कम्मान।

तरवारि अपार दुधार बहै।
सब साहि सु सैन समूह दहै ॥६३१॥
कटि ग्रीव भुजा धर सों विफरे[1]।
मनु काटि करे रस कृत्त हरे॥
उड़ि मश्थ परे धर रुंड उठै।
चहुवान धरासह धार उठै ॥६३२॥
सिर मारत हाक परे धर मैं।
धर जुज्झत जुद्ध करै अरमैं॥
कर जोर कटार सु अंग बहैं।
बहु खंजर पंजर देह दहैं ॥६३३॥
बहु रंचक[2] मुष्ठ कबश्थ परैं[3]।
मल जुद्ध समुद्ध सुबीर करैं॥
पचरंग अनग्गिय खेत बन्यौ।
बकसी[4] तब साह सों बैन भन्यौ ॥६३४॥
भयभीत सु साह की फौज भगी।
घमसान मसान सु ज्योति जगी॥
परियो बकसी लखि नैन तबै।
उलटो गज कीन सु साह जबै ॥६३५॥
इक संग उजीर[5] न और नरं।
फिरि रोकिय[6] साह अनंत भरं॥

१ बिहरै। २ रंजक। ३ भरै। ४ बकसी नृप साह कौ आप हन्यौ। ५ वजीर। ६ रुक्किय।

चहुवान धरम्म सु जानि कहै।
यह मारत साहि सु पाप अहै ॥६३६॥
अभिषेक लिलाट कियो इन कै।
महि ईस कहावत है तिन कै ॥
धरि अग्र सु साह को पील जबै।
जहँ राव हमीर सु लाए पगै ॥६३७॥
अब साहि सु राव कही तबहीं।
तुम जाहु दिल्ला न डरो अबहीं ॥
लखि साह को लोग मुरक्कि चल्यौ।
नृप आप हमीर सु खेत झिल्यौ ॥६३८॥

वचनिका

राव हम्मीर का उमरावाँ तरवारि कटारियाँ सों जुद्ध कियो पातसाह का अमीर उमरावाँ सूं मल्ल जुद्ध करयो तदि पातसाह की फौज विकल होकर पातस्याह ते छोड़ छोड़ भागी हम्मीर की रावताँ पातस्याह ने हाथी सुद्धां घेरि ल्याया ॥ हम्मीर कै आगे ल्या खड़ो करयो। राव हम्मीर पातस्याह ने देखि आपणां रावतां सों कही यानै छोड़ देओ यह नै पृथ्वोस कहैं छैं या अदंड छै ॥ यह सुनि पातिसाह ने छोड़ दियो[1]। पातसाह ने उह की फौज मैं पहुँचाय दियो। पतिसाह वहाँ से खेत छोड़ कूँच कियो[2] ॥

---

१ दीधो। २ कीधो।

दोहरा छंद

छाड़ि खेत पतसाह तब, परे[1] कोस द्वै जाय।
हसम सकल चहुवान ने, लीनो[2] तबै छिनाय ॥ ९३९ ॥
लिए साह नीसान तब, बाना जिते बनाय।
और सम्हारि सु खेत को, घायल सोधि उठाय ॥९४०॥
सब के जतन कराय कै, देस काल सम आय।
राव जीति गढ़ को चले, हर्ष न हृदय समाय ॥९४१॥
बिन जाने नृप हर्ष में, गए भूल[3] यह बात।
साह निसान सु अग्र[4] करि, चले भवन हर्षात ॥९४२॥

पद्धरी छंद

भगि साह सेन जुत उलट आय।
तजि विविध भाँति बाना[5] जु ताहि ॥
सब साह हसम लीनी छिनाय।
नृप सकल खेत सोधो कराय ॥९४३॥
बजि दुंदुभि जय जय धुनि सु आय।
सब घायल नृप लीने उठाय[6] ॥
करि अग्ग[7] साह नीसान भुल्लि।
लखि भूप हसम हर कह्यो फुल्लि ॥९४४॥
सब राज लोक तिय जिती जानि।
सब सार परस्पर हरी[8] आनि[9] ॥

---

१ परिय। २ लिओ। ३ भुल्लि। ४ अग्ग। ५ नाना।
६ उचाय। ७ अग्र। ८ हनी। ९ पानि।

चहुवान दुग्ग किन्नो प्रवेस ।
यह सुनिय राव तिय मरन सेस ॥६४५॥
चहुवान आनि देख्यौ सु गेह ।
शिव वचन यादि कीनो सु येह ॥
नृप सकल संग को सीख दोन ।
रावत्त राण मंत्री प्रवीन ॥६४६॥
तुम जाहु जहाँ रतनेस आय ।
किज्जे न सोच नृपता बनाय ॥
चहुवान राय हम्मीर आय ।
हर मँदिर महँ प्रविसंत जाय ॥६४७॥
करि पूजन भत्र[1] गणपति मनाय ।
बहु धूप दीप आरति बनाय ॥
हो गिरजा गणपति सु मम देव ।
तुम जानत हो मम सकल भेव ॥६४८॥
अपवर्ग देहु तुम नाथ सिद्धि ।
तन छत्र धर्म्म दीजे[2] प्रसिद्धि ॥
करि ध्यान शंभु निज सीस हत्थ[3] ।
नृप तारि कमल ज्यों किय अकत्थ ॥६४९॥
यह सुनिय साह निज श्रवण बात ।
चलि हर मँदिर कों साह आत ॥

---

१ बहु । २ दिज्जिय । ३ मत्थ ।

जलधार नैन लखि राव कर्म्म ।
कहि साहि मोहि दीनो न मर्म ॥६५०॥
कछु दियो हमें उपदेश नाहिं ।
तुम चले आप बैकुंठ माहिं ॥
तुम अभय बाँह दीनी जु शेष ।
जुग जुग नाम राष्यौ विशेष ॥६५१॥
अरु महा दानि तुम भए भूप ।
इच्छा सदान दीने अनूप ॥
जगदेव मोरध्वज तैं विशेष ।
जस लयो लोक तुम रक्खि सेख ॥६५२॥

वचनिका

सो राव हम्मीर ब्यौरा सुन्यो और शिव के वचन यादि करयो। और यह निश्चय जानि कि वर्ष चौदह पूरे भए गढ़ की अवध पूर्णाई हुई तातैं यह शरीर रक्खनो उपहास्य है और छिन भंग शरीर को राखनो आछ्यो नहीं। यह विचारि शिव के मंदिर गए और आप एक सेवग कनै राखि शिव को षोड़स प्रकार पूजन करयौ और यह वर्दान माँग्यौ कि हे शिव तुम ईश्वर हो। सेवक हृदय के जानन-हारे हो और सबके प्रेरक हो तातैं हमारी यह प्रार्थना है मुक्ति दीजे तो सायुज्य दीजै। जन्म जन्म विषैं छत्री-कुल मैं जन्म पाऊँ यह कहि कैं खग्ग आप हाथ ले कै सीस

उतारयो शिव पिंडी पै चढ़ाय दियो तब सदाशिवजी प्रसन्न होय के आशीर्वाद दियो तिहारे कुल की जय होय ॥

दोहरा छंद

साह कहत हम्मीर सों, लेहु मोहि अब संग।
धर्म रीति जानो सु तुम, सूर उदार अभंग ॥९५३॥

पद्धरी छंद

मुसकाय सीस बोल्यो सु बानि।
तुम करो साह मम बचन कानि ॥
हम तुम सु एक जानो न और।
तजि मोह द्रुह त्यागो सु तौर ॥९५४॥
लीजे सुझाँफ सागर सु जाय।
तब मिलै आप अप्पै सु आय ॥
यह कहिस सीस सुख मूंदि होत।
तब साहि ग्यान हृद भो उदोत ॥९५५॥
उठि साह सीस बंदन सु कीन।
करि प्रणाम संभु को ध्यान लीन ॥
हजरत्त आय डेरै सु तब्ब।
उज्जीर मीर बोले सु सब्ब ॥९५६॥
तुम जाहु सकल दिल्ली सथान।
अलवृतहि राज दीजे सु आन ॥
नहिं करो मोर अज्ञा सु भंग।
सेवक्क धर्म्म यह है अभंग ॥९५७॥

दोहरा छंद

आयसु पाय सु साह को, चढ़े सकल सजि सैन।
महरम खाँ उज्जीर तब, आए दिल्ली सु ऐन ॥९५८॥
दयो राज सिर छत्र धरि, अलावृत्त तिहि काल।
घर घर अति आनंद जुत, यह विधि प्रजा सुपाल ॥९५९॥
रणतभँवर के खेत को, कीनो सकल प्रमान।
प्रथम हने रणधीर ने, बहुरि सेन परिवान ॥९६०॥
दोय लक्ख रूमीं परे, दोऊ कुँवर उदार।
सेन आरबी की जिती, हनी जु असी हजार ॥९६१॥
हने मीर द्वै सत सतरि, और सिकंदर साह।
अट्ठ लक्ख पंधार के, हने मीर निज आह ॥९६२॥
सवा सहस गजराज परि, दो लष बाजि प्रसिद्ध।
द्वादस लख सेना प्रबल, हनी हमीर सुसिद्ध ॥९६३॥
मस्तक राव हमीर को, किय सुमेर हर आप।
मुक्ति द्वार सबई खुले, विद्या बर्ष सुथाप ॥९६४॥

छप्पय छंद

बिदा कीन उज्जीर कूँच दिल्ली को कीनो।
तब सुसाह तजि संग बचन हजरत को लीनो ॥
सेतबंद पर जाय पूजि रामेश्वर नीकै।
परे सिंधु में जाय करे मन भाते जी के ॥
उर्वसी साह हम्मीर नृप सेख मीर सब नाक गय।
करि लोकपाल आदर अखिल जय जय जय हम्मीर कय॥९६५॥

मिले स्वर्ग में जाय साह हम्मीर हरष्षे ।
महिमा मीर५उ बाल बिबिध मिलि सुमन बरष्षे ॥
जय जय जय हम्मीर सकल देवन मुख गाए ।
लोक अमर कीरत्ति मुक्ति परलोक सुपाए ॥
माणिक्क राव चहुवान कुल दैन खड्ग दोऊ धरत ।
कहि जोधराज यह वंश में ननकारी नाहिन करत ॥९६६॥

दोहरा छंद

सुनत राव हम्मीर जस, प्रीति सहित नृप चंद ।
मनसा वाचा कर्मना, हरे जोध के द्वंद ॥९६७॥
चंद्र नाग वसु पंच गिनि, संबत माधव मास ।
शुक्र सुत्रतिया जीव जुत, ता दिन ग्रंथ प्रकास ॥९६८॥
भूपति नीवागढ प्रगट, चंद्रभान चहुवान ।
साम दाम अरु भेद जुत, दंडहि करत खलान ॥९६९॥

इति श्रीमन्महाराजाधिराज-राजराजेंद्र-श्रीमदखिल-चाहुवान-
कुल-तिलक नीमराना-अधिपति श्रीमहाराजा चंद्र-
भानजी-देवाज्ञया कवि जोधराज विर-
चितं यवनेश अलावद्दीन प्रति
हम्मीरजुद्धं समाप्तम्